हरदेव सिंह कलाकार

"मेरा नाम हरदेव सिंह है। पंजाब के सिक्ख परिवार में मेरा जन्म हुआ। कंकर, पत्थर एकत्रित करने के लिए संसार में घूमा। मेरे कार्यों की प्रदर्शनी लगी, प्रकाशन हुआ, फिल्में बनाई गईं, प्रशंसा मिली, आलोचना की गई तथा अनदेखा भी किया गया। मैं प्रसिद्धि की तलाश में नहीं रहा। रचना के अतिरिक्त अन्य कोई सूक्ष्म एवं विशाल अनुभव नहीं। इसी कारण अभी तक पेंटिंग कर रहा हूँ, यह मुझे प्रिय है। जब मैंने गुरु जी की पंक्ति'मेरी सेजड़ीऐ आडम्बरु बनिआ।। मनि अनदु भइआ प्रभु आवत सुनिया।।' को पढ़ा तो मैं हैरान रह गया कि कैसे रेखाओं से शब्द निर्मित हो जाता है। एक व्यर्थ सा चिह्न होता है अक्षर, जिसमें से अकस्मात् कैसे ध्वनि उत्पन्न हो जाती है तथा अन्य अक्षरों के साथ जुड़कर, शब्द बन कर, अक्षर अर्थबोध कराते हैं और मनोरम वाणी का प्रकाश हो जाता है। क्या यह करामात नहीं? इस पंक्ति के दस शब्द हैं, प्रत्येक शब्द स्वयं में सम्पूर्ण है, अभिप्राय यह एक ध्वनि है, सभी मिलकर राग बन जाते हैं। इस पंक्ति के आधार' पर मैंने दस चित्र बनाए। प्रत्येक पेटिंग स्वयं में सम्पूर्ण है परन्तु एक दूसरे से सम्बद्ध है।

"मैंने बातें की, विचार-विमर्श किया, मौन रहा। अनेक मित्र बने।

"मेरा करतारी कार्य परिवर्तन का अभिलाषी है परन्तु यह किस नई दिशा की ओर जायेगा, इस तथ्य को स्पष्ट करने में मुनकिर है। यह द्वन्द्व है। मैं अबोध छोकरा हूँ जो मन का कहना मान घर से भाग जाता है। यह नहीं पता, कहाँ जा रहा हूँ, परन्तु इतना निश्चित है, जहाँ जाऊँगा वहाँ मेरी कोई प्रतीक्षा कर रहा है। इसे प्रेम कहो, मृत्यु, कला, सत्य, आत्मबोध, अनन्त से एकरूपता, बगावत, जो चाहे कहो, यह सभी उसके नाम हैं, जिसका कोई नाम नहीं। मुझे आवाज़ सुनाई देती है, मैं परिवार, परमात्मा, गाँव छोड़ पीछे देखे बगैर ही उस आवाज़ से टकराने हेतु चल पड़ता हूँ। जब मैं पूर्ण विश्वास से कहता हूँ कि मुझे मेरी मंजिल का पता नहीं है तो यह मेरी निष्कपटता का प्रमाण है। जिसे मैं नहीं जानता, क्या पुजारी, नीतिज्ञ या दार्शनिक उसके विषय में कुछ जानते हैं?"

कला-क्षेत्र के विशेषज्ञ जब बातें करते तब कभी-कभी मुझे हरदेव सिंह का नाम भी सुनने को मिलता परन्तु पहली मुलाकात 2006 की सर्दियों में हुई। आप अपनी पत्नी एवं दो पुत्रों सहित पंजाबी विश्वविद्यालय में एक वर्ष ठहरने के लिए आए थे परन्तु छह मास व्यतीत करने के पश्चात् वापिस टोरांटो चले गए जहाँ के अब वह निवासी हैं। उन दिनों में मेरी उनसे मुलाकात होती रहती। कुछ दिनों के पश्चात् मैं इस निर्णय पर पहुँच गया कि यह व्यक्ति महान् तो है ही, दिलचस्प भी

है, इस कारण नोटस लेने चाहिए। पुनः एक मास पूर्व आए। इस बार अकेले। उन्हें भी अनुभव हो गया था कि पन्नू को शायद बात समझ आने लगी है।

मुझे पेटिंग, आर्ट तथा संगीत का ज्ञान नहीं। साहित्य थोड़ा बहुत समझ लेता हूँ। सिंह बन्धु पटियाला आए तो एक श्रोता ने कहा- जी मुझे शास्त्रीय संगीत समझ में नहीं आता। भाई सुरेन्द्र सिंह ने कहा- आपको समझने की आवश्यकता ही क्यों हुई? इन पत्थरों के साथ टकरा टकरा कर हमें भी बहुत कम समझ आया है। समझना तथा समझाना उस्तादों का काम है, श्रोते आनन्द प्राप्त करें। चाकू के साथ पर्वत को काटना फ़रहाद का कार्य है, लोग कटे हुए पर्वत से बहते झरने का मधुर जल पीएं। विषय से अनभिज्ञ होते हुए भी मैंने हरदेव सिंह पर लिखने का निर्णय किया।

हम दोनों अपने-अपने भूतकाल की बातें याद करते। 15 जुलाई 1934 को ज़िला नया शहर के गाँव फराले में उसका जन्म हुआ। वास्तव में जन्म तो वैसाखी के दिन हुआ था परन्तु मास्टर जी के मन में क्या विचार आया कि उन्होंने प्रथम कक्षा के सभी विद्यार्थियों की एक ही जन्म तिथि 15 जुलाई लिख दी। पिता भाई रक्खा सिंह तथा माता करम कौर थे। दसवीं की परीक्षाएँ हो रही थीं। विद्यालय की ईमारत अत्यधिक जर्जर थी। वर्षा होने लगी। जिस मेज़ पर उत्तर पुस्तिका रखकर हरदेव लिख रहा था, वहाँ टप-टप वर्षा की बूंदे गिरने लगी। छींटे पृष्ठ की लिखित को मिटा रहे थे। कोई स्थान रिक्त नहीं था जिस पर बैठने की प्रार्थना की जा सके। अपरिचित अध्यापक परीक्षा लेने आए हुए थे, उनसे तो वैसे ही डर लगता था। हरदेव ने जो गर्म चादर स्वयं को ठण्ड से बचाने के लिए ओढ़ रखी थी, उसके एक किनारे को कुण्डली-सा बनाकर वहाँ रख दिया जहाँ से बूँदें गिर रही थीं। बूँदें उस चादर की कुण्डली में समाहित होने लगीं तथा हरदेव निश्चिन्त होकर पेपर करने लगा। मास्टर समस्त क्रियाओं को देख रहा था। उसने हरदेव से पूछा- तुम मिस्त्रियों के बेटे हो क्या? हरदेव ने कहा- नहीं जी मैं तो जाट हूँ। मास्टर ने कहा- कमाल है। मैंने पहली बार देखा कि किसी जाट लड़के में इतनी समझ है।

दसवीं में पढ़ते समय एक घटना घटी। सुलतानपुर से नंदलाल हांडा मुख्याध्यापक पढ़ाने के लिए आ गए। हरदेव सिंह ने बताया- वह लम्बा, सुन्दर तथा गोरे रंग का युवक था। हमें नहीं पता था कि हांडे कौन होते हैं। परन्तु उसका सुनहरी रंग देखकर यह अनुमान लगाया कि वह सुनार होगा। वह अंग्रेजी का अध्यापक था। उसने कक्षा में कहा कि सोमवार को ये पुस्तक और ये कॉपी लेकर आओ। अधिकतर बच्चे सोमवार को न तो वो पुस्तक लेकर आए न ही कॉपी। नये शहर से मिलनी थी। घर का कोई सदस्य जाएगा और लेकर आएगा नहीं तो दूसरा क्या उपाय है? जिनके पास

पुस्तक एवं कॉपी नहीं थी, उनको खड़ा किया गया। हाथों पर डण्डे मारे गए। मुझसे कहा कि हाथ आगे करो। मैंने हाथ आगे किया तथा उसके हाथों में से डण्डा छीन लिया, कहा- मार कर दिखाओ। हांडा पहले से ही क्रोधित था वह ओर भी बौखला गया। डण्डा वहीं छोड़ कर कहा- पिता जी को बुलाकर लाओ। पिता जी को सारी बात बताई। वह हैडमास्टर से मिले। हैडमास्टर ने कहा- आपका पुत्र पढ़ने में तो होशियार एवं परिश्रमी है, यह मैरिट में आएगा, इस कारण हम लिहाज करते हैं कि यदि यह क्षमा मांग ले तो ठीक है, नहीं तो विद्यालय से निकाल दिया जाएगा। सभी समझाने लगे। झिड़क तथा मिन्नतें इन दोनों हथियारों के चलने से वह मान गया।

कहा- प्रातःकाल की प्रार्थना के समय विद्यालय के सामने हैडमास्टर हांडा से क्षमा मांग ले तो क्षमा कर दिया जाएगा। अगले दिन हरदेव को पेश किया गया। वह हांडा के समीप गया तथा ऊँची आवाज़ में कहा- मैं क्षमा नहीं माँगूगा, क्योंकि मेरी कोई गलती नहीं है। विद्यालय स्तम्भित हो गया। एक ही विद्यार्थी मैरिट में आने योग्य उसे ही निकालना पड़ रहा है। मैंनेजमैंट ने निर्णय किया कि इस विद्यालय में तो उसे रखना नहीं। समीप के गाँव में भी इस विद्यालय की एक अन्य ब्रांच है, वहाँ स्थानान्तरित कर देते हैं। वर्ष 1950 में वहाँ से अच्छे अंक प्राप्त कर दसवीं की परीक्षा उतीर्ण की तथा मैरिट में आया।

मामा जी शिमला में सिविल सर्जन थे, मिलने आए तो कहकर गए कि दसवीं की परीक्षा के पश्चात् गर्मियों में शिमला आना, वहीं निर्णय करेंगे कि आगे क्या करना है। शिमला की पंगडंडियों पर घूमता रहता। एक दिन कोरट रोड पर घूमते हुए उसने देखा, एक गोरा लड़का लेटा हुआ है, दूसरा चिल्ला रहा है-सेव माई फ्रैंड. ..ही इज़ डाईंग। टैक्सी वाले को बुलाया। रोगी और उसके मित्र को बिठाया। अस्पताल की तरफ जाने वाले मार्ग पर टैक्सी चलाने पर प्रतिबन्ध था परन्तु हरदेव ने पुलिस वालों को कहा कि ऐमरजैंसी के कारण जाना पड़ रहा है। रोगी को दाखिल किया गया। मिहदे को धोया गया। जॉन नामक इस रोगी का एक सप्ताह तक उपचार किया गया। उसके मित्र का नाम टॉम था। धन्यवाद करके वह दोनों वापिस चले गए। यह दोनों युवक स्विजरलैंड के निवासी थे।

फाईन आर्टस कॉलेज, दिल्ली में दाखिल हुआ जहाँ से 1955 में नैशनल डिप्लोमा प्राप्त किया। फिर शांति-निकेतन में डिग्री करने के लिए चला गया। उन दिनों में शांति-निकेतन कला प्रेमियों का प्रमुख स्थान था। वहाँ महान् मूर्तिकार राम किंकर तथा हरदेव को मिला। इस नये कलाकार को शांति-निकेतन पसंद नहीं आया। हरदेव ने कहा- तुम्हारी उदासी का कारण समझ में आता है, तुम्हारे लिए यहाँ कुछ नहीं, लाहौर का स्कूल ऑफ आर्टस दिल्ली में खुल गया है, उदार हृदय कलाकार

धनराज भक्त वहाँ है, मैं तुम्हें उसके नाम का पत्र देता हूँ, वहाँ तेरा कल्याण होगा। दिल्ली आ गया। धनराज के अतिरिक्त अन्य जो कलाकार यहाँ अध्यापक थे, उनमें से महाराष्ट्र के दिनकर कौसर, बंगाल के सेलो मुकर्जी, भाबेश सानियाल तथा पंजाब के हरिकृष्ण लाल थे।

कला इतिहास हंगेरियन प्रो. चालर्स फ़ैबरी, कला में असाधारण प्रतिभा का धारणी था। जयपुर के महाराज ने दिल्ली में स्थित अपना महल पण्डित जवाहर लाल नेहरू को दे दिया ताकि इसमें नैशनल गैलरी ऑफ माडर्न आर्टस विकसित की जाये। महिन्द्र सिंह रंधावा उस समय दिल्ली के डिप्टी कमिश्नर, कला के विशेष पारखी थे। हरदेव सिंह, रंधावा साहिब से मिला तथा प्रार्थना की- नैशनल आर्ट गैलरी की स्थापना मैं करूँगा। देखा कि इस युवक को विश्व की आर्ट शैलियों का ज्ञान है, यह उत्तरदायित्व सौंप दिया। महल में निवास करने पर प्रतिबन्ध था, प्रार्थना की- यह गुसलखाना बहुत बड़ा है, पंखा भी लगा हुआ है, इसी में ठहर जाऊँगा। आज्ञा दे दी गई। गाँव से मिस्त्रियों का समूह लेकर आ गया। दीवारों के साथ-साथ एक दीवार से दूसरी तक, पाईप के ऊपर दो-दो हुक्कों से लटकाए जाने वाले लकड़ी के फ्रेम बनवाए जिन पर पेटिंग को टांगा जाना था। पेटिंग को लटकाने के लिए इस पोरटेबल ढंग का प्रयोग बाद में अनेक आर्ट गैलरियों में किया गया। वर्ष 1956 में प्रारम्भ कर वर्ष 1959 में आर्ट गैलरी पूरी कर दी। डॉ. राधा कृष्णन उपराष्ट्रपति थे। उनसे मिलकर प्रार्थना की गई कि गैलरी का उद्घाटन करने के लिए आएं। मान गए, दिन निश्चित किया गया। शानदार उद्घाटन समारोह हुआ। शिक्षा मंत्री हमायूं कबीर आए। कला आलोचक मुलक राज आनन्द आए। समस्त योजनाबन्दी महिन्द्र सिंह रंधावा की निगरानी में की गई।

इस आर्ट गैलरी के प्रबन्धक सचिव, कृष्णमूर्ति आई.सी.ऐस. थे। उन्होंने इस बात पर रोष प्रकट किया कि उनको अनदेखा करके हरदेव सिंह, डॉ. राधा कृष्णन को बुला लाया। यह प्रोटोकोल की घोर उल्लंघना थी। उत्तर देने हेतु पत्र लिखा गया। हरदेव ने उत्तर दिया- शानदार उद्घाटन हो गया है, डॉ. राधा कृष्णन प्रसन्नचित्त वापिस जा चुके हैं, प्रैस ने अत्यधिक प्रशंसा की है, स्थान-स्थान पर श्लाघा हुई है, इसके बावजूद भी आपने मेरे विरूद्ध कोई कार्यवाही करनी है तो अवश्य करो। कृष्णामूर्ति चुप हो गए। इस समय हरदेव सिंह आर्ट गैलरी का असिटेंट डायरेक्टर था।

वर्ष 1959 में रोम जाने हेतु प्रार्थना पत्र लिखा- उत्तर मिला - आपका फैलोशिप हेतु चयन हो गया है, उपस्थित हो। उस समय सामान्य व्यक्ति हवाई जहाज़ में यात्रा नहीं करते थे। मुम्बई से नेपलज़ तक समुद्री जहाज़ द्वारा सफ़र करना

था। सारा परिवार विदा करने के लिए गाँव से दिल्ली आ गया। रेलवे स्टेशन पर खड़े थे। गाड़ी आ गई। सामान रखा गया, सभी से मिला। रेलगाड़ी चल पड़ी। पाँच-सात मिन्ट के पश्चात् देखा कि माँ एक सीट पर छिपी बैठी थी, उठकर हरदेव के समीप आकर बैठ गई। हरदेव ने कहा- माँ आपने यह क्या किया? गाड़ी में क्यों आ गई? माँ ने आँसू बहाते हुए कहा- तुम्हें भेजने को मन नहीं मानता हरदेव। चलो ऐसा करते हैं, मैं मुम्बई से वापिस आ जाऊँगी। साथ वह सीट भी देख लूँगी जिस पर बैठकर तुम विदेश जाओगे। टी-टी से टिकट की बात की गई। उसने कहा कोई बात नहीं। सीट उपलब्ध है। मैं टिकट बनाकर देता हूँ। माँ-पुत्र बातें करते हुए मुम्बई पहुँच गए। आज्ञा लेकर कि माँ को जहाज़ दिखाना है दोनों जहाज़ में चले गए। बातें करते रहे। तभी सीटी की आवाज सुनाई दी। घण्टा बजाया गया। घोषणा की गई कि यात्रियों को छोड़ने आए व्यक्ति उतर जाएं। चलने का समय हो गया है। माँ उठी कहा- हरदेव, तुम्हारे यह केश बहुत सुन्दर हैं। दूध दही से धो-धो कर संवारती थी। इनका अपमान मत करना। तुम परदेश जा रहे हो। पता नहीं वहाँ का जीवन कैसा है। विवशता वश कभी केश कटवाने पड़ें तो मुझे अपना चेहरा फिर कभी मत दिखाना।

यह कहकर वह तेज़ चलती हुई जहाज़ से उतर कर चली गई। हरदेव ने आवाज़ दी। यही कहना था कि माँ मैं ऐसे ही करूँगा, परन्तु वह रूकी नहीं, न पीछे मुड़ कर देखा। इस अन्तिम कथन के पश्चात् उसने न तो कुछ सुनना था न सुनाना था। हरदेव सिंह ने मुझे बताया- जब कभी कोई मुझसे पूछता- तुमने केश क्यों नहीं कटवाये? वहाँ जाकर तो सभी कटवा देते हैं तो मैं खामोश ही रहता। कौन, बहस करे। मैं कलाकार हूँ। ऐसी सबल मूर्ति अन्य कोई नहीं, मूर्ति जो हुक्म देकर चली जाये। मूर्ति जो निज हुक्म के पश्चात् किसी टिप्पणी की आवश्यकता न समझे तथा चली जाये। मेरी पोलिश पत्नी मारिया, माँ की बात पर गर्व करती है। ऐशियन माँ अनन्त प्रेम करती है, उसका त्याग भी अनन्त है, उसका आदर्श माता गुजरी है।

वर्ष 1962 में वह रोम से वापिस देश आ गया। मुलक राज आनन्द तथा महिन्द्र सिंह रंधावा ने मुख्य मन्त्री स. प्रताप सिंह कैरो को इस बात के लिए राजी कर लिया कि चण्डीगढ़ में आर्ट गैलरी का निर्माण किया जाए, कॉलेज ऑफ आर्ट की स्थापना की जाये। हरदेव को इस कॉलेज में फाऊंडर डायैरक्टर लगा दिया गया। कार्य अभी प्रारम्भ ही हुआ था कि भारत-चीन युद्ध शुरू हो गया। हरदेव ने शैड का निर्माण कर आर्ट गैलरी की योजनाबन्दी शुरू कर दी। सर्वप्रथम हाथों से बनी उपयोगी वस्तुओं की सूची तैयार की गई। बैंत का प्रयोग कर कुर्सियाँ तथा मेज़ तैयार करवाये गए। यह बताने हेतु कि उपयोगी वस्तुओं को कलाकार किस प्रकार निष्प्राण से

सजीव बना देते हैं, दो-दो कुर्सियाँ, एक-एक मेज़ प्रत्येक मन्त्री के घर भेजकर वस्तु का उचित मूल्य लिया गया, बताया गया कि रोजगार तथा सौन्दर्य, दोनों का कल्याण होगा।

हरदेव ने देखा कि कांगड़ा की पेटिंग अद्‌भुत है, पहाड़ी स्त्रियाँ जो आभूषण पहनती है, उन पर अनोखी कला है। वह इन पुराने भारी आभूषणों को ढलवा कर नये आभूषण बनवा रही हैं जो नये होने के कारण सुन्दर प्रतीत होते हैं तथा हल्के होने के कारण अनेक लड़कियाँ इनका प्रयोग करती हैं। उसने सोचा- यह प्राचीन कला नष्ट हो जायेगी। रंधावा साहिब से बात की। रंधावा ने कहा- पत्र लिखकर उस पर मेरी सिफारिश करवाओ, सुबह ही कैरों साहिब से जाकर मिलो। आठ बजे के आस-पास वह ब्रेकफास्ट करते हैं। सम्भव है तुम्हें भी कहें कि परौंठा खा लो। तुम भी ब्रेकफास्ट कर लेना। फिर तुमसे काम के विषय में पूछेंगे। अपना मनोरथ बताकर पत्र उनके सामने रख देना। यही हुआ। परौंठे खाने, लस्सी पीने के पश्चात् अपने काम के विषय में बताते हुए कहा- सुनारों को यदि सरकारी चांदी देकर यह आभूषण खरीद लिए जाएं तो कला कृतियों का विनाश रूक सकता है। कैरों ने पूछा- क्या चाहिए? हरदेव ने कहा- जी चालीस किलो चांदी और एक जीप। पत्र पर स्वीकृत लिखकर हस्ताक्षर कर दिए। चांदी की टकसाल अमृतसर में होती थी। हरदेव वहाँ गया और चालीस किलो चांदी की ईंटों की मांग की। टकसाल अफ़सर कहने लगा- भाई, अभी बहुत कुछ करना शेष है इस पत्र के साथ। मुझ पत्र दे दो। संस्था के पास जायेगा। फिर अनेक स्थानों से होता हुआ मेरे पास आएगा। एक मास के पश्चात् पत्र वापिस आया। तब तक जीप का प्रबन्ध भी हो चुका था। एक मास के पश्चात् चालीस किलो चांदी की ईंटें जीप में डालकर कांगड़ा की तरफ चल पड़ा।

देखा कि चम्बा में, राजा के महल में एक रागमाला है जिसमें चौरासी रागों का ततकरा है। इस रागमाला पर आधारित मिनीएचर्ज़ भी रखी हुई हैं। रागमाला तथा मिनीएचर्ज़ को खरीद लाया। वह इस समय नैशनल गैलरी ऑफ माडर्न आर्ट, दिल्ली में सुरक्षित हैं। इस संग्रह के विषय पर पुस्तक लिखी, इस कला पर टिप्पणियाँ दी। पेटिंगज़ को छापना था। रंधावा साहिब ने बताया- रंगीन पेटिंग, कागज़ पर केवल सरस्वती प्रैस ही प्रकाशित करती है जो कलकत्ता में है। हरदेव से पुस्तक लेकर पुनः निरीक्षण किया। भूमिका लिखते समय हरदेव का वर्णन उसमें कर दिया। पुस्तक पर लेखक का नाम महिन्द्र सिंह रंधावा था तथा सहायक हरदेव सिंह था। हरदेव सिंह ने कहा- रंधावा साहिब, पुस्तक की रचना तो मैंने की है, संग्रह भी मैंने ही किया। नाम आपका है। वह हँसने लगे, कहा- मेरे नाम के बिना तुम्हारी पुस्तक प्रकाशित नहीं होगी। तुम प्रयास करके देख लो। मेरे नाम के साथ तुम्हारा नाम देख भविष्य

में प्रकाशक तुम्हारी पुस्तकें प्रकाशित किया करेंगे। अभी वह समय नहीं आया। अभी ऐसे ही होगा।

एक बार फिर वह रोम चला गया। सरदार गोपाल सिंह, सोफ़िया में भारत के सफ़ीर थे। उनसे मिला। कार खरीदी। निर्णय किया कि कार में बैठकर मैदानी रास्ते से हिन्दुस्तान घर जाऊँगा। रोम से बुलगारिया, टर्की, आस्ट्रिया, स्विज़रलैंड, सोफ़िया गया। फिर अरब का मक्का मदीना देखते हुए ईरान के शहर इसफाहान, वहाँ से तहरान, फिर काबुल गया। काबुल में बाबर का छोटा सा टूटा फूटा हुआ मकबरा देखा, फिर पाकिस्तान में प्रवेश किया। पाकिस्तानी सुरक्षा अधिकारियों ने कहा- कार की तलाशी लेनी है। तलाशी लेने लगे तो कार की डिक्की में रखी थैलियों में घुघू, घोड़े, मिट्टी के छुनछुने, चक्कियाँ, गडीहरे सैंकड़ों की संख्या में रखे थे। हँसने लगे। एक दूसरे को बुलाने लगे... अरे देखो, न घड़ियाँ, न टेपरिकार्डर, न छतरियाँ, न रेन-कोट, न ट्रांज़िस्टर, न सोने के बिस्कुट। इस पागल ने मिट्टी से अपनी कार की डिक्की को भर रखा है। हँसते-हँसते उन्होंने वाहगा बार्डर पार करवा दिया।

वाहगा पार कर अटारी से सुल्तानपुर लोधी होते हुए अपने गाँव पहुँचना था। सुल्तानपुर जाकर ध्यान में आया- मास्टर हांडा सुल्तानपुर के निवासी हैं। देखे अब हैं या नहीं। अनेक लोगों से पूछा, एक ने बताया, उस किताबों कॉपियों की दुकान से पूछो। दुकानदार ने घर का रास्ता बता दिया, कहा- लोहे का काला बड़ा गेट है। गेट पर पहुँच कर दरवाज़ा खटखटाया। लम्बे कद तथा सुनहरी रंग वाला मास्टर वृद्ध हो चुका था। हाथ में छड़ी पकड़े धीरे-धीरे दरवाज़ा खोलने आया। हरदेव ने अपना नाम नहीं बताया, कुछ देर उसे देखने के पश्चात् मास्टर जी ने कहा- हरदेव? हरदेव ने चरण स्पर्श किए। गीली आँखों से मास्टर हांडा ने हरदेव को गले लगाते हुए कहा- मैंने अनेकों से पूछा तुम कहाँ हो। पता चला तुम परदेशी हो गए। तुम्हें मिलकर तुमसे क्षमा मांगना चाहता था मैं। अच्छा हुआ तुम स्वयं ही आ गए। मैं कहाँ ढूंढ सकता था तुम्हें? हरदेव ने कहा- जी क्षमायाचना तो मैं करने आया हूँ आपसे। इसी कारण ईश्वर ने कहा समुद्र द्वारा नहीं इस बार पृथ्वी पर सफ़र करते हुए जाना। दुनिया देखता हुआ सुलतानपुर पहुँच गया। क्षमा मांगने आया हूँ। मैंने गलती की थी परन्तु क्षमा याचना से इन्कार कर दिया था। मास्टर जी ने बार-बार कहा- आज यही ठहर जाओ। खाने-पीने के पश्चात् हरदेव ने घर की तरफ प्रस्थान किया। घर पहुँचने के तीन दिन पश्चात् समाचार मिला कि मास्टर हांडा का निधन हो गया है।

महिन्द्र सिंह रंधावा पंजाब खेतीबाड़ी विश्वविद्यालय की स्थापना करने हेतु वाईस चांसलर की पदवी धारण कर लुधियाना आ गए। हरदेव सिंह को पंजाब के रईस की हवेली बनाने के लिए कहा गया। इस विश्वविद्यालय का वर्तमान अजायब

घर हरदेव सिंह के परिश्रम का परिणाम है। छोटी ईंटें तब भी मिल जाती थीं। चूल्हे-चौंके बनवाये गये। परांदे, इंनू, चौकियाँ, मूहड़े, तलवारें, गागरें, चरखे, अटेरन, अधिक क्या कहना समस्त ग्रामीण सामान चुन लिया गया। हवेली की दीवारों पर चित्र देव ने बनाये, उद्घाटन खुशवंत सिंह ने किया। आज तक इस काम की प्रशंसा की जाती है।

1978 में जब डॉ. अमरीक सिंह ने पंजाबी विश्वविद्यालय के वाईस चांसलर के पद को ग्रहण किया तब हरदेव सिंह ने कहा- समस्त विश्व से आधुनिक शिल्पकारों को यहाँ बुलाओ। सामान उपलब्ध करवाओ। कहो, जितने समय तक रहना है, एक वर्ष, छह मास रहो। जो मन में आता है वही बनाओ। डॉ. अमरीक सिंह ने हरदेव सिंह को कहा- जिन कलाकारों को आप बुलाना चाहते हो, बुला लो। मैं तो निमंत्रण पत्रों पर केवल हस्ताक्षर करने वाला हूँ। उस समय यहाँ पर चैक, जापान, वीयतनाम, इंडोनेशिया, पोलैंड, ताशकंद, फ्रांस आदि देशों से कलाकार पहुँचे। यह हरदेव सिंह का परामर्श था कि कलाकारों को बुलाकर सामान देकर पेटिंग बनवाना अत्यधिक सरल एवं सस्ता कार्य है, कलाकार भी खुश। इनकी पेटिंग खरीदने का काम अत्यधिक बहुमूल्य है, बहुत की मँहगा।

चण्डीगढ़ की आर्ट गैलरी का निर्माण हो रहा था तब हरदेव ने दुनिया भर के देशों को पत्र लिखे कि कारबूज़ीए द्वारा भारत के नवीन विकसित शहर चण्डीगढ़ में एक विशाल आर्ट गैलरी बन रही है। हमने प्रत्येक देश की लोक-कला-गैलरी बनाने का निर्णय किया है। कृपया अपनी लोककला (Folk Art) भेजो। समुद्री जहाज़ों द्वारा फ़ोक आर्ट आना प्रारम्भ हो गया। सर्वप्रथम सबसे अधिक मात्रा में लोककला को पौलेंड ने भेजा। टैगोर थियेटर में आरज़ी आर्ट गैलरी तैयार की गई। मुलकराज आनन्द को साथ लेकर कैरों साहिब के पास गया तथा कहा- पौलेंड की आर्ट गैलरी का उद्घाटन करने के लिए पधारें। उन दिनों में समाचार पत्र द्वारा पता चला कि पौलेंड का एक वज़ीर भारत भ्रमण के लिए आया हुआ है। दिल्ली ऐमबैसी में फोन किया। वज़ीर का पता-ठिकाना मिल गया। उसे मना लिया गया कि पोलिश गैलरी का उद्घाटन हो रहा है जिसमें आप मुख्य मेहमान के रूप में पधारें। उसे यह भी बताया गया कि चण्डीगढ़ निर्माण का उत्तरदायित्व भारत सरकार ने पहले पोलिश ईमारत निर्माणकर्त्ता को दिया था जो दुर्घटना का शिकार हो गया था। उस की मृत्यु के पश्चात् ले कारबूज़ीए को यह काम सौंपा गया। मन्त्री ने हाँ कर दी। उद्घाटन समारोह के अवसर पर हरदेव ने बताया कि पंजाब तथा पौलेंड की लोककला में अत्यधिक समानता है। वैसे तो समस्त देशों की लोककला एक दूसरे से समानता रखती है।

पोलिश मन्त्री हरदेव की कला परख तथा कैरों द्वारा दिए सम्मान से अत्यधिक प्रभावित हुआ, क्योंकि यह प्रोटोकोल से ऊपर की बात थी कि मुख्य मन्त्री किसी मन्त्री का स्वागत करे। चण्डीगढ़ से उसने शिमला जाना था तथा तीसरे दिन वापिस आना था। हरदेव ने कैरों से कहा- इस वज़ीर को वापिसी के समय चाय की दावत पिंजोर में दे दें? कैरों साहिब मान गए। दिन रात पिंजोर की सफाई का काम शुरू हो गया। सायबानो के शानदार श्वेत पंख फड़फड़ाने लगे। उत्साहपूर्वक मन्त्री का स्वागत किया गया। बहुत समय तक हरदेव पोलिश आर्ट तथा मोटिफ के विषय में बताता रहा। वज़ीर ने हरदेव से कहा- आप पौलेंड कब आओगे? हरदेव ने कहा- आमंत्रित करोगे तो अवश्य आयेंगे। तीन मास के पश्चात् पौलेंड की सरकार की ओर से फैलोशिप प्राप्त हुई, निमंत्रण पत्र मिला। यह पोलिश म्यूज़ियम की निगरानी तथा प्रदर्शनी का प्रबन्ध करने की जिम्मेवारी थी।

उस समय करनाल के बस स्टैंड की मिऊर्लज़ का काम अभी अपूर्ण ही था। अनेक कलाकारों ने अपने-अपने डिज़ाईन भेजे। परन्तु हरदेव द्वारा भेजे गए डिज़ाईन ही स्वीकार हुए। उसे सत्तर हज़ार रूपया दिया गया। निर्णय किया कि इस कार्य की समाप्ति के पश्चात् ही पौलेंड जायेंगे। कांगड़ा से काले रंग की स्लेटें मंगवाई गईं। उस समय संत सिंह सेखों की आर्थिक स्थिति कुछ ठीक नहीं थी। उसे सहायता हेतु अपने साथ मिला लिया तथा 25 प्रतिशत भाग देने का निर्णय किया।

सरदार प्रताप सिंह कैरों की हत्या कर दी गई। हरदेव के दफ्तर में स्टाफ, एक हैड-क्लर्क, एक क्लर्क तथा एक सेवादार था। यह समझते हुए कि यह कैरों का आदमी है, एक-एक करके सभी कर्मचारी वापिस बुला लिए गए। वह अपने चिट्ठी-पत्र तथा शोध-निबन्ध स्वयं ही टाईप करता। जब उसने देखा कि प्रतिदिन माहौल ओर भी घुटनयुक्त एवं खराब होता जा रहा है, अपना समान उठाया, दिल्ली पहुँच गया, दिल्ली से पौलेंड जाने की तैयारी की। पहले एमसट्रडम में अपने मित्र के घर कुछ दिन ठहरा, वहीं से वारसा गया। पौलेंड में गैलरियाँ देखने, कलाकारों को मिलना शुरू किया। पौलेंड का भोजन स्वाद नहीं लगता था। एक दिन एक सरदार को जाते देख आवाज़ दी। वह रूका, पूछा क्या बात है? हरदेव ने कहा- रोटी खिला दो अपने घर। वह उसे घर ले गया। हरदेव ने उसकी पत्नी से कहा- रसोई में रोटी सब्जी कैसे बनती है मैंने यह देखना है, आज्ञा मिलेगी? वहाँ उसने भोजन बनाने की विधि को देखा तथा सीखा। यह सरदार भारतीय दूतघर में कर्मचारी था।

एक दिन शाम को थीएटर में नाटक देखने चला गया। प्रधान मन्त्री भी दर्शको में विराजमान था। एक मध्मय कद का व्यक्ति हॉल में आया, उसके स्वागत

में सभी खड़े हो गए। प्रधान मन्त्री भी। साथ बैठे दर्शकों ने बताया मध्यम कद का यह व्यक्ति इस ड्रामें का निर्देशक है।

यहाँ काम करते हुए, ब्रुश चलाते हुए जान-पहचान बढ़ने लगी। फ्रांस तथा सैकंडेनेवीअन देशों से निमंत्रण आने लगे। पौलेंड में मारिया के साथ परिचय हुआ जो हिस्टरी ऑफ आर्ट की शिक्षिका थी। उसके साथा विवाह के विषय में बात की तो उसने कहा पिता जी से पूछ लो। उसके पिता जी के पास जा कर बात की तो उन्होंने मुस्कुराते हुए कहा सोच लो। कहा- सोच लिया। पिता जी ने कहा- एक दिन ओर सोचने में क्या दिक्कत है? यह बहुत ही खतरनाक लड़की है। अगले दिन फिर गया, आज्ञा मिल गई। विवाह के पश्चात् नाम रखा मारिया बारतको सिंह। दो बेटे हुए। बड़े बेटे का नाम वैसलाव मरदाना सिंह है तथा छोटे बेटे का नाम चैसलाव बाला सिंह है। वैसलाव से अभिप्राय गुण गायन कर्त्ता, चैसलाव पौलेंड का नोबेल लारियट था। चैसलाव बाला सिंह ने पंजाबी विश्वविद्यालय के कला भवन में पिछली बार डेढ घंटे का भाषण दिया था, श्रोताओं में मैं भी था। उसने प्यानो तथा वायलन का वादन करते हुए पुरातन पश्चिमी सुरों की हमें जानकारी दी थी।

मरदाना सिंह जब छोटा था तो वह दही जमाता तो दही जम जाती थी। अन्य कोई दही जमा देता तो नहीं जमती थी। कारण पूछने पर पता चला कि वह दूध का कटोरा फ्रिज के पिछली तरफ लगे कंपरैस्सर के साथ रख देता था उसमें अमोनिया गैस भरी होती है। फ्रिज़ को ठण्डा रखने के लिए अमोनिया चक्कर काटता है तथा यह कंपरैस्सर गर्म होता रहता है जिसके ताप के कारण दूध दही में बदल जाता था।

1968 में ऑर्ट गैलरी ऑफ ओंटारियो कैनेडा से छह मास के लिए विज़िटिंग फैक्लटी के रूप में निमंत्रण मिला। मार्ग व्यय तथा टिकट आदि सभी कुछ भेज दिया गया। बिना वीज़ा के पहुँच गया, उन दिनों में यूरोप तथा कैनेडा आने जाने पर पाबन्दी नहीं थी। काम देखकर अग्रिम पाँच वर्षो के लिए कॉनट्रैक्ट कर लिया। विंडसर की आर्ट गैलरी में रिजनल डायरैक्टर ऑफ़ आर्ट नियुक्त हुआ। वहाँ जाकर सबसे पहले पौलेंड की आर्ट गैलरी का निर्माण किया, फिर एक-एक करके अनेक देशों की गैलरियाँ दिखाई देने लगीं। विश्व के कलाकार भिन्न-भिन्न देशों में अपनी आर्ट गैलरियाँ दिखाते हुए घूम रहे थे। पंजाब के चार विश्वविद्यालय पारस्परिक तालमेल करके अपनी गैलरियों को रोटेट नहीं करते।

कैनेडा में रहते हुए आधे घंटे की एक दस्तावेज़ी फिल्म बनाई, ***द सिक्खस।*** इसे स्थान-स्थान पर प्रदर्शित किया गया, सभी ने पसंद की। इसमें सर्वप्रथम गुरू साहिबानो की वाणी का संदेश है, फिर महाराजा रणजीत सिंह के समय तक के

कारनामें दिखाये गए हैं। दिखाया गया कि संकट आने पर सिक्ख क्या करते हैं। भाई कन्हैया जी पर चित्र दिखाये गए। दिखाया गया कि महान् व्यक्ति की मृत्यु होने पर देश अपने झण्डों को झुका लेते हैं, बताया कि निशान साहिब नहीं झुकता, गुरू साहिबान ने शोक करने पर स्थायी निषेध लगाया था। भारत में आकर नैशनल फिल्म बोर्ड से कहा कि महत्त्वपूर्ण शख्सीयतों को यह फिल्म दिखाओं। दर्शकों में ज्ञानी जैल सिंह भी थे। इस फिल्म के प्रारम्भ में लिखित तथा मौखिक जो शब्द अंकित किए गए, वह हैं - Sikhs are a religious community and a political mation. They are an international minority community. ज्ञानी जैल सिंह ने प्रसन्न होते हुए कहा- बहुत अच्छी डाकुमैंटरी। शाबाश। इसमें से प्रारम्भिक शब्द 'पोलिटीकल नेशन' हटा दो। मैं नैशनल फिल्म बोर्ड को कहूँगा, खरीद लें। इनके पास बहुत पैसे हैं। हरदेव ने कहा- ज्ञानी जी, आपके लिए या नैशनल बोर्ड के लिए मैंने यह दस्तावेज़ी फिल्म नहीं बनाई। मैं प्रोफैशनल फोटोग्राफर तथा आवाज़ें अधिक मूल्य पर खरीदीं, तीन दिन के भीतर ही बी.बी.सी, कैनेडा तथा अमेरीकी टी.वी चैनलों ने इसे खरीद लिया, इस पर खर्च किए गए रूपयों से तीन गुणा अधिक पैसे कमा लिए। अब कोई आवश्यकता नहीं। मैं जानता हूँ मैं धनी व्यक्ति नहीं हूँ, परन्तु निर्धन भी नहीं हूँ।

दिल्ली, मेहरबान सिंह धूपीए के घर भाई वीर सिंह ठहरे हुए थे। वहाँ शोभा सिह अपनी प्रसिद्ध पेटिंग, गुरू नानक देव, लेकर आ गए। हरदेव सिंह वहीं बैठे थे। प्रैस का भी प्रबन्ध शोभा सिंह ने कर रखा था। वह चाहते थे कि इस पेटिंग का उद्घाटन भाई वीर सिंह करें तथा इसके सम्बन्ध में कुछ शब्द भी कहें। भाई वीर सिंह का संसार में बहुत नाम एवं यश है, इसलिए यह पेटिंग भी दुनिया भर में प्रसिद्ध तथा स्वीकृत हो जायेगी। भाई वीर सिंह के सामने पेटिंग पर से रेशमी पर्दा उठाया गया। पेटिंग देखने के पश्चात् भाई वीर सिंह बोले- ऐसे नहीं थे मेरे गुरू महाराज, तथा मुख दूसरी ओर कर लिया। शोभा सिंह ने पेटिंग को लपेटा तथा गुस्से में बाहर निकल गया। एक कलाकार उदास जा रहा है, हरदेव सिंह भी बाहर निकल गए। हवेली से बाहर निकल शोभा सिंह गुस्से से कहने लगे- इस व्यक्ति में बिल्कुल भी बुद्धि नहीं। आर्ट बहुत बड़ी वस्तु है, इस गंवार को क्या पता यह मैंने क्या बनाया है। हरदेव सिंह ने कहा- मुझे तो पता है आर्ट क्या होता है। मैं जानता हूँ तुमने क्या बनाया है। तुमने एक चेहरा बनाकर उसपर नर्गिस की आँखें चिपका दीं, ओंठ मधुबाला के बनाकर दाढ़ी बना दी। यह है तुम्हारी पेटिंग गुरू नानक देव।

यह बात मैंने प्रो. भूपेन्द्र सिंह को सुनाई तो वह हँसने लगे, तथा कहा- डॉ. मोहन सिंह दीवाना कहा करते थे- यह है एक ही पेटिंग जिसे मैं बिल्कुल देख

नहीं सकता। पैगम्बर का अक्स कैसा होता है, इसका शोभा सिंह को क्या बोध होना था, उसे तो यह भी नहीं पता कि एक कश्त्री के नैन-नक्श, चेहरा आदि कैसे होते हैं।

मैंने पूछा- परन्तु लोगों ने तो इसे अधिक पसंद किया? उन्होंने कहा- लोगों में दरमियानी कला प्रसिद्ध होगी। देखो जो व्यक्ति समस्त आयु ड्राईंग करता रहे, उसके द्वारा खींची रेखाओं में समतोल तो आ ही जाएगा। शोभा सिंह एक कुशल ड्राईंग मास्टर है, उसमें कला जैसी कोई वस्तु नहीं। कृपाल सिंह भी इसी श्रेणी में आता है। गुरू गोबिन्द सिंह जी को जो शाही लिबास पहनाते हैं, यह वही लिबास है जो औरंगेज़ेब पहनता था। आप माईकल एंजलों के चित्र देखो। उसने पहले प्राचीन सभ्यता, इतिहास, यहूदी ईसाई पैगम्बरों को जाना, समझा। तत्पश्चात् ब्रुश चलाया। गुरू-काल तक लोग बिना सिलाई किए वस्त्र पहनते थे। सिलाई करना तो मुगलों ने सिखाया था। सबसे पहले जो सिला हुआ वस्त्र पहनना अनिवार्य था वह कछहरा था। सिक्खों में आर्ट का विकास हुआ ही नहीं था। महाराज रणजीत सिंह के समय से लेकर अब तक सिक्ख, पंजाबी चित्रकार, मुगल आर्ट तथा कांगड़ा मिनीएचर की शैली का प्रयोग करते हैं। सभी कुछ वही, केवल चेहरे सिक्ख नायकों के बना दिए। कार-सेवा वालों ने पुराने कलाकारों की कमाई पर स्याही पोत दी। सिक्ख सजग होते तो हाहाकार न मच जाता? इटली में संत फ्रांसिस असिसी का गिरजा देखो। धरती पर वास्तव में वही घर है जिसमें संत रहता था। उसे उसी प्रकार सुरक्षित कर उसके ऊपर गिरजा बना दिया। रोम के प्रत्येक गली मुहल्लों में आपको प्राचीन ऐतिहासिक वस्तुएँ सुरक्षित दिखाई देंगी। पटियाला के मोती महल में लघुचित्र संदूकों में रखे हुए नष्ट हो रहे है, किसी को कोई परवाह नहीं। अन्य प्रदेशों में इस प्रकार की अपराधि ाक अवहेलना नहीं है।

मेरे पास एक पंजाबी मित्र आया। मैंने कहा- न्यागरा झरना देखने चलें। उसने कहा- वहाँ क्या है? मैंने कहा- बहुत अधिक ऊँचाई से पानी नीचे गिरता है। वह हँसने लगा, कहा- पानी तो सदैव ही नीचे की ओर गिरता है। इसमें देखने वाली क्या बात है? यदि कहीं पानी ऊपर चढ़ रहा हो, वह दिखाओ तो मानूँगा। नीचे से ऊपर की ओर जाता हुआ पानी नहीं दिखा सकता इसमें दुःखी होने वाली कोई बात नहीं, विहस्की ले आओ, पानी नीचे से ऊपर की ओर चढ़ता दिखाई देगा।

"एक युवक मेरे पास आया, कहने लगा- मेरे पिता जी का चित्र बना दो। मैंने कहा- कहाँ हैं तुम्हारे पिता जी? वह बोला- उनका तो बहुत समय पहले देहांत हो चुका है। मैंने पूछा- मृत व्यक्ति का चित्र कैसे बनाऊँ? वह हँसकर कहने लगा- तुम्हें इतना भी नहीं पता? मेरे जैसे थे। तुम ऐसा करो मेरा चित्र बना दो, मैं अभी

जवान हूँ, दाढ़ी काली मत करना, सफेद कर देना। केवल इतनी सी बात है तुम समझे कोई पर्वत पार करना है।

"मैंने कभी कोई दांत नहीं निकलवाया। मज़बूरी में अक्ल दाढ़ निकलवानी पड़ी जो मेरी पत्नी ने अपने निजी अजायब घर में रखी हुई है।

"विस्की का सेवन इंगलैंड में किया जाता है, यूरोप तथा अन्य देशों के लोग वोदका, जिन, बकार्डी का प्रयोग करते हैं। पानी या सोडे का प्रयोग साथ में नहीं किया जाता। पानी या सोडा अलग से रखा जाता है। जो मूल वोदका है वह आलूओं से बनाई जाती थी, पौलेंड में अब भी आलूओं से बनती है। वर्ष 1987 में बड़े पुत्र के जन्म अवसर पर भारतीय हाई कमीशनर ने ब्लैक लेबल जॉनीवाकर की पेटी भेजी।

"कैनेडा में एक साधु आया जो कार-सेवा हेतु प्रसिद्ध है। मैंने उससे मिलकर कहा- आपको प्राचीन ऐतिहासिक इमारतें तोड़नी नहीं चाहिए। उसने कहा- कच्चे घरों को अगर पक्का बनवा रहा हूँ तो इसमें क्या बुराई है? बहुत समझाया कि इन्हें मत तोड़ो, यदि बनाना ही है तो एक तरफ नया गुरूद्वारा बना लो। उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। मुझसे पूछा- क्या करते हो? मैंने बताया- कलाकार हूँ, चित्रकारी करता हूँ। संत ने कहा- पंथ के लिए भी कुछ करो। उसके विचारानुसार मेरा काम कोई काम नहीं है।"

26-28 फरवरी 2010 को दीपक मनमोहन तथा अमरजीत गरेवाल ने मेरे विश्वविद्यालय में विश्व पंजाबी सैंटर द्वारा पंजाबी कॉनफ्रेंस करवाई जिसमें दो दर्जन देशों से लेखक आए। अच्छे विचार सुनने को मिले। अंतिम सत्र में चार ऐसे व्यक्तियों का चयन हुआ जिन्होंने अपने प्रभाव तथा सुझाव व्यक्त करने थे। उनमें एक मैं भी था। मैंने देखा कि लेखक तथा श्रोतागण चिंतित थे कि पंजाबी का भविष्य संकट में है। अपने विचारों एवं प्रभावों के साथ मैंने अंत में हरदेव सिंह के यह वाक्य कहे- "जिस चारपाई से मैं सोकर उठा, उसका नमूना पूर्व में बना, गद्दे का जो कपड़ा था उसे मध्य ऐशिया में काता एवं बुना गया था। जो स्लीपर पहनकर गुसलखाने में गया, वह अमेरीकन रैड इंडियनज़ ने बनाये, मेरे गुसलखाने का वर्तमान ढांचा तथा उपयोगी सामान पश्चिम ने बनाया।

"जिस कुर्सी पर मैं बैठा, उसका निर्माण यूरोप ने किया। मैंने जो गाऊन पहना, सबसे पहले ऐशिया के खानाबदोशों ने चमड़े से बनाया था तथा रंग करने का काम मिस्र को दिया गया था। टाई करोशिया ने बनाई दी तथा जिस खिड़की में से मैंने बाहर देखा, उसका शीशा मिस्र ने बनाया था। छतरी दक्षिण-पूर्वी एशिया ने बनाई थी। जो मेवे मैंने खाये, वह अफ्रीका, ईरान तथा अफगानिस्तान में से लाये गए थे।

"समाचार पत्र खरीदने के लिए जेब में से जो सिक्का ढूंढ रहा था, उसकी खोज लिडिया ने की थी। ब्रेकफास्ट के लिए जो पलेट उठाई- उसका निर्माण चीन ने किया, चाकू की धार दक्षिण भारत ने तैयार की, कांटा ईटालियन है तथा चम्मच रोम ने बनाया था। पशुओं को पालतू बनाने तथा दूध निकालने का ढंग प्राचीन हिन्दुस्तानियों ने सिखाया। पक्षियों को पालतू रख उनसे अण्डे प्राप्त करने की परम्परा पूर्वी ऐशिया में प्रारम्भ हुई।

"उलटे अक्षर पत्थर पर सामिओ ने बनाये, जिस कागज़ पर छापे गए, वह चीनियों ने बनाया था तथा इसको छापने की मशीन का निर्माण जर्मन ने किया था। खाने-पीने के पश्चात् जैसे मैं ईश्वर का धन्यवाद करता हूँ, भिन्न- भिन्न भाषाओं में सभी देशों में इसी प्रकार शुक्रिया अदा किया जाता है। फिर भी मैं दावा करता हूँ कि मैं पंजाबी हूँ तथा पंजाबी रहूँगा।"

मैंने पूछा- आपकी कला किससे प्रभावित है? उसने कहा- मुझे इसके विषय में कुछ पता नहीं परन्तु कला-आलोचकों ने मुझसे कहा कि तुम्हारी कला शगाल से प्रभावित है। रूसी कलाकार शगाल (Chagal) यहूदी था और पैरिस का निवासी था। मैंने उससे पूछा- लोग कहते हैं कि मेरी कला आपसे प्रभावित है, इस बात में कितनी सच्चाई है? शगाल ने कहा- मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मैं रशियन आईकन से प्रभावित हूँ, उसी प्रकार तुम भी ऐशियन मिनीऐचर से प्रभावित हो। आईकन तथा मिनीएचर में एक बुनियादी समानता है। शगाल ने इज़रायल की इमारतों पर जो चित्र बनाये, उन्हें ड्रीमज़ स्टाइल कहते हैं। नीचे विशाल लैंडस्केप है, ऊपर आकाश में पक्षी उड़ रहे हें। मेरी साढे तीन सौ पेटिंगज़ में विश्व के समस्त राष्ट्रों की झलक दिखाई देती है। प्रत्येक राष्ट्र के कुछ चिह्न होते हैं। साऊथ अफ्रीका में अफवाह फैल गई थी कि चर्च के पीछे मैडोना आती है, Lady With a Child. वास्तव में इमारतों की परछाई के संयोग से बनी यह एक विशेष परछाई थी जो ऐसी प्रतीत होती थी जैसे किसी औरत ने बच्चे को उठा रखा हो।

"बेशक सिंघ सभा के मोर्चे होते, या 1984 का दरबार साहिब पर हमला, सिक्ख जब भी संकट में होते हैं, तब उन्हें बाज़ दिखाई देता है। मेरे चित्रों में बाज़ का अत्यधिक दखल है, अनेक बार बाज़ घायल है। ऊपर विशाल आकाश- नीचे विशाल मैदान, इनके बीच में उड़ता घायल बाज़। इसी प्रकार ताज, निशान साहिब उठाये उजड़े हुए जा रहे काफिले, मेरी कैनवस पर सहज ही उभर आते हैं।

"मैंने दस चित्र बनाये जो 'मेरी सेजड़ीऐ आडम्बर बनिआ' शब्द की पंक्तियों पर आधारित हैं। इनका एक-एक सैट विश्व के प्रत्येक विशाल अजायब घर में रखा हुआ है। दूसरा सैट मैंने बारहमासा' पर तैयार किया क्योंकि प्रत्येक मास

का पृथक् प्रभाव है। मैंने रागमाला पर भी सैट बना लिया है। वह आपके विश्वविद्यालय में डॉ. गुरनाम सिंह को गुरमति संगीत विभाग के लिए देकर जाऊँगा। मुझे गुरभगत सिंह ने कहा कि दशम ग्रन्थ में वर्णित शस्त्र नाममाला पर चित्र तैयार करूँ। मैंने इस वाणी को पढ़ा। इस में वर्णित शस्त्रों के नाम पढ़कर मुझसे सुन्दर आर्ट आभा का निर्माण नहीं हुआ। इसलिए यह काम सम्भव न हो सका। सिक्ख राज्य के समय गुरू साहिबान की जो पेटिंगज़ बनी, वह पूर्व अवतारों के रूप में थोड़े से परिवर्तन का ही परिणाम थी।

"कलगी, बाज़, घोड़ा आदि सिक्खों के धार्मिक चिह्न थे जो गुरू गोबिन्द सिंघ जी के निशान थे, यद्यपि विगत समय में पाँच गाँवों का स्वामी कलग़ी धारण कर लेता था। बाज़ तथा घोड़े का शौक रखने वाले तो प्रत्येक युग में मिल जाते हैं, आज भी। मिस्र के फ्राऊन, रूस के ज़ार तथा ईरान के बादशाह का चिह्न भी बाज़ है। पौलेंड के घोड़े समस्त विश्व में से सुन्दर माने गए हैं, लाल, सफेद, काले, नीले, थिरकते जिस्म।

संसार, तीन माने गए हैं- पाताल लोक, पृथ्वी लोक, द्युलोक। पाताल लोक का स्वामी फ़नीयर है, पृथ्वी का स्वामी शेर तथा आकाश का स्वामी बाज़ है। इसी प्रकार पत्थरों में संगमरमर, धातुओं में से स्वर्ण तथा मणियों में से amber, इसी प्रकार मनुष्यों में से योगी को शिरोमणि माना गया है।

"आप ੴ में वर्णित एक की दार्शनिक व्याख्या हेतु ग्रन्थ लिखते रहो, परन्तु मुझे प्रतीत होता है कि यह गुरू नानक देव जी की अंगुलि है। गुरू नानक देव जी जैसा उदारचित्त पैगम्बर इस जगत् में कहाँ मिलेगा? उनके वचनों का अनुकरण करते हुए सिक्खों ने जिन गुरूद्वारों का निर्माण किया, उनका गुबंद इस्लाम का तथा कमल का पुष्प वैदिक परम्परा का है। कारीगर तो वही पुराने थे, उनको नई दिशा मिली। रंग, मुसलमान कारीगर बनाते हैं तथा हिन्दु उनसे होली खेलते हैं। कृष्ण रासलीला की जो झांकियाँ दिखाई जाती हैं उन वस्त्रों की सिलाई एवं डिज़ाईन तैयार मुसलमान दर्जी करते हैं। हिन्दुओं के तो श्री भगवान् जी नंगधडंग हुआ करते थे। इन संयुक्त संस्कृतियों की समझ तथा प्रेम के अभाव में भारतीय कला उदात्त नहीं हो सकती।

"अनेक व्यक्तियों से सुना- इसके विषय में बताओ, यह पेटिंग क्या बताती है। मैं कहता- इस बेचारी ने क्या बताना है? यह तो दिखाई देती है, क्योंकि यह केवल द्रष्ट्व्य है, कुछ बोल नहीं सकती। कलाकार दविन्द्र गलतियाँ करता है। गुरू नानक देव जी वैसाख मास के सम्बन्ध में लिख रहे थे- साखा वेस करे ....भाव वृक्ष की शाखाओं ने नवीन वस्त्रों को धारण कर लिया है। दविन्द्र ने इस पंक्ति के माध

यम से स्त्री को शृंगार करते हुए चित्रित किया है जो गुरू नानक देव जी का अभिप्राय है ही नहीं। वह तो प्राकृतिक लिबास की कहानी कह रहे थे। जैसे दृश्य, शब्द के लिए अनिर्मित है, उसी प्रकार शब्द, दृश्य के लिए नहीं है। चित्र में से कहानी मत खोजो। पंजाबी कलाकार दृश्य-प्रादेशिक कला में से समाहित रहे- स्त्री तथा बकरी का चित्र बना देंगे, यह बताने के लिए कि औरत एक बकरी है केवल। कला विद्यालयों में गड़बड़ है, मौलिकता नहीं, कल्पना नहीं। मेरी कला को संसार ने स्वीकार किया है। पंजाबी चित्रकार कहानियाँ कहने से नहीं चूकते। संगीत को शब्दों के बिना स्वतन्त्र माना गया है या नहीं? किसी ने कभी इस बात पर आपत्ति व्यक्त की? जिस प्रकार संगीत शब्दों पर आश्रित नहीं, इसी प्रकार कला को वाणी की आवश्यकता नहीं। टैगोर को किसी ने पूछा- यह क्या बनाया है? उत्तर मिला- दिखाई नहीं देता? यदि तुम्हें दिखाई नहीं देता तो मुझे सुनाई नहीं देता।

"मुझसे जब कोई पूछता है- तुम पेटिंग कितने समय में बना लेते हो? मैं कहता हूँ- कम से कम पाँच हज़ार वर्ष चाहिए परन्तु पाँच लाख वर्ष का समय भी लग सकता है। प्राचीन से प्राचीन चित्र, मूर्तियाँ मेरे लिए उपयोगी हैं, वह मेरे अन्तर्मन में बसे हुए हैं। क्या आप गायों के दूध में से घास, तूड़ी तथा उसके रक्त को अलग-अलग देख सकते हो या पृथक्-पृथक् कर सकते हो? स्त्री-पुरुष संभोग का अनुभव, बच्चे के जन्म अनुभव जैसा कदापि नहीं, यद्यपि यह परिणाम उसी का है।

"मैंने खुशवंत सिंह से कहा- तुमने लिखा था कि सिक्खों का अस्तित्व पचास वर्षो के भीतर ही समाप्त हो जायेगा। कहाँ गई तुम्हारी भविष्यवाणी?

"खुशवंत हँसने लगा, कहा- गलती कहाँ हुई? दिखाओं मुझे कोई सिक्ख? खत्म है यह सारा सिलसिला।"

हरदेव ने यह बात अपनी पत्नी को बताई। वह बोली- मैं सिक्खों के विषय में लेख लिखूंगी, सिक्खों के अध्ययन हेतु। मारिया ने जो लेख लिखा, उसकी अंतिम पंक्ति यह थी- 'कज्ज़ाक पढ़ते नहीं। इनका शानदार इतिहास सिक्खों जैसा है। अशिक्षित होने के कारण कज्ज़ाक अब खत्म हो रहे हैं, इनको मरते देख सिक्खों को बचने का प्रयास करना चाहिए।' पोलेंड के जो व्यक्ति रशिया में बस गए, उन्हें वहाँ कज्ज़ाक कहा गया है। कज्ज़ाकों ने वीरता पूर्ण कार्य किए। 15 वीं तथा 18 वीं शताब्दी तक रूस के विशाल प्रदेशों पर विजय प्राप्त कर शासन करते रहे। उनका राज्य पौलेंड, रूस तथा यूकरेन पर रहा। उन्होंने बौद्धिक विकास की तरफ कभी ध्यान नहीं दिया, जिस कारण उनका अस्तित्व ही समाप्त हो गया। अब फिल्मों तथा अजायबघरों में रखे चित्रों के अतिरिक्त उनका अन्य कोई चिह्न शेष नहीं।

"राम किंकर का घर छोटा था तथा उसमें मूतियाँ अधिक थीं, तो भी बनाता रहता, कोई खरीदे या न खरीदे, कोई परवाह नहीं। रखने के लिए स्थान नहीं रहता तो गड्ढे खोदकर धरती में दबा देता ताकि वह गुम न हो सकें। कहता- पाँच दस हजार वर्षों के पश्चात् खुदाई में से प्राचीन वस्तुओं के अन्वेषक स्वयं ही इन्हें खोज लेंगे, हैरान होंगे कि इतनी उच्चकला भी थी कभी हिन्दुस्तान में। यह पुरस्कार क्या कम है हरदेव? व्यक्ति को लोभ नहीं करना चाहिए।"

मैंने पूछा- डॉ. रंधावा से अंतिम बार कब मिले? आह भरते हुए कहा- जून 1984 में। रात उनके घर में रहा। सुबह सेना चारों तरफ घूम रही थी। घोषणा हो रही थी कि क्फर्यू लग गया है, कोई बाहर न निकले। मैंने कहा- रंधावा साहिब, यह सख्ती कब तक ज़ारी रहेगी क्या पता? मुझे देश से बाहर निकालने का प्रबन्ध करो। उन्होंने किसी को फोन किया। सैना की जीप आ गई तथा मुझे जीप में बिठाकर नेपाल बार्डर पार करवा दिया। वहाँ से मैं कैनेडा पहुँचा। आप्रेशन ब्लूस्टार का समाचार सुनकर शून्य आँखों, भावनाओं रहित रंधावा साहिब दूर देखते रहे, देर तक।"

हरदेव कवि है, इसका मुझे बोध नहीं, तब पता चला जब कविता की दो पुस्तकें भेंट स्वरूप मिलीं। पहली पुस्तक में बायीं तरफ कविता, दायीं तरफ ड्राईंग है, कविता तथा चित्र का पारस्परिक संयोग ढूंढने वाला पाठक मूर्ख है।

"उस्ताद बड़े गुलाम अली खां खामोश रहते थे, अधिक बातें नहीं करते थे। कहते- बंद सीप बन जाओ। मोती बनने तक जुबां मत खोलो। जब मैं भारत में होता, तो तीन दिन तक होने वाले हरवलभ संगीत का श्रवण करता। रवि शंकर लोगों के लिए, वलायत खां स्वयं के लिए सितार वादन करते।

शिव कुमार जब भी लंदन जाता तो हरदेव के पास ठहरता। हरदेव यदि फराले आया होता , तो शिव कुमार घर आ जाता। अनेक बार हरदेव की अनुपस्थिति में भी शिव फराले चला जाता तो माँ बहुत प्रसन्न होती। कहती, शराब का प्रबन्ध कर देंगे पहले भोजन कर ले। बाद में तुम भोजन नहीं करते। ऐसे तो तुम मर जाओगे। मैंने भोजन से पहले तुम्हें शराब नहीं पीने देनी। अंग्रेज उधर ऐसा ही करते हैं पहले भोजन करो फिर जो चाहे पीओ।

"1972 में वीणा शर्मा (अब वीणा दत्त) लंदन रेडियो पर ऐनाऊंसर थी। उसका फोन आया- हरदेव हमने रेश्मा को ढूंढ लिया है। आ जाओ। यहाँ सामने बैठकर सुनो। रेडियो को तो सारा संसार सुनता है। कार्यक्रम समाप्त हुआ तो वीणी ने मुझे इस गायन की टेप, रिकार्ड करके दे दी।"

इसी वर्ष शिव कुमार लंदन गया। हरदेव उसके मेज़बान का घर ढूंढकर उससे मिलने गया। परिवार ने कहा- अभी सो रहे हैं। हरदेव ने कहा- मैं उसे अभी

उठा देता हूँ। सोये हुए को जगाया तो उसने कहा- ताऊ, आप कैसे आ गए यहाँ? उठता हूँ। तुम्हारे साथ बातें करने के काबिल हो जाऊँ। सुबह ही बोतल उठाकर पीने लगा। फिर कहने लगा- शाम को विवाह का निमंत्रण आया है, तुम साथ चलना। शराब पीयेंगे। समझाने का कोई असर नहीं था। हरदेव को कहने लगा- यह तुम्हारा खाकी रेशम का कुर्ता बहुत सुन्दर है, मुझे दे दो। हरदेव ने दे दिया। उसने अपनी नयी अचकन हरदेव को दे दी। इस समय भी उसकी अचकन हरदेव के पास निशानी के रूप में रखी हुई है। विवाह वालों ने गीत सुनाने के लिए निमंत्रण दिया। मंच पर खड़ा गीत गाता रहा, पौंड लेता रहा। बाद में हरदेव ने कहा- तुम अच्छे शायर हो, इस प्रकार कंजरों के समान पैसे लेना शोभनीय नहीं। हँसते हुए कहने लगा- शराब पीयेंगे। अगले वर्ष 1973 में उसके जीवन का खेल समाप्त।

हरदेव टोरांटो चला गया। दस वर्ष पश्चात् रेशमा टोरांटो आई। हरदेव उसको सुनने के लिए पहुँच गया, पीछे बैठ गया। रेशमा ने मंच से आवाज़ दी- हरदेव भाई, इधर आओ, मेरे सामने बैठो।

ईश्वर चित्रकार के विषय में बताया- वह चित्रकार भी था, शायर भी, परन्तु दोनों में से कोई भी नहीं था। देखों उसकी लिखित शायरी-

दुनिया में ऐसे लोगों की भी ज़िन्दगी रही।
नाग की वर्मी में जैसे कोई चिड़िया रही।
देती है दाद दिलबरी ऐसे तमन्ना को,
लपटों की जीभ पर जैसे गिरती बूंद रही।

इसी प्रकार तारा सिंह की कला है-

क्या कोई मान करे जीवन का क्या कोई बात लटकाये।
प्यार तुम्हारा इतना थोड़ा
जैसे जलती शिखर दोपहर
एक रेत कण के ऊपर से, आक ककड़ी का उड़ता फंबा
पल क्षण छाया कर जाये।

मीशा कवि को हरदेव पसंद करता है। उसकी कविता सुनाई :

झिझकता मैं भी रेहआ, ओ भी बहुत संगदे रहे।
चुप चुपीते एक दूजे दी खैर सुख मंगदे रहे।
रांझा जोगी हो गया तां हो गईआं मझीआ उदास
उंज तां उसे तरहां ही रंग-ढंग कुदरत दे रहे।

मीशे के अन्य शेयर देखो-

अधी रात पहर दे तड़के अक्खा विच उनींदा रड़के/ तेरी धूड़ वी सूरमे वरगी, सज्जणा दे पिण्ड जांदीये सड़के/ ओह जो तैथो कह न होई, ओह मेरे वी जी विच रड़के/सिखर दोपहरे डिगआ राही, अपने परछावें विच अटके, लौ ही लौ सी, सेक नहीं सी, देख लिया मैं जुगनु फड़के/ जी न करदा फेर मिलन नू, आ विछड़िए ऐदा लड़के।

हँस कर कहने लगा- पन्नू साहिब, मेरी कविताओं को आप बकवास कहकर फेंक भी दो तो क्या। मेरी पत्नी इन्हें बाज़रानियाँ कहती हैं, यह पोलिश शब्द है जिनके अर्थ हैं उलझे हुए, उटपटांग। ठीक है, मेरी कविताएँ गधे की हींचूं हींचूं ही सही, परन्तु गधा अपनी मस्ती में हींचूं हींचूं करता है, आप डण्डे के बल पर उसके मुख से हींचूं हींचूं नहीं निकलवा सकते।

हरदेव के दाँत इस आयु में भी पूरे बत्तीस एवं चमकदार हैं। अपने देश आता तो नीम की आठ-दस दर्जन दातुन यहाँ से लेकर जाता तथा वहाँ फ्रिज के फ्रीज़र में रख देता। रोज सुबह एक छोटे टुकड़े का उपयोग करता। बाला सिंह की मौसी दाँतों की डॉक्टर है। उसने हरदेव के दाँतो निरीक्षण करके कहा- किसी डॉक्टर को दाँत मत दिखाना प्रोफैसर, खराब कर देंगे। ऐसे दाँत तो किसी भाग्यशाली के होते हैं। हँसता है तो जैसे मोतियों की माला चमकती है।

"एक मास पूर्व एक मित्र का फोन आया- पाँच-दस मित्र आ रहे हैं मेरे पास शाम को। तुम भी आ जाओ। शराब पीयेंगे, यहीं टोरांटो में। छह-सात तो अंग्रेज थे अन्य भारतीय। बातें होने लगीं। मेरे मेज़बान ने अंग्रेज मित्रों से पूछा कि क्या कभी हिन्दुस्तान गए हों? जॉन नामक अंग्रेज ने कहा- एक बार 1959 में भारत गया था। उत्तर में कोई हिल्ल स्टेशन था। मुझे ऐसी फूड पुयाज़न हुई कि मैं तो मर ही गया था। फिर कभी उधर नहीं गया। हरदेव ने पूछा- टॉम का क्या हाल है? कहाँ है वो? अंग्रेज पूछने लगा- टॉम? कौन टॉम? हरदेव ने कहा- जो तुम्हारे साथ शिमला गया था। जॉन ने कहा- तुम उसे कैसे जानते हो? हरदेव ने कहा- मैं हरदेव हूँ। मैं ही तुम्हें मामा जी के अस्पताल में लेकर गया था। वह खड़ा हो गया, आँखों पर हाथ रख बच्चों के समान रोने लगा। गले मिला। बहुत समय तक पुरानी बातें करता रहा। फिर जाते समय हँसते हुए कहने लगा- तुम्हारे साथ मैं जा सकता हूँ भारत।"

उसके लेखन का उदाहरण देखो : तकिये पर कढ़ाई किया हुआ लाल चोंच वाला तोता/ निरीक्षक बन सब कुछ देख रहा/ स्कूल में हम पालों में धरती में से उगे प्रतीत होते/बिखरे काग़ज़ लिपी फट्टीयाँ/ गाँव की सुगन्ध अनुभव कर/ छप्पड़ में हाथ डुबोते/ पक्षियों के समान उड़ते/घर पहुँचते/ चारपाई पर बैठा बाबा बोलता/ ओए जब लड़कियाँ चिड़ियाँ हो जाती हैं सब/ कढ़ाई किए तोते/ उनकी आँखों में जाते हैं समा/

मिट्टी की सुगन्ध लगती है गाने/ अपनी आँखों का रंग लड़कियाँ भर देती मृग में/ भादो ऋतु में जब कौवे धारण कर लेते रूप मानव का/ कढ़ाई किया तोता बोलने लगता।

यह लम्बी कविता शंख है। सीपियाँ लघु कविताएँ तथा पंक्तियाँ हैं। उदाहरणतः

- खेल रहे दो बच्चे खुश हैं/ एक बहुत मँहगे खिलौने के साथ/ दूसरा उस डिब्बे के साथ/ जिसमें खिलौना आया था।
- आकाश में छायी घटा आती देखी/ घर से निकल कर चलना/ भीग कर वापिस आना तथा कहना- आँधी-तूफान में फंस गया था।
- मिट्टी नहीं मैं राख होना चाहता हूँ/ राख जगमगा कर, तप कर बुझती है/ मैं चमकता तारा नहीं/ टूटते तारे की रेखा बनना चाहता हूँ।
- यदि एक बार फिर से जीवन मिले/ तो बहुत सुनुंगा/कम बोलूंगा/ घर साफ न भी हुआ तो भी मित्रों को आने दूंगा/वस्तुओं के बिखरने से भयभीत नहीं होऊँगा/ टैलीविज़न कम, जीवन को अधिक देखूंगा/ बिमार न होने पर भी आराम करूँगा/ टूटने वाली वस्तुओं को भी खरीदूंगा/ कोई बच्चा मेरे साथ खेलना चाहे/कभी मना नहीं करूँगा।
- यदि जंगल के सभी पक्षी एक ही स्वर में गाते /तो जंगल सुनसान होगा।
- वह दिन उदास होगा जिस में सूझ के बिना ज्ञान/ प्रशंसा के बिना सभ्यता/प्रेम से अधिक सुन्दरता/ज़ज्बे से रहित सत्य/तथा कृपा के बगैर सच्चाई होगी।
- तलाश करके/ प्राप्त की गई जानकारी याद रहेगी/ सब कुछ स्वयं बता दो तो क्षण पश्चात् ही विस्मृत हो जायेगा।
- जब धर्म को तर्क द्वारा सही सिद्ध करते हैं तो हमारे सत्य तथा हमारे ईश्वर में कोई सौदेबाज़ी होने लगती है।
- किसी के लिए कुछ करने से सन्तुष्टि इसलिए होती है कि हम असमर्थ नहीं हैं।
- मेहमानों रिश्तेदारों को जितना चाहे प्रेम करो, उनके जाने के पश्चात् मधुर शांति प्राप्त होती है।
- कुदरत पूर्ण विराम में है, केवल मनुष्य काम करता है।
- उत्तम कला धीरे से उपजती है, नदी के प्रवाह या उड़ते बादल के समान, मानवीय कुशलता से रहित।
- बिना सोचे सजग रहना/झील की खामोशी के समान/मेरा उद्देश्य है।

- वस्तु अपने एकाकीपन को त्याग कर/एकत्रित होकर बड़ी बनती है। अंश स्वयं को गंवा कर/पूर्ण रूप बनता है।
- बहुसंख्या से विजयी होने वाले को सोचना चाहिए कि कहीं सभी मूर्ख उसके पक्ष में तो नहीं?
- मानव निज बुद्धि द्वारा सब कुछ सज्जित करना चाहता है जैसे प्रकृति तुच्छ हो/केश काटने, वृक्ष काटने, चेहरा बिगाड़ने को सुन्दरता समझता है/वातावरण का संकट यही है।
- जब से पकवान पकने का काम शुरू हुआ है, हम आवश्यकता से द्विगुणा खाते हैं/मेरे लोगों को औषधि तथा खाने-पीने के पदार्थों में कोई अन्तर दिखाई नहीं देता/मेरी सभ्यता में उपचार खिलाने-पिलाने से किया जाता है/दालें, सब्जियाँ, मसालें तथा जड़ी-बूटियाँ हमारी औषधियाँ हैं।
- जनसंख्या के बढ़ने से, वस्तुओं का मूल्य अधिक होने से, संख्या का महत्त्व बदल गया है। दुर्घटना में हज़ारों मृत्यु का समाचार न मिले तो प्रतीत होता है कोई घटना घटी ही नहीं।
- विश्वास उसको कहते हैं जिसके विषय में बहस तो क्या, वर्णन तक न किया जाये।
- मित्र खामोश रहता है। न जानना चाहता है, न उपचार बताता है बस साथ खड़ा होता है- प्रत्येक मामले में।
- वृक्ष पर चढ़ने के लिए मज़बूत शाखाओं को पकड़ना पड़ता है, पुष्पों तथा फलों को नहीं पकड़ा जाता।
- धोखा रेत पर लिखो, हमदर्दी पत्थर पर लिखो।

"मेरा मामा वर्ष में दो तीन बार शुद्ध घी का एक पीपा तथा घर में निकाली हुई शराब लेकर दिल्ली आता। जो दो लिटर के आस-पास की लोहे की खाकी बोतल पानी के लिए फौजियों के पास होती है, उसमें शराब भरी होती। मैं पूछता- यदि रास्ते में किसी ने पकड़ लिया तो? वह कहता- मैं आँख बचाकर रेलगाड़ी की किसी अन्य खूंटी पर इसे टांग देता हूँ तथा दूर बैठकर इसे देखता रहता हूँ। यदि कोई यात्री इसे उठाने लगेगा तो उसी समय दबोच लूंगा। यदि पुलिस ने उठा ली- तो किसी को पता ही नहीं चलेगा यह किसकी है। शराब लेकर तो मेरे लिए आता था परन्तु स्वयं ही पीता था। मेरे पास कई दिनों तक ठहरता। जब खत्म हो जाती तो वापिस गाँव चला जाता। जयपुर हाऊस में असंख्य गुलाब हैं। बसंत ऋतु थी। एक रात मामा उठा। सारे फूल तोड़कर ले आया। दो चादरों पर बिखेर दिए। सुबह माली देखकर चीखने चिल्लाने लगा कि पता नहीं किसने सारा बगीचा उजाड़ दिया है। मैंने पूछा- मामा

आपने यह क्या किया? उसने कहा- तुम्हारे लिए गुलुकंद बनवा कर लाऊँगा। यहाँ पर लगे रहते तो खराब ही होते। अब किसी काम तो आयेंगे। खांसी जुकाम से बचाव होगा भानजे तुम्हारा। इनको देख-देख कर कौन सा तृप्त हो जाना था। मामा जब कहता- बुलंद हो जाओ, तो हम समझ जाते कि शराब पीने का समय हो गया है। सर्दियों में वह मक्की की रोटी के बासी टुकड़ों को शराब में भिगोकर खाता। यदि उसे कोई कह देता कि अंदर बैठकर पी लिया करो, सबके सामने गिलास क्यों उठाये फिरते हो, तो उत्तर देता- मैं बिमार हूँ? मैं कोई दवाई खा रहा हूँ? जिसने बिमारी छिपानी हो वह भीतर जाकर दवाई लेगा। मैं स्वस्थ हूँ अभी। जब मैं विदा होता तो सातों मामे स्वेच्छा से पैसे देते। यह मामा भी, परन्तु तभी कहता- भानजे थोड़ी देर रूक जाओ, गाड़ी पर चढ़ाने स्टेशन तक छोड़ आऊँगा। इसलिए ऐसा करता, क्योंकि उसने मुझे अलग से कुछ और पैसे देने होते।

"पिता जी का स्वभाव गरम था, रात को देर से आता तो माँ पूछती- आँगन का द्वार बंद कर भीतर से कुण्डी लगा दी थी? वह उत्तर देता- नहीं। पशुओं की रस्सी खोल कर दरवाजा भी खोल कर आया हूँ। जाओ ढूंढ कर ले आओ।

"शायर डॉ. हरभजन सिंह मेरे मित्र थे। कैनेडा मेरे घर पहुँचे। दरवाजे से अंदर जाते ही सामने की दीवार पर मेरी पेटिंग लटक रही थी। उस तरफ जो सोफा था उस पर बैठकर टाँगे सीधी कर लीं। मैं आया सिर के ऊपर से पीछे की दीवार की तरफ अंगूठा करते हुए कहने लगे- दिस इज़ मारवलस पेटिंग। मैंने कहा- दिस इज़ नो वे टू ऐपरीशिएट आर्ट।

"अमृतसर, सहित सभी तख्तों' पर जब संगत को शस्त्र-दर्शन करवाते है तब साथ ही साथ उन्हें कच्चे रेशम से साफ भी करते जाते। मैंने कमेटी के प्रधान से लेकर सब को बताया हुआ है कि कच्चा रेशम इस फौलाद के लिए हानिकारक है, सूती कपड़ा सर्वोत्तम है, किसी ने ध्यान नहीं दिया। अब तक यही सब कर रहे हैं।

"पंजाब के लोग पारम्परिक खिलाड़ी हैं। इनको वह खेल अच्छा नहीं लगता जिसका सामान खरीदने में अधीनता हो। यह अपना सामान स्वयं ही बनाते एवं खेलते हैं। बॉल स्वयं ही बनाते तथा खूंडिया स्वयं ही वृक्षों से तोड़ते। गुल्ली स्वयं ही बना लेते हैं, गुल्ली डण्डा खेलते हैं। दौड़, छलांग, कुश्ती तथा कबड्डी में किसी भी सामग्री की आवश्यकता नहीं होती। यही इनके प्रिय खेल हैं।

"आपने देखा होगा पन्नू साहिब, अनेक व्यक्ति ऐसे मिलेंगे जो बेशक किसी मामले पर बात करने का अवसर मिले, वही बातें करते रहेंगे जो उन्हें आती हैं या पहले कर चुके हैं। मैं ऐसे भाषण को कबड्डी का मैच कहता हूँ। मेरा सहपाठी रंगी राम होता था। दसवीं कक्षा में था, वह कहता- हरदेव, पास होने के लिए जितनी

अंग्रेजी चाहिए, उसे मैंने पढ़ लिया है, तुम गणित के सवाल करवा दो। मैंने कहा अंग्रेजी का तुमने क्या कर लिया? वह बोला- मैंने कबड्डी मैच के लेख का रट्टा लगा लिया है। मैंने पूछा- यदि रेलवे जर्नी आ गई या मेले की सैर पर लेख आ गया, तब क्या करोगे? उसने कहा- मैं लिख दूंगा कि सिगनल नहीं हुआ था, गाड़ी वहीं खड़ी रही, समीप ही कबड्डी का मैच हो रहा था, मैं वही देखता रहा। मेले का लेख आ गया तो लिखूंगा कि मैच तो ओर भी अनेक हो रहे थे वहाँ, परन्तु मेरी रुचि कबड्डी देखने में थी... बस यहाँ भी कबड्डी मैच ही छाप आऊँगा।"

वारसा के समीप वोविश नामक एक कस्बा है जहाँ 1966 में लोक कलाओं पर मेले का आयोजन हुआ तथा हरदेव को आमंत्रित किया गया। युवा लड़कियों के समूह ने लोक-नृत्य प्रस्तुत किया। उनकी शिक्षिका एक बुजुर्ग बीबी, हरदेव के पास आकर पूछने लगी- बताओ इन लड़कियों में सबसे सुन्दर कौन है? हरदेव ने कहा- प्रत्येक जवान लड़की सुन्दर होती है, सभी सुन्दर हैं परन्तु इन सब में से अधिक सुन्दर आप हो मैडम जो इस आयु में, जवानी निकल जाने के पश्चात् भी सुन्दर हो। वह शर्माने लगी तथा उन्होंने यह बात अपने पति को बताई। पति ने कहा- आपने सही कहा मिस्टर सिंह। युद्ध से पूर्व जब हमारा विवाह हुआ, तब यह इक्कीस वर्ष की थी। अब भी वैसी की वैसी है, जैसी तब थी। उस्तानी के विषय में हरदेव की इस टिप्पणी को हज़ारों व्यक्तियों के सामने मंच पर सुनाया गया तब प्रबन्धकों एवं दर्शकों ने उसे तोहफे देकर लाद दिया। ये वस्तुएँ अभी तक उसके घर में रखी हुई हैं।

"पौलेंड का पादरी कोराको का रहने वाला था। मुझे उसकी बातें अच्छी लगती थीं। एक दिन फोन पर कहा- आपसे मिलने एवं बातें करने की इच्छा हो रही है उसने कहा- आ जाओ जब भी मन करे। बिना सूचना दिए एक दिन सुबह-सुबह उसका दरवाजा खटखटाया। मैंने तो उसे पादरी की वेशभूषा में ही देखा था, इस समय वह सामान्य व्यक्तियों के समान पैंट कोट पहने खड़ा था, हाथ में टोकरी। मुझसे कहने लगा- यार तुम फोन करके आते। हमारा सारा परिवार इस समय खुंबो का शिकार करने के लिए जंगल जाने के लिए तैयार है। या तुम भी टोकरी उठा लो। बातें भी करते रहेंगे, खुंबें भी ढूंढ लेंगे। पोलिश लोगों की यह एक प्रकार से पिकनिक होती है। खुंबों को पकाने की सामग्री भी ये लोग साथ लेकर जाते हैं। दोपहर तक मिली खुंबों को विभिन्न प्रकार से स्वादिष्ट मसालों में पकाकर मिलजुल कर खाते हैं। वह कवि था। हिन्दी का भी थोड़ा बहुत ज्ञान था। सारा दिन परिवार के साथ उसकी सुगन्धित संगत में व्यतीत किया।

"अधिकतर बातें वह रोमन में क्यों करने लगता, मुझे समझ में नहीं आया। अनेक वर्षो पश्चात् समाचारपत्र में पढ़ा कि उसे पोप चुन लिया गया है- पोप जॉन

पाल दूसरा। कैनेडा निवासियों ने टोरांटो में उसका स्वागत करना था। मैं भी चला गया। बहुत भीड़ थी। एक तरफ खड़ा होते हुए भी उसने मुझे दूर से पहचान लिया, कहा- हरदेव, यहाँ समीप आओ मेरे पास, यहाँ मेरे पास बैठो। मैं ऊँचे मेज़ पर चढ़कर उसके पास पहुँच गया, कहा- रोम के महान् पोप, मैं ऐशियन रीति से तुम्हारा स्वागत करना चाहता हूँ, आज्ञा दोगे? उसने हाँ कर दी। अपने हाथ उसके कदमों से स्पर्श कर मैंने अपनी अंगुलियों को माथे पर लगाया। उसकी आँखें भर आईं। मुझे आलिंगन में लेकर कहने लगा- हरदेव, हमारे पश्चिमी लोग इज्ज़त नहीं करते। कुछ वर्षों पश्चात् समाचार पढ़ा कि किसी तुर्क ने उस पर गोली दाग दी। उसकी एक आदत बहुत अजीब थी। जब कभी वह बहुत प्रसन्न होता, ज़मीन से मिट्टी की चुटकी भरता, अपने सिर में डाल देता। अब मैं सोचता हूँ, शायद उसे पता था कि उसने रोम जाकर पोप की पदवी को संभालना है, इसी कारण वह रोमन भाषा बोलने का अभ्यास करने लगता था, शायद उसे अहसास था कि समय से पहले उसकी मृत्यु हो जायेगी, इसी कारण वह मिट्टी की भरी चुटकी को सिर में डाल लेता था। इन रहस्यों से न तो कभी पर्दा उठा है, न उठेगा।

"अमृतसर दरबार साहिब के दर्शन करने गए। सुबह जल्दी उठे ताकि आरम्भ करने की रीति बच्चों को दिखा सकें। देखा कि परिक्रमा में बेर बाबा बुड्ढा जी के नीचे पुरुष झोली तथा स्त्रियाँ दुपट्टे फैलाकर बेरी के नीचे खड़े हैं, खामोश, शांत। पत्नी ने पूछा- यह क्या हो रहा है? एक यात्री ने बताया- सुबह होते ही चिड़ियों का कीर्तन प्रारम्भ हो जाता है। वह गाती हैं, उनके पंजों तथा पंखों से टकराकर कोई पत्ता, शाखा का टुकड़ा टूट कर उनकी झोली में गिर जाए तो लोग उसे प्रसाद समझ कर घर ले जाते हैं। ऋतु अनुरूप यदि किसी की झोली में बेर गिर जाए तो समझ भाग्य उदय हो गया। इन चिड़ियों को बाबा बुड्ढा जी के कीर्तनियें कहा जाता है।"

वर्ष 1972 में इन पंक्तियों के लेखक ने बी.ए की थी। नरेन्द्र कालिया अंग्रेजी पढ़ाते थे। वह अत्यधिक सूक्षम वृत्ति के साहित्य-रसिक थे। उनकी प्रेरणा के कारण ही मैंने टामस हार्डी, सामरसैट्ट मॉम, मोपासां, वैल्लज़, डिकनज़, मान, ओ हैनरी, लारंस, आसकर वाईलड का अध्ययन किया। एक दिन कहने लगे- आप अलबर्टो मोराविया पढ़ो, तीन-चार पुस्तकें मैंने लाईब्रेरी के लिए मंगवा दी हैं। मैं तथा अजीत कुछ कुछ किताबी कीड़े जैसे थे, सबसे पहली पुस्तक ***द रोमन टेलज़*** का अध्ययन किया। इसमें वर्णित कहानियों को पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। बाद में दो तीन उपन्यासों का अध्ययन कर अध्यापक से पूछा- मोरविया को नोबेल प्राईज़ मिल गया सर? कालिया साहिब हँसने लगे तथा कहा- अभी कहाँ, अभी तो यह बहुत छोटा है। परन्तु लिखता अच्छा है। नोबेल प्राईज़ के लिए बहुत लम्बा मार्ग तय करना पड़ता

है। दिन, मास, वर्ष बीतें। तीन चार वर्ष पहले सुबह होते ही मैंने समाचार पत्र में पढ़ा- मोराविया विनज़ नोबेल प्राईज़। साथ में चित्र। मुझे चालीस वर्ष पूर्व की बात याद आ गई। खुशी हुई। दो ढाई घण्टों के पश्चात् आसाम से अजीत का फोन आया- बधाई हो, मोराविया को पुरस्कार मिल गया। मैंने पूछा- किसने दिलवाया है पुरस्कार? हँसते हुए कहा- हमने, ओर किसने? पाठक ताकतवर हो तो किस वस्तु की कमी हो सकती है?

यह बात हरदेव को बताई। उसने कहा- रोम के एक होटल में मैं तथा मोराविया साथ-साथ रहे। सुबह शाम इक्ट्ठे सैर करते। मैंने उसे पहले दिन ही बता दिया था कि मुझे इटालियन भाषा नहीं आती। वह दो तीन वाक्य अंग्रेजी में बोलकर इटालियन बोलने लग जाता। तीन चार बार मैंने फिर से कहा- मुझे आपकी भाषा नहीं आती। खड़ा हो गया, भारी आवाज़ में कहा- तुम्हें यह भाषा सिखाने के लिए ही तो बोल रहा हूँ। बस दो चार दिनों में समझने लगोगे और दुनिया को बताओगे कि इटालियन मैंने मोराविया से सीखी है। तब बेशक गलत बोलते रहना, लोग तुम्हारी भाषा को सही मानेंगे।

कहने लगे- सारे पक्षी एक ही स्वर में गायेंगे तो जंगल कितना उदास होगा। यही बात सतनाम सिंह खुमार ने कही थी- यह संसार यदि सुन्दर दिखाई देता है, रंग-बिरंगा है तो मूर्खों की बदौलत है पन्नू साहिब। सभी व्यक्ति समझदार होते तो इसने उजड़ जाना था। जी.एस रियाल ने कहा- उपवनों की अपेक्षा जंगल कुदरत को अधिक प्रिय हैं। मालियों के डिज़ाईन उसे अच्छे नहीं लगते। संस्कृत भाषा कितनी समृद्ध है। इसके मरने का कारण है कि इन्सान इसे सुसज्जित करने एवं तराशने से नहीं रूका। लातिनी तथा यूनानी भाषाओं के साथ भी यही हुआ।

"परम्परा तथा आधुनिकता में; प्रत्यक्ष, परोक्ष में से संसार तथा रहस्य में से ईश्वर की तलाश करने का प्रयास उच्च शैली की बुनियाद है। ईश्वरीय अभिव्यक्ति कोई शोध-कार्य नहीं है, यह तो ऐसे है जैसे बंद कली ने खिलना हो। ईश्वरीय कार्य स्वयं में अद्वितीय अनुभव हैं। तस्वीर अपनी व्याख्या स्वयं करेगी क्योंकि यह किसी ख्याल का अनुवाद नहीं। निपुण कार्य के विषय में कोई फैसला नहीं सुनाया जा सकता, न ही उसकी सुन्दरता का मूल्यांकन हो सकता है। यदि पहले से ही कलाकार को पता हो कि पेटिंग कैसी बनेगी फिर वह किसी काम का नहीं। पेट के अन्दर पल रहे बच्चे के नैन-नक्श उसकी माँ नहीं बना सकती, बच्चा अपना रंग-रूप स्वयं तैयार कर रहा है यद्यपि उसको इसका पता नहीं। आर्ट मानव की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नहीं आता। एक कलाकार के रूप में, मैं न तो व्यक्ति का प्रशंसक हूँ, न ही उसका मसीहा। कला का काम शिक्षा देना है, न कि व्याख्या करना। आर्ट,

सत्य को न तो बयान करता है, न उससे असहमत होता है क्योंकि आर्ट स्वयं सत्य है। आर्ट का पुल पार करते ही मानव अनन्त स्वतन्त्र देश में पहुँचता है। कलाकार वही कहलवायेगा जो आर्ट हो जायेगा। विकास के जिस स्तर पर मानव पहुँच गया है, वहाँ उसकी रूह कैद हो गई है। जब कभी रूह कुछ समय के लिए कैद से मुक्त हो जाये, तब आर्ट का जन्म होता है।

"लगातार आर्ट की साधना करते हुए मैं स्वयं से दूर तथा आर्ट के समीप पहुँच जाता हूँ। यह यात्रा ऐसी होती है जैसे कि मैं किसी विशाल महानगर में आ गया हूँ। मेरे हाथों में उस कार का स्टेयरिंग है जिसे मैं चलाना नहीं जानता। न तो मेरे पास नक्शा है, न कम्पास, सड़कों पर कहीं भी साइन बोर्ड नहीं लगे हुए। पौलेंड के अन्तर्राष्ट्रीय आर्ट सिंपोज़ियम में मेरे साथ यही हुआ। सैंकड़ों मीटर लम्बे कागज़ का मैंने एक रोल लिया। जो मन में आया, उस पर बनाना शुरू कर दिया। मुझे रंगों तथा रेखाओं के किसी डिज़ाईन की कोई परवाह नहीं थी। क्या कुछ नष्ट कर रहा हूँ, एक बच्चे के समान मुझे कुछ पता नहीं तथा न ही पता करने की चिंता थी। मैं अदृश्य मंजिल की तरफ बढ़ा जा रहा था। घण्टों पश्चात् एक मीटर काग़ज़ को पेंट कर मैं अगले मीटर की तरफ बढ़ता जाता। यह पागलपन जैसा था, बेपरवाह, चिंतन रहित। मेरे कार्य का परिणाम क्या होगा, कोई ध्यान नहीं था, बस काम करते समय आनन्द अनुभव कर रहा था। बाद में भी देर तक यह काम पड़ा रहा, मैंने देखा तक नहीं। देर पश्चात् जब मैंने देखा कुछ उसमें ऐसा था जो नया था तथा जो मुझमें पहले नहीं था। यह मेरा नहीं था। इस काम को समाप्त करने के विषय में कोई ख्याल नहीं आया। न कागज़, न समय नष्ट करने के सम्बन्धी कोई ध्यान मन में आया था, बस जो भी दृश्य मुझे दिखाई देते, मैं उनके पीछे-पीछे चल पड़ा बिना इनका निरीक्षण परीक्षण किए। कोई जज़्बात मुझे विशेष पेटिंग बनाने का आदेश देता तो मैं तब तक पेटिंग बनाता रहता जब तक वह जज़्बात निढाल न हो जाता। दिन रात चेतना की विभिन्न अवस्थाएँ देखता रहता। पेंट किया हुआ बंडल बड़ा होता जा रहा था तथा सफेद काग़ज़ कम। जब कभी मेरा मन करता कि जो कुछ पीछे चित्रित है, उसे देख लूं, तो मैं स्वयं को रोक लेता, कहीं पिछला काम आगे के काम को प्रभावित न कर दे। दिन रात व्यस्त रहता। अगले दिन को आँखों में भर कर मैं खुशी खुशी सो जाता। रंगों में चमक आने लगी थी, आकार निखरने लगे। समाधि सदृश अवस्था थी तथा एक ही समय में मैं दो प्रकार के संसार में रहने लगा। दोनों संसार वास्तविक थे। यदि अन्तर था तो केवल समय का, जब काम करता, तब समय रूक जाता, पाँच तथा पन्द्रह घंटों में कोई भेद नहीं।

"बहुत दिनों के पश्चात् मैंने इस रोल को खोल कर देखा तो कुछ चित्रों को देखकर विस्मित हुआ। मुझे विश्वास था, इन्हें मैंने अपने रंगों के साथ, अपने ब्रुश के साथ चित्रित किया है परन्तु यह मेरे नहीं थे, इनका सम्बन्ध मेरी किसी वस्तु से नहीं है। उस दिन के पश्चात् आर्ट की अपेक्षा आर्टिस्ट मेरे केन्द्र में आ गया। मैं स्वयं को दूर से देखने में समर्थ हो गया था। दृश्य तथा दर्शक एक हो गये थे। मैंने जानना चाहा कि पेटिंग का मेरा यह कार्य कैसे हुआ है परन्तु कुछ पता नहीं चला। मैं इतना अवश्य जान गया था जो कार्य किसी को आधार बनाकर किया जाए, वह आर्ट नहीं होता। मैंने स्वयं से कहा कि यदि तुमने स्वयं को आर्टिस्ट कहलवाना है तो नमूनों से परे हट जा।

"आर्ट ज़ज्बे का कार्य है, यह शक्तिशाली है तथा संन्यासी भी। आर्ट दुनिया की, आर्टिस्ट की तथा स्वयं की कड़ी आलोचना करता है। मेरे आर्ट में न तो परम्परा है, न ही आधुनिकता। फोकलोर मुझे भयभीत कर देता है। मेरे द्वारा बनाये गए चित्र सम्भव है कि हिंसक हों परन्तु शुद्ध हैं। इनमें न तो षड्यन्त्र है, न नफ़रत, यह तो केवल दृश्य हैं। विश्व को प्रकट करना मेरा कार्य है, इसे मैं करता रहूँगा।

"जो मैं कहना चाहता हूँ उसका कोई महत्त्व नहीं, जो कह दिया गया, वही सब कुछ है। मेरे सामने मेरा आर्ट है, हम दोनों के मध्य न तो कोई मिथ खड़ी हो सकती है, न इतिहास, न सुन्दरता, मेरी रचना के समक्ष केवल मैं होता हूँ। सरकार, मन्दिर, अजायब घर, आर्ट कम्पनी, मेरे न्यायाधीश नहीं। मेरा आर्ट मेरा न्यायाधीश है।

"मुझे प्रतीत होता है कि वास्तव में आर्टिस्ट वही है जो यह समझे कि उसकी जिम्मेवारी स्थायी है तथा अनन्त भी। आर्ट लगातार आर्टिस्ट से स्वच्छ, पवित्र सदाचार की मांग करता है। इसका अभिप्राय यह है कि देना ही देना है, लेना कुछ नहीं। आर्टिस्ट दयालु दाता है। वह स्वयं को सतत खण्डित करता है तथा फिर टूटे हुए टुकड़ों को जोड़ने का प्रयास करता है। प्रत्येक कार्य स्वयं में पूर्ण है, प्रत्येक सुबह नई सुबह होती है। अदृश्य को मिलने के लिए वही चलेगा जो बलवान होगा।

"पंजाब कला से वंचित हो गया, जिसके ठोस कारण भी हैं। दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता तथा विदेशों में पंजाबियों ने ईश्वरीय कला की धूम मचा दी है परन्तु पंजाब इससे वंचित है। छोटे-छोटे कलाकारों ने बड़ी-बड़ी धार्मिक पेटिगज़ तथा दृश्य बनाये हैं जो कैलण्डरों के रूप में बहुत खरीदे गए। इस रूझान को मैं शोभा सिंह सिंडरोम कहता हूँ। इसने आर्ट को काठ मार दिया। लोगों ने समझ लिया कि आर्ट कहानियाँ सुनाने वाली कोई वस्तु है। पंजाब में सृजना नहीं हुई। इस प्रकार की गैलरियाँ तथा अजायब घर है जहाँ उत्तम आर्ट सुरक्षित है परन्तु वहाँ या तो कलाकार जाते हैं या

कला के विद्यार्थी। विद्वान्, कवि, दार्शनिक, चिंतक से इससे दूर ही हैं। उनको न तो दृश्य की समझ है, न समझने की रुचि। पश्चिम के अधिकतर आर्टिस्ट कवि दरबार में कविताएँ सुनने या पढ़ने हेतु जाते हैं। यहाँ भारत में कवि आर्ट देखने नहीं जाते। मीडिया इसको कवर करने के लिए तब तैयार होगा जब कोई कला देखने का शौकीन होगा। आर्ट के रीविऊ समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं, उनको पढ़ा नहीं जा रहा। वर्तमान समय में मुझे यही दिखाई दे रहा है।

"धनराज भगत, के.सी. आरयन, बी.सी. सानियाल, कंवल कृष्ण, हरकृष्ण लाल, पी.एन. मागो, सतीश गुजराल, कृष्ण खन्ना, नंद कटियाल, केवल सोनी, अवतार सिंघ, मनजीत बावा, सोहन कादरी, परमजीत सिंघ, अप्रिता सिंघ, अर्पणा कौर, राजेश मेहरा, शिव सिंघ, मलकीत सिंघ, जोध सिंघ आदि ने संसार में प्रसिद्धि प्राप्त की है परन्तु पंजाब उनसे अनभिज्ञ है। भूबेश सानियाल बंगाली था परन्तु लाहौर की स्नेह लता के साथ उसका विवाह हुआ था। पहले लाहौर में फिर देश विभाजन के बाद यह दम्पत्ति दिल्ली में रहने लगे। उसने अंदरेटे में भी एक घर बना रखा था जहाँ अब उसकी पुत्री रहती है। यह सभी कलाकार पंजाबी जानते हैं, पंजाब से प्रेम करते थे तथा वारिस की हीर तथा पंजाब के लोकगीत गाते थे।

"मेरी लिखावट स्पष्ट नहीं है पन्नू साहिब। चित्रकारों की लिखावट अस्पष्ट ही होती है। हाथ में कलम पकड़ूं या ब्रुश, रूप रंग तथा आकार आँखों के सामने घूमते रहते हैं। इस कारण शब्द शब्द नहीं रहता तब, कुछ और ही बन जाता है। लोक सिद्धेश्वरी देवी का गायन सुनते रहे, गा रही थी- रघुवर शब (रात) के समान। मुझे आवाज़ सुनाई नहीं दे रही थी, उस समय मेरी दृष्टि में कृष्ण तथा काली रात की समता ही इधर-उधर घूमती रही।

"राम किंकर बैज, संथाल था। उसका चेहरा, कद-काठ वानर के समान था। मुझे वानर कभी अच्छे नहीं लगे। मैं राम किंकर के साथ रहकर काम करने लगा तब देखा कि हज़ारों वर्षों पश्चात् कभी-कभी ऐसे कलाकार के दर्शन होते हैं। मुझे वानर अच्छे लगने लगे। दिल्ली रिज़र्व बैंक के बाहर जो मूर्तियाँ हैं, वह उसने ही बनाई हैं। पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने उससे मिलकर प्रार्थना की थी कि इस कार्य को आपने सम्पूर्ण करना है। किंकर ने कहा- मैं मँहगा हूँ। आप किसी सस्ते कलाकार को ढूंढो। नेहरू ने कहा- जो कहोगे, वही देंगे। उसने सवा लाख एडवांस मांगा तो दे दिया गया। उस समय सवा लाख कितनी बड़ी रकम थी... मित्रों को शराब पिला पिला कर एक वर्ष में सारा पैसा खत्म कर दिया, कोई भी काम नहीं किया। नेहरू से कहा- सवा लाख ओर चाहिए। पहले दिए गए पैसों से मैंने काम करने की तैयारी कर ली है, अब काम करूँगा। वह भी दे दिया गया। संसद में शोर मच गया कि

राष्ट्रीय पूंजी को नष्ट किया जा रहा है। कम पैसों में जब अच्छा काम करने वाले कारीगर मिलते हैं तो फिर यह बरबादी क्यों हो रही है? नेहरू ने कहा- घटिया काम नहीं करवाना। राम किंकर अनमोल है। जितना मांगता जाएगा, उतना देते जायेंगे।

"हमारा कारोबार रंगों का है पन्नू साहिब। सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक, अस्त होने से फिर उदय होने तक कुदरत करोड़ों लिबास बदलती है। प्रत्येक अगला पल पिछले पल से नया तो है ही, भिन्न भी है, नया शेड, नवीन अभिव्यक्ति। पिछला लिबास नहीं उतारती कुदरत, उसी लिबास पर नया लिबास पहन लेती है। ऐसे अद्‌भुत दृश्यों को देखकर रोश बिहारी बैनर्जी कहा करता था- मैं अंधा होने से पहले मरना चाहता हूँ।

"इन के काम से संसार की भावी पीढ़ियाँ प्रभावित होंगी परन्तु पंजाब इनसे कब परिचित होगा? जैसे सिक्ख धर्म की पुनः स्थापना हेतु सिंघ सभा लहर का प्रारम्भ हुआ था, उसी प्रकार आर्ट को जीवित करने के लिए आन्दोलन शुरू करना पड़ेगा तथा यह काम नौजवानों द्वारा करने योग्य है। पश्चिम के संगीतकार कला के रीविऊ लिखते हैं, क्या हमारे कीर्तनिएं आर्ट की नब्ज़ देखने लगेंगे कभी? हमारे विद्वान् अपनी अनपढ़ता पर कब लज्जित होंगे? दृश्य कलाएँ अत्यधिक शक्तिशाली हैं तथा उनके विषय में जानना अत्यन्त आवश्यक है। पंजाबियों को कब परमात्मा दृष्टि देगा, इस सम्बन्धी कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता। जब आर्ट देखने की आदत उत्पन्न होगी तभी आर्टिस्ट जन्म लेगा। संगीत सीखने वाले का कान ठीक होना आवश्यक है, पहले वह उस्तादों को सुनेगा, तब स्वयं सुरबद्ध होगा। हाथ में तब तक ब्रुश नहीं पकड़ सकते, जब तक आँखों ने पहले पाताल से आकाश तक ब्रह्माण्ड नहीं देख लिया।"

मैंने पूछा- आधुनिक कला की दिशा कैसी है?

उसने कहा- आधुनिक कलाकार का मनोरथ है रंगों तथा रेखाओं के माध्यम द्वारा छिपे सत्य को प्रकट करना। कविता तथा वार्तिक में बहुत कुछ ऐसा होता है जो स्पष्ट नहीं होता, तो भी पाठक उसे समझ जाता है तथा रसास्वादन करता है। दर्शक से यह आशा की जाती है कि वह वो भी देखे जो दिखाई नहीं देता। अनेक बार दर्शक तथा कलाकार एक ही लय में नहीं होते तथा प्रत्येक की निजी व्याख्या होती है।

एक अन्य प्रश्न- फोटोग्राफी के आविष्कार से चित्रकारी पर कोई प्रभाव पड़ा?

उत्तर- बहुत। बहुत फ़र्क पड़ा। यह स्वाभाविक ही था। कैमरे के कारण चित्रकला के क्षेत्र में एक इंकलाब आया है। प्रकाश के विषय में वैज्ञानिक पद्धति के कारण रंगों की बनावट का पता चला जिससे कि देखने का ढंग ही बदल गया।

एक बार तो ऐसा प्रतीत हुआ कि चित्रकला की आवश्यकता ही नहीं रहेगी क्योंकि इमारत, दृश्य, भीड़ को जितनी खुबसूरती से कैमरा प्रस्तुत करता है, चित्रकार नहीं कर सकता। जो भेद फोटो तथा तस्वीर में है, वह ये है कि कैमरे के पास व्यक्ति के विचार नहीं, तर्क नहीं। चित्रकार ब्रश चलाते समय अपने निजीत्व को कैमरे की तरह दूर नहीं रख सकता। सहज आस्वादन की तृप्ति कलाकार के कंधों 'पर अपितु बढ़ गई है, क्योंकि संसार मशीनों से उदासीन हो कला से संतुष्टि प्राप्त करने की आशा रखता है।

प्रश्न- आधुनिक कला का प्रारम्भ कहाँ से होता है?

उत्तर- कोई कलाकार अपने भूतकाल से अलग नहीं होता फिर भी कोई ऐसी घटना घटित होती हे जो पहले समय से बिल्कुल ही भिन्न होती है। एक शताब्दी पूर्व की कला भिन्न हो गई थी। पिकासो ने 1909 में पहली कियूबिसट (तीन डाईमैनसन्ज़ वाली) तस्वीर बनाई, जिस कारण कला क्षेत्र में नवीन धड़ेबंदी उत्पन्न हुई। पहला धड़ा/पक्ष प्राकृतिक वस्तु को खण्डित कर उसे रेखागणित के चिह्नों में परिवर्तित कर चित्रित करता था। द्वितीय पक्ष कैनवस को रेखा गणित के चिह्नों द्वारा, द्वि-सीमा तस्वीर के फ्रेम में रख उस पर कोई प्राकृतिक चिह्न लगा देता। कला मूल प्रकृति से अलग होकर भावनाओं तथा रेखा गणित का चिह्न बन कर रह गई।

प्रश्न - किस सीमा तक मनुष्य कला में अपनी निजता शामिल कर सकता है?

उत्तर- रंगों तथा रेखाओं द्वारा जो आकार आँखों में से होता हुआ मन तथा मस्तिक को प्रभावित करे, उसे हम प्लास्टिक माध्यम कहते हें। लैंडस्केपिंग, इंटीरियर डैकोरेशन, वस्त्रों पर, दीवारों पर अनेक डिज़ाईनों में कलाकार शामिल है ही। दृश्य तो प्रकृति में हैं, उसने स्वयं को इसमें शामिल करके नया रूप-रंग देना होता है। साफ़ वस्त्रों के ऊपर के डिज़ाईन बताते हैं कि कलाकार यहाँ उतरा हुआ है। कुम्हार के चक्के पर मानवीय हाथ जब तक किसी आकृति, शक्ल वाला बर्तन नहीं बनाते, तब तक चक्के के ऊपर मिट्टी का गारा रखा हुआ है, जिसका कोई नाम नहीं , रूप नहीं। कलाकार के हाथों में से निकल कर मिट्टी जीवित हो जाती है। चित्रकार का यही काम है कि वह अरूप तथा अनाम को रूप तथा नाम देता है।

प्रश्न- कलाकार कितना स्वतन्त्र है?

उत्तर- सीमित सीमा तक। एक ही लकड़ी में से मेज़ बना, उसी में से कुर्सी का निर्माण हुआ। दोनों पृथक् पृथक् वस्तुएँ हैं। गिलास एक लम्बाकार बर्तन है, जिस द्वारा हम सरलता से तरल पी सकते हें परन्तु गिलास भी एक जैसे नहीं होते, सैंकड़ों डिज़ाईनों के हैं। फिर भी गिलास का लम्बाकार होना इसकी बुनियादी शर्त है जिस कारण कोई भी गिलास ऐसा नहीं जो थाली जैसा होगा। खाने वाली वस्तुएँ कौली,

थाली आदि सभी भिन्न-भिन्न आकार के होगें, पीने वाले भिन्न-भिन्न होंगे। हाँ, बादशाह तथा मज़दूर की थाली में अन्तर अवश्य होगा ही होगा तो भी इनमें आकार की समानता है।

प्रश्न- कला आलोचक का क्या कर्तव्य है?

उत्तर- हम जाते समय एक सरसरी दृष्टि से देखते हैं। उस मकान में बेरी का वृक्ष है, यह तो पता है परन्तु पत्तों का रंग ऋतुओं अनुसार कैसे बदल रहा है, पत्तों के ऊपर रेखाओं के कैसे निशान हैं, एक शाखा में से दूसरी शाखा कैसे निकल रही है, यह पता नहीं। हो सकता है किसी दिन समाचार पत्र में उस गली का चित्र देखों जिसमें से आप रोज़ निकलते हो तो भी आप पहचान न सको। हज़ार बार एक दृश्य देखने के पश्चात् यह आवश्यक नहीं कि हमारी याद की कैनवस पर सही उकरा हो। सरसरी दृष्टि तथा कला निरीक्षक की दृष्टि में यदि कोई भेद न होता तो अजायब घरों के पहरेदार सबसे बड़े कला-आलोचक होते, क्योंकि वह समस्त आयु इन वस्तुओं को देखते रहे हैं। कला निरीक्षक व्यक्ति जो एकबार सरसरी दृष्टि से देख लेता है, पहरेदार वह समस्त आयु में नहीं देख पाता। देखना वह कर्म है जिसके लिए तप, साधना की आवश्यकता होती है। कलात्मक सूक्ष्मता के निरीक्षण की क्षमता प्रत्येक व्यक्ति में नहीं होती। कला निरीक्षक गुण अवगुण देखकर कलाकार को सजग करता है। दरवाज़े के रंग पर हल्की सी खरोंच जो आपको दिखाई नहीं देती वह कला निरीक्षक की नींद उड़ा देती है। कलाकार का भूत उसकी वर्तमान कलाकृतियों में दिखाई देगा, परन्तु सारा नहीं दिखाई देगा, कुछ ऐसा रह जायेगा जो इस चित्र में चित्रित नहीं हुआ, जो अवशेष है, वह भावी चित्र में दिखाई देगा। कला-निरीक्षक यह परख सकता है कि वह क्या था जो पिछले चित्र में नहीं था तथा अगले चित्र में आ गया है। कहीं कुछ ऐसा है जो कलाकार को दिखाई नहीं देता, कला-निरीक्षक वह सब कुछ खोज लेता है। यद्यपि दृश्य हेतु आँखें बुनियाद है परन्तु आँखों के पुल से होता हुआ जब दृश्य मस्तिष्क में चला जाता है तो मानव की समस्त वृत्तियाँ कार्यशील हो जाती हैं। आँखों को फूल की बनावट का पता है, सुगन्ध का क्या पता? चेतन मन की अपेक्षा अधिकतर अद्भुत निर्णय अचेतन मन करता है। चित्रकार सभ्यता का प्रतिनिधि है, सभ्यता उसे तथा वह सभ्यता को प्रभावित करता है।

प्रश्न- आपने अमृता शेरगिल का जिक्र क्यों नहीं किया?

उत्तर- वह पहली पंजाबन है जिसने कला का अभ्यास करते हुए कला-विद्यालयों में विद्या प्राप्त की। उसमें सामर्थ्य था कि कभी विश्व के बड़े कलाकारों में उसका नाम होता, परन्तु ईश्वर ने उसकी आयु कम लिखी थी। गर्भपात के कारण इतना खून बहा कि उसकी मृत्यु हो गई। उसकी कला में अभी आधुनिक

आर्ट की आँख खुलने ही लगी थी। जितना उसने किया वह अच्छा है। परन्तु जब संसार के कलाकारों का काम देखते हैं तो वह थोड़ा है। उसने परम्परा से हटकर काम किया, उसकी यही प्राप्ति है। जीवित होती तो क्या पता अपना स्कूल ऑफ आर्ट निर्मित कर लेती परन्तु ये तो अब अनुमान हैं।

प्रश्न - क्या कलाकार निश्चित पाठ्यक्रम अनुसार कार्य करता है?

उत्तर- धार्मिक चित्रों, राजा, महाराजाओं के चित्रों की शैली सामान्यतः' एक जैसी होती है। इसी प्रकार प्राचीन कला-कृतियों के चित्र भी घरों में पहुँचाने आवश्यक होते हैं, यहाँ भी पाठ्यक्रम निश्चित है। अजंता के कलाकार अपनी कलात्मक प्रसिद्धि के बावजूद बुद्ध के पुजारी हैं। उनका जीवन-ढंग बौद्ध भिक्षुओं जैसा था परन्तु उनकी कला की किसी ने यह कहकर निन्दा नहीं की कि बंधन क्यों नहीं तोड़ते। एक उद्देश्य को सामने रख वह कलाकृतियों के निर्माण में लगे रहे। उन्होंने किसी बाहरी प्रभाव को स्वीकार नहीं किया, उन्होंने तो प्राकृतिक प्रभाव को भी स्वीकार नहीं किया। यही कारण है कि उनकी कला किसी तपोवन की कृति दिखाई देती है तथा प्रत्येक नया कलाकार उनकी कृतियों को देखकर अपने मन में तपस्या करने का संकल्प लेता है, तपस्या के लिए उत्साहित होता है। उनकी कला में निपुणता है, क्योंकि उनकी साधना अनंत है, साधु के समान। फिर भी यह अनिवार्य नहीं कि अधिक परिश्रम करने वाला कलाकार निपुण हो जाये। अनेक बार कम परिश्रमी कलाकार कमाल कर जाते हैं। अतः इसमें दैवी वरदान से मैं इनकार नहीं कर सकता। कलाकार वह चित्रित करता है जो वह देखना चाहता है। कलाकृति, कलाकार का हल्फिया बयान है। भावनाएँ किस सफलता तक मूर्तिबद्ध हुई हैं यह कला-निरीक्षक ही बतायेंगे।

प्रश्न - कुदरत कितना प्रभाव या विघ्न डालती है?

उत्तर - बहुत भी और नहीं भी। अधिकतर ऐसा है कि रंगों का खेल प्रकृति में पहले से विद्यमान है। प्रकृति में टकराव है। मनुष्य सीखता है कि यदि अंधेरा न हो तो प्रकाश की सत्ता का अनुभव कैसे होगा? पर्वत इस कारण ऊँचे हैं क्योंकि खाईयाँ गहरी हैं। इस टकराव में एकस्वरता है। प्रकृति विघ्न उत्पन्न नहीं करती, इस सम्बन्धी प्रसिद्ध चित्रकार पाल कली का उदाहरण देता हूँ। वह कहता है- एक व्यक्ति समुद्री जहाज़ में सफ़र करते समय डैक के ऊपर चहल कदमी करने लगता है। उसके भीतर तथा बाहर कितनी गतियाँ क्रियाशील हैं, इन्हें देखो। सर्वप्रथम उसके शरीर के भीतर हो रहा रक्त प्रवाह, उसके साँसों की गति, चलते-चलते अंगों की गति, जिस जहाज़ पर सफ़र कर रहा है उसकी गति, पानी की लहरों की गति, जो जहाज़ के विपरीत चलती हैं, पृथ्वी का अपने केन्द्र के ईद-गिर्द दौड़ने की गति,, धरती की सूर्य

के आस-पास की गति,, चन्द्रमा द्वारा धरती के ईद-गिर्द परिक्रमा करने की गति। इस समस्त उलझन युक्त कर्मगतियो में व्यक्ति अपने स्थान 'पर इन सबसे निश्चिन्त हो घूम रहा है। उसका गतियों की इस उलझन से कोई सम्बन्ध नहीं। उक्त विवरण से ज्ञात होता है कि एक प्रकार से मनुष्य ब्रह्माण्डीय गतियों का केन्द्र है, परन्तु उसे इसका पता नहीं। अनेक बातों को वैज्ञानिक विधि द्वारा समझाया नहीं जा सकता। गाय के दूध की परख करते समय यह पता नहीं लग सकता कि गाय ने क्या खाया पीया था। कलाकार की रचना गाय का दूध है। कलाकार तथा कला अंतिम वस्तु है, यह कहाँ-कहाँ से गुजरे हैं, दर्शक नहीं जान सकते। विज्ञान समझा नहीं सकता।

प्रश्न - क्या भारत के पुरातन कलाकारों ने कोई नवीन तजुर्बे किए?

उत्तर - कमाल है। भारतीयों ने तो तजुर्बो के अतिरिक्त कुछ किया ही नहीं। समस्त विश्व में स्त्री-पुरुष का कद तथा नैन-नक्श सामान्यतः सुन्दर ही बनाये हुए मिलेंगे। भारतीयों ने स्त्री को स्त्री नहीं बनाया। उनके लिए स्त्री पृथ्वी है। उसका उदर बड़ा है क्योंकि उत्पत्ति अनन्त है, छाती बड़ी है क्योंकि अत्यधिक खुराक की आवश्यकता है। आपको यह कलाकृतियाँ उपहासास्पद प्रतीत होती होंगी, क्योंकि आपको इनके उद्देश्य का बोध नहीं। इन कलाकृतियों में स्थित अर्थ अत्यधिक सूक्ष्म हैं। चार चार भुजाएँ हैं, एक हाथ में शंख, दूसरे में तलवार, तीसरे में ग्रन्थ , चौथे में फूल। यह देवी की चौगुनी क्षमता है। कभी इतिहास में ऐसा नहीं हुआ कि शेर की सवारी करते हुए व्यक्ति युद्ध क्षेत्र में जाये। परन्तु देवी शेर की सवारी कर रही है। यह शुद्ध प्रयोगवाद है तथा सर्वप्रथम इसकी खोज भारतीयों ने की। भारतीय कला यथार्थवाद से हमेशा बचती रही। इसका एक कारण यह है भी है कि हमारे प्राचीन कलाकार स्पष्ट रूप से कहते हैं कि कला परमात्मा की देन है। जब पत्थर, धातु युग में आदमी के पास भाषा हेतु शब्द नहीं थे, पहनने के लिए केवल पत्ते थे, उस समय गुफाओं में रहते हुए उसने अद्भुत चित्र बना लिए थे। चित्रकला भाषा से प्राचीन है। उसने वही आकृतियाँ बनाई जो उसे सुन्दर प्रतीत होती थी। उस समय भी कला आधुनिक कला के समान अर्थ रहित थी। वह थी वास्तव में निर्मल कला। इस में कला का ऐसा अंश नहीं था जिस द्वारा कोई अत्यधिक दीर्घ ख़्याल अंकित किया गया हो या रंग तथा रेखाओं का विशेष सांकेतिक रूप में प्रयोग किया गया हो। कला में अर्थ प्राप्ति होने लगेगी, तब यह गणित विद्या होगी या कारीगरी, जैसे कुर्सी। कुर्सी किसी उद्देश्य हेतु निर्मित की गई है। गणितज्ञ कह सकता है कि कागज़ पर लिखा गणित का फार्मूला सुन्दर प्रतीत होता है, परन्तु किसे? गणितशास्त्री को या सामान्य व्यक्ति को भी? यदि ऐसा नहीं तो उसकी सुन्दरता का क्या फायदा? वह शक्ल जिसका निर्माण कुछ गणनाओं के आधार पर किया गया हो तथा कोई युक्ति प्रकट

करती हो, वह कला नहीं कारीगरी। गणित का फार्मूला कोई प्लास्टिक माध्यम धारण नहीं करता, न ही उसे बनाते समय किसी प्लास्टिक माध्यम का प्रयोग किया गया है।

प्रश्न - कला में परिवर्तन किस प्रकार आते हैं?

उत्तर- कला अपना लिबास बदलती रहती है। वस्त्रों का फैशन बदलता है परन्तु पहनने वाले का वही शरीर तथा वही रूह रहती है। कला-परख की यह धारणा अध्यात्मवादी विचारों के समान है। वह आत्मा को नश्वर नहीं मानते। उनके मतानुसार देह एक वस्त्र है जो नाशवान है। मनुष्य मर जाता है, आत्मा अन्य वस्त्र धारण कर लेती है। आत्मा एक रहस्य है तथा अमर है। वस्त्र विभिन्न प्रकार के होते हैं। इसी प्रकार देश तथा काल के कारण कला में कुछ अन्तर दिखाई देता है। परन्तु इसका विशिष्ट तत्त्व, रूह/आत्मा एक ही होती है। कुछ नहीं बदलता। बाह्य प्रभाव के कारण कला परिवर्तित होती रहती है परन्तु उसका कर्त्तव्य एक ही है, वह है मानवीय सहज आस्वादन की तृप्ति करना। मनुष्य आज भी वही है, जो हज़ारों वर्ष पूर्व था, कला भी वही है, आदि कालिक। कला तथा मानव का सम्बन्ध अमर है।

प्रश्न - साहित्य के वादों से पंजाबी परिचित हैं, उनको कला के वादों के विषय में भी बताओ?

उत्तर - विभिन्न प्रभावों के कारण वाद उत्पन्न होते हैं। कोई व्यक्ति प्रयास पूर्वक वाद नहीं चला सकता, इसी प्रकार विशेष ऐतिहासिक परिस्थितियाँ वादों को जन्म दें, यह भी अनिवार्य नहीं। जैसे ही ख्यालों की एक शृंखला बनी, उसी समय वाद प्रारम्भ हो गया, इस हेतु न तो कोई निश्चित शर्त हैं न ही भविष्यवाणियाँ। जब कोई महान् कलाकार नवीन प्रयोग में सफल हो जाता है तो उसका प्रयोग स्थापित होकर मान्य हो जाता है तथा तब हमारे सामने नवीन वाद प्रकट हो जाता है। वर्ष 1908 में वौकसेल ने बहाक की नुमाइश/प्रदर्शनी में से एक चित्र उठाया तथा उसे क्यूबिज़्म (Cubism) का नाम दे दिया। यह शब्द तो पहले भी विद्यमान था परन्तु तब यह वाद नहीं बना था। बीसवीं शताब्दी किसी न किसी रूप में इस वाद की शिकार रही।

राजनीति से विपरीत, कला जगत् में यह अनिवार्य नहीं कि प्रत्येक वाद को बहुसंख्यक स्वीकार करें। ऐसा होने लगे तो कला का प्रारम्भिक रूप ही बदल जाए। सामान्य व्यक्ति राजनैतिक प्रवाह में तैरेगा। इस दरिया को विपरीत दिशा में मोड़ देना उसके सामर्थ्य से बाहर है। इस प्रवाह को ताकतवर कलाकार ही मोड़ सकता है। तब सामाजिक परिस्थितियों को नवीन नैतिक-मूल्यों की प्राप्ति होती है। वैसे तो कला में इतने वाद हैं कि इनको सूचीबद्ध भी नहीं किया जा सकता परन्तु

दो विस्तृत सिद्धान्त प्रभावशाही रहे हैं। प्रथम है यथार्थवाद। जो कुछ भी आँखों से दिखाई देता है, उसे उसी प्रकार यथार्थ रूप में चित्रित करना। द्वितीय है भाव-वाचक, जो दिखाई देता है, उसे क्या चित्रित करना? यह तो प्रकृति में चित्रित है ही। जो दिखाई देता हे, उसने आपके मन को कैसे प्रभावित किया, यह महत्त्वपूर्ण है न कि दृश्य। इसी प्रभाव को चित्रित करो।

इस विचार को तिलांजलि देनी होगी कि भाव कला बची खुची बुरज़ुआ अभिव्यक्ति है, भाव कला के विषय में यह विचार कमज़ोर है। इसको मानने वाले अनजान भी है, पक्षपाती भी। कला-निरीक्षक इस तरह के एलान नहीं किया करते। यथार्थवादियों ने यह भी कहा है कि भाव-वाचक कला उन कलाकारों की रचना है जो कला शून्य हैं। यूनानियों ने यथार्थवाद को अवरोह कला की संज्ञा दी है। उन्होंने कहा कि कला की उच्चता को स्थान प्रदान करने की जिम्मेवारी यथार्थवादियों की है, जिन्होंने चित्रकारी तथा कविता जैसी कोमल कलाओं को भी पदार्थवाद/द्वन्द्ववाद की तकड़ी में तोला। कला को सीमाबद्ध कर दिया गया, दूषण लगाने शुरू कर दिए। अंततः निपुण एवं योग्य कलाकार इन दूषणों से उकता गए तथा नवीन कलाकारों ने इसे पसंद नहीं किया। इटली के क्लासिकल कलाकारों ने संसार को प्रभावित किया। महान् कलाकार तथा प्रमुख हैं- माईकल ऐंजलो, लिऊनारदो द विन्सी, तिनतोरैतो, पेरूजीनो तथा बोतीचैली। इन्होंने यथार्थवाद में आई रूकावट को भंग किया। प्रचलित परम्पराएँ खण्डित होनी प्रारम्भ हो गई। यथार्थवाद की करंसी का प्रभाव कम हो गया।

प्रसिद्ध फ्रांसीसी चित्रकार डीगा, भाववादी (impressionist) था। उसने अपने कवि मित्र मलार्म को पत्र लिखकर पूछा- अत्यधिक अस्पर्शनीय तथा नवीन विचार होने के बावजूद भी मुझसे श्रेष्ठ कविता क्यों नहीं लिखी जाती?

मलार्म ने उत्तर दिया- कविता विचारों से नहीं, शब्दों से लिखी जाती है।

कलाकार उन योगियों जैसे हैं जो मध्यम मार्ग का चयन नहीं करते। पक्षियों को डारविन की दृष्टि की अपेक्षा वह संत फ्रांसिस, शेख फरीद तथा गुरू नानक देव की दृष्टि से देखते हैं।

प्रश्न- कला तथा कलाकार का सम्बन्ध किस प्रकार निश्चित करोगे?

उत्तर- प्रत्येक रचना में कर्त्ता का दर्शन है, कर्त्ता का पूर्ण व्यक्तित्व अभिव्यक्त होकर ही रचना का निर्माण होता है। हम अनेक बार बच्चे को देखते ही कह देते है- यह उस वंश का है या यह उसका पुत्र है, उसका भाई है। कलाकृति में कलाकार दिखाई देता है। अनेक आलोचक चित्र देखते ही कह देते हैं, यह हुसैन है, यह गुजराल है। हम व्यक्ति की वेशभूषा से भी अनुमान लगा लेते हैं- यह

मुसलमान है, यह हिन्दु है, यह सिक्ख है। इसी प्रकार अनेक कला-पारखी देखते ही जान जाते हैं कि यह चित्र किस काल का है, किस देश तथा किस परम्परा का है।

अंतिम प्रश्न **-** मेरे जैसे अनपढ़ व्यक्ति को सरल रूप से समझाएँ कि चित्रकारी के मूल तत्त्व कौन से है?

उत्तर- अनपढ़ व्यक्ति वह नहीं जिसके पास कोई जानकारी नहीं। अनपढ़ वह व्यक्ति होता है जो जानने से इंकारी हो। इस प्रकार के इंकारी को बेशक नास्तिक कह दो, या अन्य कोई सम्माननीय विशेषण दे दो, आपकी इच्छा। अब सुनो प्रश्न का उत्तर।

रेखा, रंग तथा टोन यह तीन मूल तत्त्व हैं चित्रकला के। रेखा सबसे सीमित तत्त्व है। इसे मापा जा सकता है। रंग में भार होता है, अतः इसे मापा भी जा सकता है तथा तोला भी जा सकता है। रंग पहले लक्षण है, तत्पश्चात् भार, क्योंकि यह प्रकाश भी है। टोन प्रकाश तथा अंधकार का खेल है। अनेक डिग्रियों की टोन काले तथा सफेद के मध्य में आ जाती हैं। कलाकृतियों के महल के निर्माण का आधार ये तीनों तत्त्व ही है।

कला के विषय पर उसकी पुस्तक *आधुनिक चित्रकला की जान-पहचान,* पंजाबी विश्वविद्यालय से 1983 में प्रकाशित हुई। इस समय यह आऊट ऑफ प्रिंट है। 2003 में ऐशिया वियनज़ लुधियाना ने कविताओं की पुस्तक का प्रकाशन किया। वारिस शाह को समर्पण करते हुए हीर में से ये पंक्तियाँ दी गई हैं-

इश्क आशकां दा सिदक साधकां दा
सब्र साबरां शोर दीवानियां दा।
दाग़ लालियां दा सोज़ बुलबुलां दा
चुपचाप रहना मस्तानियां दा।

गुरचरण रामपुरी ने उसके बारे में लिखा, "हरदेव चित्रकार है, मैं बहुत समय से जानता हूँ। कवि हरदेव अभी अकस्मात् ही मिला है। जिस रूप में भी मिले, उससे प्रसन्नता होती है। एक दो रेखाओं से वह नवयुवती, फूल, भिखारी को चित्रित कर देता है, दो स्पर्शों से उसका ब्रश मुस्कान की सर्जना कर देता है। वह संक्षेप में विश्वास रखता है। उसमें सहज तथा सुन्दरता दोनों हैं।"

1966 में जान मोरेको ने लिखा, "गुणवान् हरदेव सिंह को पौलेंड के कलचर-आर्ट मंत्रालय ने वजीफ़ा के आधार पर भारत से यहाँ बुलाया है। वह आधुनिक भारतीय कला गैलरी के निर्माणकर्ताओं में से है। पौलेंड के भिन्न-भिन्न रमणीय स्थलों पर जाकर उसने दो सौ चित्र बनाये। वारसा सहित उसने क्षेत्रीय राजधानियों में अपनी कला का प्रदर्शन कर प्रसिद्धि प्राप्त की। लोज़ तथा तोरुन जैसे कला-प्रेमियों

से मिलकर उन्हें अपनी कला से परिचित करवाया। पोलिश इंडियन फ्रैंडशिप सोसाइटी द्वारा भी उसके चित्रों की प्रदर्शनी की गई जिसकी अत्यधिक प्रशंसा हुई। उसने अपनी नज़्मों को भी प्रस्तुत किया। तत्पश्चात् दर्शकों से उसकी सजीव गोष्ठि हुई।"

1968 में स्वर्गीय फिदा हुसैन तीन दिनों के लिए पौलेंड में अपनी कला प्रदर्शनी हेतु आया। तब वह हरदेव के पास ही ठहरा। दोनों की कला को अत्यधिक पसंद किया गया।

1969 में इल्लस्ट्रेटड वीकली ने सविस्स आर्ट आलोचक मार्क कुहन की टिप्पणी को प्रकाशित किया, "प्रत्येक पेटिंग कलाकार से कुछ अन्य मांगती दिखाई देती है, जैसे हम स्वयं से युद्ध करते हुए, वह युद्ध जीतने में तत्पर हों जिस पर किसी कलाकार ने आज तक विजय प्राप्त नहीं की। हरदेव का युद्ध, ऊपर दिखाई देते स्तर पर नहीं, आत्मिक संग्राम है। हरदेव की कला शांत नहीं। प्रतीत होता है जैसे आदिकाल आर्ट नवीन विधि से प्लास्टिक रूप में आने हेतु अपना खोल तोड़ रहा है। सात वर्ष से वह इटली, हॉलैंड तथा पोलैंड में रह रहा है, पूर्वी अनुभव को पश्चिम की तकनीक द्वारा नवीन सृजना में प्रयोग कर रहा है। कभी ऐसा अनुभव होता है जैसे दूर से कविता तथा संगीत के सुर चलते आ रहे हैं तथा समकालीन आँख इन्हें पढ़ या सुन नहीं रही, देख रही है। यह आदिकाल भारत के आभूषण हैं।"

220 फीट लम्बे कागज़ के बण्डल पर चित्रित वह कला जिसे वह पोलैंड, पैरिस तथा टोरांटो की प्रदर्शनियों में दिखा चुका था, 1973 में टेमज़ थिएटर आर्ट गैलरी कैथम में भी प्रस्तुत की। माईक मकतीअर ने लिखा है- अचेतन का उबाल बाहर चेतन में आ गया है। पूर्वी भावनायें नृत्य करने लगी हैं। संस्कृत, उर्दू तथा पंजाबी के शब्द चित्रों में उतर रहे हैं, वजंत्री हैं, नृत्य हो रहे हैं, कोई दृश्य भी अनुशासनबद्ध नहीं। साथ ही साथ फिल्म दिखाई जा रही है जिसमें पंजाब की संस्कृति तैर रही है। इस फ़िल्म के संगीत निर्देशक हरदेव ही हैं।"

9 नवम्बर 1987 को प्रोफैसर हरबंस सिंह चीफ एडीटर सिक्ख विश्वकोष ने लिखा, "हरदेव के बारहमास को श्रद्धांजलि का नाम देना उचित है। इस प्रकार के अद्भुत आर्ट-वर्क को शब्दों में नहीं बांधा जा सकता। हरदेव को वाणी की रूह तथा सिक्ख-कला की तबीयत की पहचान है। यह रचना सिक्ख धर्म की व्याख्याकारी तथा सिक्ख सौन्दर्य-शास्त्र का स्थिर शाहकार है।"

5 मार्च 2010 को आर्ट क्रिटिक प्रबीना रशीद ने अंग्रेजी ट्रिब्यून में लिखा, "मेरे जैसी गूंगी बहरी के लिए राग का क्या महत्त्व? जब हरदेव के कैनवस के ऊपर 31 रागों के चित्र देखे तो मुझे राग विद्या का बोध हुआ। सुर की भाषा यही है। प्रत्येक

राग तुम्हें निर्वाण जैसी मंजिल पर ले जाता है। घायल बाज़, सिक्खों के घायल काफ़िले देखे।"

डूडलज़ ऐंड सकरिब्बलज़ खूबसूरत अनुभवों की पुस्तक है जो पंजाबी, अंग्रेजी तथा पोलिश तीन भाषाओं में लिखी गई है। बायीं तरफ तीन लिपीयाँ हैं, दायीं तरफ उन भावनाओं की चित्रकारी। फूल नहीं, खिली हुई पत्तियाँ हैं, स्वेच्छा से फूल गूंथ लो या गुलदस्ता तैयार कर लो। इस पुस्तक के विषय में नवतेज भारती का कथन है- "अर्थों की मैटाफिज़िक्स दोबारा लिखनी पड़ेगी। शीर्षक से ज्ञात होता है कि कुछ भी व्यर्थ नहीं होता। उलझनों का वर्णन विचित्र विज्ञान है। जड़ अर्थ की अपेक्षा हँसता गाता पागलपन अति सुन्दर जीवन है। यह पुस्तक बन्धनों को तोड़ती है।" हरदेव का कहना है- जो रेखा खींच सकता है तथा शब्द लेखन का जिसे ज्ञान है, उसके लिए सर्जना अहंकार-यात्रा नहीं। निपुण भाषा-वैज्ञानिक कवि हो, आवश्यक नहीं क्योंकि आर्ट, कौशलता नहीं। निश्चय कर, बैठ कर, निर्णय कर महान् कला का निर्माण नहीं किया जा सकता।

वारसा के चिड़िया घर में समस्त विश्व से लाए गए पिंजरों की प्रदर्शनी लगाई गई। समाचार पत्रों में लिखा, "वारसा शहर की बसंत ऋतु को हृदय में उतारो। तत्पश्चात् पार्क में जाओ। यहाँ आपको भारतीय पक्षियों के लघु चित्रों की प्रदर्शनी दिखाई देगी। इस समायोजन में टरांटो से आए भारतीय कलाकर हरदेव ने रंग भरे हैं। पक्षियों के रहस्यों को विश्व के समस्त कलाकारों ने जानना चाहा है। राजस्थानी कलाकारों ने रेशमी वस्त्र पर लघु चित्रों द्वारा कैसे पक्षी चित्रित कर दिए हैं, व्यक्ति दंग रह जाता है। श्री लंका, बंगला देश, इरान, इंडोनेशिया तथा मलेशिया से आए राजदूतों का स्वागत करने के लिए पहुँचा हुआ वारसा चिड़ियाघर का निर्देशक रेंबीज़िवसकी इस शो के कारण अत्यधिक प्रसन्न हुआ।"

उसके चित्रों, ड्राईंग की संख्या सात हज़ार है। यूरोप तथा अमेरिका में सत्तर प्रदर्शनियाँ दिखा चुका है। पंजाब की लोक-कहानियों की रचना उसने पोलिश भाषा में की है। यह पुस्तक एक लाख की गणना को पार कर चुकी है। वह गर्व से बताता है कि 1979 में प्रथम सिक्ख कॉनफ्रैंस कैनेडा में उसने ही करवाई थी जो बाद में निरंतर होती रही।

हरदेव सिंह सन्तुष्ट नही। वह कहता है, "मैं सफल नहीं हुआ।"

सुकरात के समकाली, पुरातन, यूनान के दानिश्वर ओरेकल ऐट डैलफ़ी के बारें में प्रसिद्ध था कि उसने जीवन में कभी झूठ नहीं बोला। उसको कुछ व्यक्तियों ने पूछा- आज विश्व में सबसे समझदार व्यक्ति कौन है? ओरेकल ने कहा- सुकरात। यह बात सुकरात को बताई गई तो उसने कहा- मुझे पता है कि मुझे कुछ पता नहीं।

उस जैसे अन्य अनेक कलाकार पंजाब में जन्म लें, मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मिलटन का प्रश्न है- जो व्यक्ति प्रतीक्षा कर रहा है, आपका क्या ख्याल है वह कोई काम नहीं कर रहा?

भाई लकशवीर सिंघ

पहली बार मिलने के लिए डॉ. तारिक किफाइतुल्ला (अध्यक्ष, फ़ारसी विभाग, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला) सहित परिवार के साथ जब चैल की तरफ 31.10.06 को चले तो चलने से पूर्व एक बार फिर से लकशवीर सिंघ के बेटे कृष्णवीर सिंघ को फोन किया ओर पूछा- आपकी कोठी कैसे ढूंढेगें। उसने हँसते हुए कहा- कोई कठिनाई नहीं आएगी। हमारे पास पता 1969 में प्रकाशित हुई फ़ारसी की पुस्तक ***मुनाजाति बामदादी*** के रचयिता का था, केवल इतना- वीर निवास, शिमला हिलज़, चैल।

वहाँ पहुँच कर पता चला कि नाभा रियासत का 88 वर्षीय यह सरदार आधे चैल का स्वामी है। दोपहर डेढ बजे उनके कमरे में प्रवेश किया। हवेली का केन्द्रीय हॉल 25x25 फीट भाई साहिब का ड्राईंग रूम भी हे, बैडरूम भी। दो सोफा सेट हैं तथा दीवार के साथ लगे हुए पलंग पर भाई लकशवीर सिंह जी लेटे हुए थे। हमे देखकर पलंग पर बैठ गए तथा खड़े होने का प्रयास करने लगे। भुजाएँ भार न उठा सकी तो मैं ओर तारिक सहारा देने के लिए शीघ्रता से आगे आए। हमने सोचा शायद गुस्लखाने में जाना होगा। जब हमने चरण स्पर्श किए तो उन्होंने खड़े खड़े ही आशीर्वाद दिया। मैंने पूछा- किस तरफ जाना है भाई साहिब? कहा- किसी तरफ नहीं। अब धीरे से बिठा दो। बिठा दिया। फिर पूछा- भाई साहिब, आप खड़े क्यों हुए थे? कहने लगे- इतने बड़े मेहमान इतनी दूर से आए हों तो मेज़बान उठेगा भी नहीं? हमारे घर में ऐसी परम्परा नहीं है कि मेहमान, घर के अन्दर कदम रखे, मैं खड़ा होकर सत्कार करने के योग्य न रहूँ, ऐसा होने से पहले महाराज मुझे अपने पास ही बुला लें।

बहुत समय पहले पढ़ी गई जन्मसाखी का दृश्य याद आया जो इस प्रकार हैः

गुरू नानक देव जी लम्बी यात्रा के पश्चात् वापिस आए तो अपने घर नहीं गए। राय बुलार की हवेली में पहुँचे। राय जी चारपाई पर बैठे गुरु जी का इंतजार कर रहे थे। आयु अधिक हो चुकी थी। महाराज को देखते ही चारपाई से उठने का प्रयास करने लगे परन्तु उठा न गया। बाबा जी तेज़ कदमों से आगे आए तथा राय बुलार जी के घुटनों पर दोनों हाथ रखे।

राय ने कहा- बाबा ज़ुल्म न कर मेरे ऊपर। आपको आमंत्रित किया था, ताकि कदम चूम सकूं। हमारी देह को हाथ क्यों लगाया? बाबा हमें मारो मत।

महाराज ने कहा- राय जी, आप वरिष्ठ हो। हम आपकी प्रजा हैं। राय जी बोले- बाबा जी मुझे बख्शो तथा उस करतार से भी बख्शवाओ। गुरू जी बोले- आप

तो आदिकाल से बख्शे हुए हो। राय ने फिर से कहा- मुझ पर अपनी भी थोड़ी कृपा करो बाबा जी या बताओ मैं कृपा का अधिकारी नहीं। बाबा जी ने कहा- राय जी, जहाँ हम वहाँ आप। राय ने कहा- इच्छा तब पूर्ण हो बाबा जी यदि माथा चरणों में रखने की आज्ञा मिले। राय बहुत अधीर हुआ तो बाबा जी की आज्ञा से सिर चरणो 'पर रखा तथा बहुत रोया। बाबा जी ने आशीर्वाद दिया।

तारिक तथा मैं सतत अनुभव करते रहे कि जितनी आव-भगत तथा सत्कार ये परिवार कर रहा है, हम उसके उतने अधिकारी नहीं है। उनसे तो बहुत कुछ सीखने आए हैं। शिक्षार्थी कितने सम्माननीय होते हैं यह इस हवेली में आकर पता चला। कालीदास मेघदूत से रूबरू होकर कहता है-

"मार्ग में कैलाश पर्वत आयेंगे हे मेघ। ध्यानपूर्वक नीचे देखते हुए जाना। एक शिला ऐसी है जिस पर शिव के चरणों के निशान अंकित है जो स्पष्ट दिखाई देते हैं। इस शिला को प्रणाम कर पर्वत की परिक्रमा करना। हो सकता है शिव की तलाश में पार्वती इधर-उधर भटकती दिखाई दे जाये। यदि उन्हें देखो तो मूर्खों के समान उनके सिर पर मत मंडराना। शीघ्र ही बर्फ बनकर उनके चरणों में बिछ जाना। हाथों से सर्पकंगन उतार कर जब शिव पार्वती माता को पर्वत पर चढ़ाने के लिए हाथों का सहारा देने लगें, तब गौरी माँ के चरणों के नीचे की सीढ़िया बन जाना। तब तुम ऐसा करना हे मेघ।"

इस श्लोक में पार्वती माँ तालिब-ए-इलम (विद्यार्थी) है तथा शिव, विद्या मार्तण्ड। कालीदास के हृदय में विद्यार्थी के लिए उतना सम्मान है जितना पार्वती माँ के लिए। वीर निवास में विद्या का दरिया प्रवाहित हो रहा है। हम यहाँ स्नान करके वापिस पहुँचे हैं। वापिस जाते समय बार-बार मन में यह ख्याल आ रहा था- यदि इस नेक व्यक्ति के चरण न छूए होते, ये संसार से विदा हो गए होते तब कितने अभागे होते हम। पता नहीं चलता अदृष्ट शक्तियाँ कैसे कैसे मौके बनाती हैं। जैसे 1782 में जन्म लेने वाले भाई रत्न सिंघ भंगू को कुछ पता नहीं था कि सिक्ख इतिहास के महान् ग्रन्थ की रचना करनी होगी। एक कारण उत्पन्न हुआ तथा ग्रन्थ को 1809 में प्रारम्भ कर 1841 में पूर्ण किया। हस्त लिखित में पाठक को शांतचित्त, अद्वितीय शायर, अरबी तथा फारसी विद्वान् के दर्शन आंशिक रूप से होंगे परन्तु पहले उनसे मिलने के कारण का वर्णन अपेक्षित है।

एक वर्ष पूर्व मित्र के बेटे की शादी में समय से मैं आधा घण्टा लेट पहुँचा परन्तु वहाँ सरदार सवर्ण सिंघ बोपाराय (वाईस चांसलर, पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला) तथा उनकी पत्नी के अतिरिक्त वहाँ कोई मेहमान पहुँचा नहीं था। यदि मेहमान ज्यादा होते तो मैं बोपाराय को अनदेखा कर सकता था परन्तु अब तो फंस

गए। सत् श्री अकाल कहकर वहीं उनके समीप बैठ गया। बातें करते हुए उन्होंने बताया- एक ग्रन्थ अपने पास आया है। बहुत बड़े विद्वान् एवं शायर ने कभी जपुजी साहिब का फ़ारसी नज़्म में अनुवाद किया था। ईरान के शाह ने इसका अध्ययन किया तो इतना पसंद आया कि एक लाख दीनार ईनाम, आवागमन का खर्च तथा शाही मेहमान के रूप में सत्कार का निमंत्रण भेजा। नम्रतापूर्वक शायर भाई लकशवीर सिंघ ने धन्यवाद करते हुए इस निमंत्रण को अस्वीकार कर दिया। इस ग्रन्थ का प्रकाशन हम विश्वविद्यालय द्वारा क्यों न कर दें?

मैंने कहा- इस सूचना में कितनी सच्चाई है, क्या पता। हमें इस सम्बन्धी विद्वानों से विचार-विमर्श करना चाहिए। उन्होंने अगले दिन ही मुझे मूल पुस्तक भेज दी। मैं प्रोफैसर जी.एस.रियाल के पास पुस्तक लेकर गया। मेरे पास पुस्तक कहाँ से आई, इसका क्या महत्त्व है, कुछ नहीं बताया। केवल इतना कहा- यह एक पुस्तक हाथ लगी है। देखो इसमें कुछ है भी या नहीं। उन्होंने उसे रख लिया। पाँच छह दिनों के पश्चात् गया। मैंने बात शुरू नहीं की, उन्होंने कहा तुम जो पुस्तक देकर गए थे ***मुनाजाति बामदादी,*** विलक्षण रचना है। बहुत समय पश्चात् कुछ अच्छा पढ़ने को मिला। तुम्हें पता है कि मैं नितनेम नहीं करता।* बैठ कर कभी भी जपुजी का पाठ लगातार नहीं किया। मैं तो एक-एक पंक्ति, कभी कभी एक शब्द पर अनेक दिन व्यतीत कर देता हूँ। फ़ारसी में लिखी इस दीर्घ नज़्म का पाठ मैंने सतत किया। इसकी भाषा सामान्य फ़ारसी नहीं है। इसे हम मखमली फ़ारसी कहते हैं। हिन्दुस्तानी क्लासिकल फ़ारसी इतनी सूक्षम नहीं है। इस नज़म में प्रयुक्त भाषा ईरानी फ़ारसी है। विशाल अनुभव में से अभिव्यक्त होने वाली शायरी है। अनजान व्यक्ति तो यह जान ही नहीं पाएगा कि यह किसी अन्य ग्रन्थ का अनुवाद है। यह स्वयं में स्वतन्त्र और सम्पूर्ण है।

यह सुनकर मैंने कहा- अपने विचार लिख कर दे दीजिए। उन्होंने लिख दिए। फिर मैं तारिक साहिब के पास गया। उनको पुस्तक की पृष्ठभूमि के विषय में कुछ नहीं बताया। पुस्तक देकर कहा- प्रोफैसर साहिब इसे देखना कि इसमें कुछ उपयोगी है भी या नहीं। चार दिनों पश्चात् उनका फोन आया, कहा- आप आओगे या मैं आऊँ? दफ्तर में बैठा हूँ। मैं उनके पास गया। उन्होंने कहा- इस पुस्तक की नज़म, ईरान की फ़ारसी भाषा में लिखी गई है। इसे हम ईरानी रेशम कहते हैं। हिन्दुस्तानी, फ़ारसी सीज़नड सागवान है, जिससे टिकाऊ सुन्दर फर्नीचर बनता है। ईरानी फ़ारसी में बच्चों की मासूम भाषा, सदृश कोमलता है, लताओं तथा पुष्पों जैसी

---

* नितनेम का अर्थ है श्री गुरबाणी का हर सुबह शाम पाठ।

नज़ाकत। शायर का ख्याल तथा दर्शन अद्‌भुत एवं विस्मित करने वाले हैं। यह प्रकाशित होनी चाहिए। मैंने उनसे अपनी राय लिखने के लिए कहा तो उन्होंने लिख दी। जब पूछा- आप तथा आपका फ़ारसी विभाग इसका गुरूमुखी लिपयान्तरण तथा अनुवाद पंजाबी में करने हेतु मान जाएगा? उन्होंने कहा- यदि हमे यह नेक कार्य मिल जाए तो हमें और क्या चाहिए? जितने समय तक इस पर काम करेंगे वह पवित्र इबादत होगी। मेरी छात्राएँ मनदीप कौर तथा दलजीत कौर इसमें सहायता करेंगी। इस काम को पूरा होने में छह मास का समय लगा। कम्पयूटर प्रिंट ले लिया गया। यह हमारा सौभाग्य था कि शायर अभी जीवित एवं स्वस्थ थे। सोचा प्रैस में जाने से पूर्व इस पाण्डुलिपि का अध्ययन यदि लेखक कर ले तो यह रचना ज़ीरो डिफेक्ट हो जाएगी। हमारा आत्मविश्वास बनाए रखने के लिए भी यह बात सहायक सिद्ध होगी। पुस्तक पर लिखा पता- वीर निवास, चैल। पत्र भेज दिया। फोन नम्बर नहीं था। यह पता भी बहुत पुराना था। पता नहीं उत्तर आएगा भी या नहीं। एक मास पश्चात् उत्तर आया, भाई लकशवीर सिंह का पत्र। हस्तलिखित कांपते हाथों से लिखा। धीरे-धीरे उसे पढ़ा। लिखा था- आयु अधिक हो गई है। ठीक ढंग से लिखा नहीं जाता। आँख का आप्रेशन हुआ है। अभी ठीक नहीं हूँ। इस समय मत आना। अभी पाण्डुलिपि मत भेजना। छह मास पश्चात् फिर से पत्र लिखा तथा निवेदन किया कि अपना फोन नम्बर दे दीजिए। मैंने अपने फोन नम्बर पत्र में लिखकर भेज दिए।

दस दिन के पश्चात् उनके छोटे बेटे कृष्णवीर सिंघ का फोन आ गया। चार फोन नम्बर दिए तथा कहा- पिता जी अब ठीक है। जब इच्छा हो तब आ जाना। आने से पहले हमें फोन कर देना। बोपाराय जी से बात की तो उन्होंने कहा, "1 नवम्बर 06 को चलेंगे तथा मिलकर 2 को वापिस आ जायेंगे।" "मैंने कहा- आप आ जाना, हम एक सप्ताह वहाँ रहकर कार्य समाप्त करके वापिस आ जायेंगे। परन्तु मेरे पास वी.सी ऑफिस से फोन आ गया कि किसी आवश्यक काम के कारण बोपाराय जी जाने में असमर्थ हैं। मैंने रियाल और तारिक को फोन किया तथा चलने के लिए कहा। रियाल साहिब को इसी दिन 1 नवम्बर 06 को साहित्य शिरोमणि का स्टेट पुरस्कार मिलना था, वह न जा सके। मैं तथा तारिक डेढ बजे चैल पहुँचे। जिस स्थान पर टैक्सियाँ रूकती हैं, वहाँ एक युवक शीघ्रता से हमारे पास आया ओर कहने लगा- पटियाला से? मैंने कहा- कृष्णवीर जी?

खाना खाया, चाय पी, तब भाई साहिब का दोपहर के पश्चात् सत्र प्रारम्भ हुआ। एक घण्टे के आस-पास हाल-चाल और सवाल पूछते रहे। उनके मेज़ पर से पाण्डुलिपि उठाते हुए मैंने कहा- शुरू करें भाई साहिब? उन्होंने कहा- इसे जहाँ से उठाया है, वहीं रख दो। कोई जल्दी नहीं है हमे। मेरी पुस्तक है न? मैं बेचैन नहीं

हूँ तो आप क्यों बेचैन हैं? आज कोई काम नहीं करना। मैं आपको बताऊँगा मैं क्या हूँ, आपसे पूछूंगा कि आप क्या हो। यदि मन किया तो कल काम करेंगे, यदि न मन किया तो कल भी नहीं। आपने कभी देखा है हिरणों को घास संग्रहित करते हुए? तो भी भूख से नहीं मरते।

आपका क्या नाम है प्रोफैसर साहिब? उत्तर- जीतारिक। उन्होंने हँसते हुए कहा- आप तारिक कैसे हो? तारिक (संसार से विरक्त) तो मैं हूँ। सत्रह वर्ष हो गए मैं इस कोठरी में से बाहर नहीं निकला। कार मेरे दरवाजे के बिल्कुल सामने आती है। रथ तथा पालकी क्या मंगवा नहीं सकता? बस, बहुत देख लिया संसार। आधा चैल मेरा है। बच्चा बच्चा मुझे जानता है। किसी से पूछोगे कि भाई लकशवीर कौन है, जानते हो? सब कहेंगे, जानते हैं। फिर पूछो- कभी देखा है? किसी ने नहीं देखा। अतः वास्तव में तारिक मैं हूँ, आप केवल नाम से तारिक हो। चैल की भी कहानी सुन लो। महाराजा भूपेन्द्र सिंघ ने वायसराय की पत्नी से छेड़खानी कर दी तो सरकार विलायत ने शिमले में उनके प्रवेश को निषिद्ध कर दिया। उन्होंने चैल नामक प्रदेश आबाद करने का निर्णय किया। जितनी ज़मीन उन्होंने खरीदी, उतनी ही मैंने खरीद ली। बस ऐसे ही खरीद ली। यह बताने के लिए तुम तो पटियाला रियासत के महाराजा हो। तुम्हारे जितनी ज़मीन तो नाभा रियासत का एक सामान्य सरदार भी खरीद सकता है। दोनों रियासतों के भाईचारक ईर्शा पुराने समय से चलती आ रही है। बस ऐसे ही मूर्खता पूर्ण निरर्थक हठ हुआ करते थे। बताओं इन बातों में क्या रखा था? एक तरफ मेरी रुचि उत्तम फ़ारसी साहित्य अध्ययन में थी, दूसरी तरफ ऐसे निरर्थक कार्य।

परन्तु जब भी अपनी ज़मीनों को देखने के लिए आता, तो पर्वत तथा पहाड़ी स्त्रियाँ अत्यधिक सुन्दर लगतीं। कभी कभी हिरण का शिकार करता। हिरण कौन सा छोटे होते थे? आज के गधे की अपेक्षा अधिक बड़े होते थे उस समय के हिरण। तब से यहीं रहने लगा।

नाभा से यहाँ, या अन्य कहीं ओर जाने के लिए घोड़े का प्रयोग करता था। घोड़ा मेरा बहुत ही सुन्दर था। रॉयल उसका नाम था। उसके कान इस प्रकार एक दूसरे जुड़े थे कि गुबंद बना होता था। कान के पिछली तरफ लघु आकार की भौरी थी। विश्वास प्रचलित था कि भौरी वाला भाग्यशाली होता है। टब में दूध डालकर उसमें गाजरें धो कर डाल देता उसके खाने के लिए। स्वयं छोलिआ काटकर लाता, धो कर चारपाई पर रखता, एक एक बुरकी अपने हाथों से खिलाता। बहुत ताकतवर था। उसकी दौड़ विलक्षण थी। चढ़ाई चढ़ते समय भी मैं उसकी लगाम खींच कर रखता... कड़ कड़... कड़ कड़ करता हुआ वह उड़ना चाहता। उसे इस बात से

एतराज था कि मैं लगाम खींच कर क्यों रखता हूँ। फूंकारे मारता, पैर पटकता, पूंछ तेज़ी से हिलाता। तौबा, बाबा, घोड़ा कहाँ, बाज़ था बाज़। एक दिन मैं उसे ऊपर की ओर जाती हुई पंगडंडी पर ले गया। चढ़ता गया हमेशा की तरह तीखी चाल। एक स्थान पर जाकर रूक गया। मैं तो ठहरा शायर। दृष्टि आकाश की तरफ तथा ख्याल आकाश से पार। यह तेज़-तरार हठी घोड़ा रूक क्यों गया? यह जानने के लिए इधर-उधर देखा तो दहल गया मैं। बायीं तरफ दीवार के समान सीधा खड़ा पहाड़। दायीं तरफ दौ सो गज़ गहरी खाई। किसी तरफ घोड़े की काठी से नीचे उतरने का रास्ता नहीं। अच्छी नसल के घोड़े को जब पता चल जाता है कि पीछे मुड़ने के लिए कोई रास्ता नहीं, वह वहीं रूक जाता है। मुश्किल से तीन फीट चौड़ी पंगडंडी। घोड़ा खड़ा था चुपचाप। मैंने सोचा दोनों को मरना नहीं है, हम में से एक तो बचे। मैंने उसकी गर्दन के बालों को पकड़ा, लटक कर गर्दन से नीचे उतर गया। उसने एक पाँव ऊपर उठा लिया। मैं उसके पेट के नीचे से सरकता हुआ उसकी पिछली टांगों तक पहुँच गया। उसने पिछली टांग उठा दी। मैं पीछे निकल गया। स्वयं पीछे हटता गया तथा घोड़े को वापिस बुलाना शुरू किया। वह धीरे-धीरे उलटे पैर पीछे की तरफ चलने लगा। चलते चलते जब ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ से वह मुड़ सकता था, वहाँ से हम वापिस आ गए।

एक तरफ इतना हठी कि रॉयल रोके से नहीं रूकता था, परन्तु यदि मुझे कोई रास्ते में सत् श्री अकाल कह देता, वहीं रूक जाता। उसे पता होता कि सरदार ने भी तो उसका हाल-चाल पूछना है। नीचे की ओर सिर झुकाये उतने समय तक वहीं खड़ा रहता जब तक चलने का संकेत न मिलता।

एक दिन की घटना बताता हूँ। सैर से वापिस आ रहा था तो पाँच चार सौ व्यक्तियों का समूह देखा। घोड़ा रोका, देखें क्या हो रहा है। कांग्रेस का एक लीडर होता था, पृथ्वी सिंह आज़ाद। उसने स्वतन्त्रता सेनानियों का सत्कार करना था। 1950 की बात है यह। स्वतन्त्रता सेनानियों को सम्मानित किया जाने लगा। नाम बोला जाता- उसके बारे में बताया जाता- जिस प्रकार गुरू अर्जुन देव जी ने कष्ट झेले, इस भाई ने भी ऐसे ही कष्ट सहे। गले में हार, सम्मान। अगले व्यक्ति का नाम लिया जाता- इसने बाबा दीप सिंह के समान रेखा खींच दी थी। हार, सम्मान। आज़ाद की नज़र मुझ पर पड़ी तो कहा- आ जाओ भाई साहिब जी, मंच पर आ जाओ। आपके विचार सुनने हैं। आओ। मैंने कहा- मंच पर तो मैंने आना नहीं, यदि गुस्ताखी न समझो तो यहीं रॉयल की पीठ पर बैठे ही कुछ कहना चाहूँगा? उन्होंने कहा- जी सत्य वचन। कहो। आपके वचन हमारे लिए बहुमूल्य हैं।

मैंने कहा- ऐसा होना सम्भव है कि अभ्यास करते करते कोई युवक इतना महान् धनुर्धारी हो जाए कि ध्रुव तारा बींध दे। हो सकता है यह, परन्तु उसका नाम गुरू गोबिन्द सिंघ नहीं हो सकता। महान् शख्सीयतों के नाम कैसे लिए जाने चाहिए, यदि आपको नहीं पता तो फिर संसार को कैसे पता लगेगा? आप स्वतन्त्रता सेनानियों को सम्मानित कर रहे हो या अपमानित? इन्होंने अच्छे काम किए है, इनका सम्मान होना चाहिए, यही मेरी कामना है, परन्तु इस समूह को यह बोध नहीं कि क्या हो रहा है? मुझसे फटकारने के हकदार नहीं हैं आप। स्वयं को हवेली में जाकर धिक्कारूँगा कि मैं अपमानजनक बातें सुनने के लिए वहाँ क्यों रूका। यह बातें बहुत समय तक मुझे बेचैन करती रहेंगी। पन्नू साहिब, देखा? इस घटना को घटित हुए 56 वर्ष हो गए आज। मुझे आज तक याद है। सुना दी आपको। भाव अभी तक मुझे बेचैन कर रही है यह घटना। मैंने क्यों रूकना था वहाँ। अपने रॉयल पर बैठा ही दौड़ता रहता।

रॉयल बीमार हो गया एक दिन। बहुत उपचार एवं उपाय किए। वैद्यों की दवा-दारू की क्या कोई कमी थी? परन्तु दर्द कम नहीं हो रहा था। मैं समझ गया अब दोनों के बिछुड़ने का समय आ गया है। जब किसी बात पर कोई वश न चले, तो हम वहीं करते हैं जो मैंने किया। बच्चों से कह दिया- मुझे मत बुलाना, चाय-पानी मत पूछना। मैं सुखमनी साहिब की पोथी लेकर उसके सिर के समीप बैठ गया तथा पाठ करने लगा। पाठ करते हुए उसका सिर सहलाता गया। उसका दर्द कम होने लगा। परन्तु साथ ही आँखें बंद होने लगीं। चलो अच्छा हुआ। बिछुड़ना है तो बिछुड़ जाए। तड़पता हुआ नहीं देखा जाता। तब उसने मेरी गोद में अंतिम सांस ली।

आप सोचते हो कि गड्ढा खोदा तथा रॉयल को खसीटते हुए उसमें दबा आए। हमारे यहाँ ऐसी परम्परा नहीं है। उसकी अर्थी को कंधों पर उठाकर दफन करके आए हम। देख लो भाई। दायें, बायें ऊँचाई है या ढलान। कितने व्यक्ति लगे होंगे इस काम को करने में तथा कौन कौन सी कठिनाई समक्ष आई होगी इसे पहाड़ी से उतारते हुए? तो क्या हुआ? बिजली की चमक के समान जो मुझे अपने ऊपर बिठाकर पहाड़ी पर चढ़ता था, वह धरती में शान से समाएगा।

कुत्ते रखता था मैं। कुत्तों को खुद बाँहों में उठाकर दफन करने जाता था।

वह देखो मेरा डाबरमैन राल्फ। दिखाई दे रहा है? आँखों तथा खाल की चमक देखो। जंजीर खुल गई एक दिन। काबू में न आया। कोई जंजीर को पकड़ कर जैसे ही समीप जाता तो काटने को आता। दौड़ता दौड़ता वहाँ जाकर बैठ गया उस दो मील दूर ऊँची पहाड़ी पर। भौंकता रहा, नीचे नहीं आ रहा था। बच्चे मेरे पास आकर कहने लगे- पिता जी, आप ही कुछ करो। सहारा देकर मुझे वहाँ ले गए जहाँ

रॉल्फ मुझे देख सकता था। यह जो लाठी अभी मेरे हाथ में है, उसे ऊपर उठाते हुए ऊँची आवाज़ में कहा- मार खानी है रॉल्फ? जल्दी नीचे आओ। मैं प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

लाठी देखकर कभी कोई भागकर पास आता है? लाठी तो जानवर को वहाँ से भगाने के लिए होती है। परन्तु रॉलफ को मैं तथा मुझे वो जानता था। वह पंगडंडी से नहीं अपितु सीधा पहाड़ से नीचे की ओर दौड़ा। मैं डर गया कहीं फिसल न जाये। आकर मेरी गोद में मुँह रखकर सिसकने लगा। मैंने कहा- मुझे पता है बेटा, मैंने कई दिनों से तुमसे बात नहीं की। परन्तु देखो तो सही मैं अब ठीक नहीं रहता। मैं कई दिनों तक अपने कमरे से बाहर नहीं निकल सकता। बड़ों की खामोशी को बुरा नहीं मानते। फिर मैंने बच्चों से कहा- लाओ जंजीर लाओ। कोई भी जंजीर से बांध ले, काटेगा नहीं। एक बच्चे ने जंजीर बांध दी। वह चूं चूं करता रहा। पूँछ हिलाता रहा। मेरे अतिरिक्त किसी ओर से उसने बिस्कुट नहीं खाए उस दिन। जब मैं अनेक दिनों के पश्चात् सफ़र से वापिस आता तो अपने कुत्तों को सफ़ की बातें सुनाता था। यदि नहीं सुनाता तो वह भौंकते रहते।

प्रोफ़ैसर साहिबान! करनी तो थी पुस्तक के बारें में बात। करने बैठ गया इधर-उधर की बातें।

पाँचवी कक्षा में मुझे अनुभव होने लगा था कि मैं कभी फ़ारसी का शायर बनूंगा। मौलवी तसनीम जी से फ़ारसी सीखी। मेरी तरफ अंगुलि से इशारा करते हुए कहते थे- काठ का ये उल्लू फ़ारसी का महान् शायर होगा एक दिन। आठवीं के सर्टीफिकेट के ऊपर हैडमास्टर की हस्तलिखित पंक्ति इस प्रकार है- यह तालिब-ए-इलम जवां होकर फ़ारसी का अज़ीम शायर हो, मेरी तमन्ना है। आमीन। हस्ताक्षर। आप भी कहते हो, अन्य अनेकों ने भी कहा कि मुझे इतनी सुन्दर फ़ारसी कहाँ से प्राप्त हुई है। अचानक नहीं मिली। कभी ईरान नहीं गया। मेरे बड़े भाई ने एम.ए फ़ारसी में गोल्ड मैडल प्राप्त किया है। समस्त आयु फ़ारसी के तीन वाक्य भी सही नहीं लिख सका। मेरे पास आ जाता ठीक करवाने के लिए। मुझे कभी कभी ऐसा प्रतीत होता कि शायद मैं पूर्वजन्म में ईरानी होऊँ। शब्दों का क्या है? शब्दों का भण्डार तो डिक्शनरी में है। कौन पढ़ता है डिक्शनरी? अरे भाई, शब्दों की पंक्तियों को भाषा नहीं कहते। पहले इसे ख्याल दो। फिर इसमें रंग भरो, फिर सुगन्ध भरो, फिर संगीत भरो। यह सब समाहित करना पड़ता है शब्दों में, तब कोई दानिश्वर फकीर हाफ़िज शीराज़ी कहलाता है। फ़ारसी के अतिरिक्त अन्य किसी विषय में मेरी रुचि नहीं थी। गणित में कमज़ोर था। प्रयत्न करता तो गणित भी सीख लेता। परीक्षा में देखता कि गणित के अत्यधिक प्रश्न हल करने आते हैं तब भी 35-40 अंकों से अधिक अंक

न आए, इतने प्रश्न हल कर आता। सोचता यदि अंक अधिक आने लगे तो पिता जी ने कहना है कि गणित ही पढ़ो। मैं सोचता, तब फारसी में शायरी कौन करेगा?

मैंने पूछा- भाई साहिब, आपकी नज़्म को बार बार पढ़ने से यह लगा कि आप पर भाई नन्द लाल जी का प्रभाव हो?

उन्होंने कहा- नहीं जी। भाई नन्द लाल जी बहुत बड़े हैं, उन पर हाफ़िज शीराज़ी का प्रभाव है। मुझ पर शेख साअदी का प्रभाव है। ग़ैबुलग़ैब के जहान् में शीराज़ी की पदवी शेख साअदी की अपेक्षा अत्यधिक उच्च है। उनके जैसी किस्मत किसे प्राप्त होगी? भाई नन्द लाल महान् लोगों के शिष्य थे, बहुत महान् लोगों के, कलगीधर हज़ूर गुरु गोबिन्द सिंघ के चरण छूए हों जिसने, कौन उस जैसा होगा?

तो भी भाई साहिब, बहुत सादगी तथा कोमलता है आपकी वाणी में।

उन्होंने कहा- आपकी पीढ़ी फास्टफूड पीढ़ी है। तत्काल। हम दीवार में बनी मिट्टी की काढ़नी के समान हैं, सहज। गैस ऊपर गर्म किया हुआ दूध, काढ़नी में गर्म किए हुए दूध जैसा कभी हो सकता है? काढ़नी के दूध में कुदरती मिठास आई तथा देखो धीरे धीरे दूध ने आग से गुलाबी रंग भी चुरा लिया। रक्त, दूध में बदल जाता है परन्तु समय बहुत लगता है इसे। बेटी जन्म लेती है, खेलती है, जवान होती है, फिर वर ढूंढते है, फिर संतान जन्म लेती है। इतने समय तक रक्त प्रतीक्षा करता रहता है कि मैं कभी दूध बनूं। थोड़ा सा भाग्यशाली भाग ही दूध बनता है, सारा नहीं। समय तो लगता है। हो जाती है करामात, परमात्मा की बंदगी कारण।

"आपके विचार अनुसार सुलतानपुर के मोदीखाने में गुरू नानक जी तेरह से आगे की गिनती करनी भूल गए थे? अरे भाई, जो स्वयं बेहिसाब हो उसने हिसाब से अपना पीछा छुड़ाना था, छुड़ा लिया। जो लाखों आकाश तथा लाखों पाताल का स्वामी हो, उसे कौन बांध सका गणना में?

"ऐसे ही न आ गई शीरी ज़ुबां फ़ारसी मुझे। दसवीं कक्षा तक जूतों से लेकर महाराज की कलगी तक मैंने फ़ारसी के शेयर लिख-लिख कर सजाये। शेयर लिखता। महाराज के समक्ष प्रार्थना करता- बाबा जी थोड़ी सी फ़ारसी की नज़्म दे दो। इतनी तो नहीं मांगता जितनी आपने भाई नन्द लाल जी को दी थी। थोड़ी सी ही दे दीजिए। आपके सामने प्रोफैसर साहिबान, जो यह बूढ़ा बैठा है, इसे बचपन में ही पता चल गया था कि बड़ों से कैसे मांगते हैं। महाराज की इतनी कृपा हुई कि उन्होंने फ़ारसी की नज़्म तो दी ही, साथ में अरबी भी मेरी झोली में फेंक दी। कोई विशेष प्रयास नहीं करना पड़ा।"

पवित्र कुरान कितना याद है तारिक साहिब? उत्तर- जी केवल नमाज़ पढ़ने वाली आईतें। भाई साहिब ने आह भरी- आयु अधिक होने के कारण डरता हूँ भाई।

बड़े दावें करने अब उचित नहीं। कुरान को इतनी बार पढ़ा कि सारा याद हो गया था।

"मैं कभी किसी के दर पर याचक बनकर नहीं गया। आने वाले का सम्मान किया सामर्थ्य अनुसार। यह भी नहीं कि भीड़ एकत्रित होने दूँ। पहने समय निश्चित करो, काम बताओ, फिर देखेंगे। एक विद्वान् आ गया यहाँ। बहुत वर्ष बीत गए इस बात को। मैंने सबसे पहले यही पूछा कैसे आ गए तुम यहाँ? उसने किसी नेक व्यक्ति का नाम बताया। फिर उसने एक पुस्तक दी जिसका नाम था ***गुरू नानक का शाहकार।*** मैंने उससे कुछ पूछा। वह व्यक्ति मुझे बेकार ही लगा। एक भी वाक्य उसके पास ऐसा नहीं था जिसका कोई महत्त्व हो। मैंने पूछा- इस पुस्तक का मैं क्या करूँ? उसने कहा- जी रीविऊ लिख दीजिए। आप बहुत प्रसिद्ध है। मैंने कहा- हम फकीर जिस शाही मार्ग पर वर्षो से चल रहे हैं, उस तरफ जो पंगडंडी जाती है, तुम्हें वह नहीं मिली अभी। पुस्तक सहित भाग गया।

"एक ओर दम्पत्ति आए मेरे पास। विश्वविद्यालय से प्रोफैसर तथा उनकी पत्नी। पत्नी किसी कॉलेज में पढ़ाती थी। बातें करते रहे। मैं सुनता रहा। फिर मैंने आने का कारण पूछा। प्रोफैसर ने बताया- मैं जपुजी पर शोध कर रहा हूँ। आपसे कुछ जानना चाहता हूँ। मैंने पूछा- जपुजी का पाठ सही ढंग से करना आता है? उसने कहा- हाँ जी। मैं कोई बात करने ही वाला था कि उसकी पत्नी समझ गई। आपको पता है मैं धीरे-धीरे बातें करता हूँ। बीच बात में कोई अन्य शामिल हो सकता है। मैं अवसर देता रहता हूँ। वह कहने लगी- नहीं जी। हम दोनों को तो कुछ भी नहीं आता। हम तो आपसे सीखने आए हैं। यदि कुछ आता तो फिर यहाँ क्यों आते? बहुत हँसे। बचाव कर लिया पत्नी ने अपने पति का।

"मैं चैल से नाभा गया। एक दिन मन में विचार आया, चलो तलवण्डी साबो जाकर माथा टेक आते हैं। महाराज के वचन हैं कि गुरू की काशी है। यहाँ आकर बैल बुद्धि अज्ञानी भी सम्माननीय विद्वान् बन जायेंगे। सोचा, अज्ञानता दूर करने के लिए यह तीर्थ-यात्रा अनिवार्य है। चलते चलते पहुँच गए तलवण्डी साबो। मार्ग में मैं सरकण्डे को तोड़ कर ले गया। उन्हें लेखन-सर में डूबो दिया। आपको दिखाई दे ही रहा है कि मैंने केश, दाढ़ी मूछ कटा रखे हैं। सिर 'पर रूमाल बांधा हुआ था। पाठ किया। फिर सरकण्डे को निकाल कर उसके टुकड़े किए। कलमें बनाईं। एक-एक कलम पानी में डुबोकर प्रार्थना करता था- महाराज! इन कलमों द्वारा हजूर का वर्णन सही हो। मेरे लेखन को सीधा करो मालिक। आपके विषय में लिखते समय केवल हाथ ही नहीं, वजूद भी कांपने लगता है। मुझे ताकत दो हे शहंशाह ! मैंने ध्यान नहीं दिया, पीछे एक निहंग खड़ा था। मैंने कार्य समाप्त कर, कलमों को सफेद

रूमाल में लपेटा तो उसने पूछा- क्या करते हो तुम जवान!? मैंने कहा- महाराज का यश लिखना चाहता हूँ बाबा जी, परन्तु सही नहीं हो रहा। यहाँ माथा टेकने आया था कि आशीर्वाद मिले। उसने कहा- जब तक मैं वापिस न आऊँ, तुम यहीं रूकना। मैं चुपचाप खड़ा रहा। वह घोड़े पर बैठकर एक ओर चला गया। कुछ समय पश्चात् आया। मेरे सिर पर हाथ रखा। फिर चोले की जेब में से कड़ा निकाल कर मेरे हाथ में पहना दिया। एक सेर वज़न का वह कड़ा अगली बार जब आओगे जब दिखाऊँगा। मुझे कहने लगा- तुम कहते थे कि लिखते समय हाथ कांपते हैं। कंपन की व्यवस्था हो गई। जाओ, महाराज सहायक होंगे। इस प्रकार की भेंट मिली मुझे। जब निहंग सिंह जी चले गए तो एक श्रद्धालु ने मुझे बताया- यह गर्म स्वभाव का जरनैल है। चक्र काटता रहता है कहीं यात्री गलती न कर दे। तुम्हारी तरफ देख देख के हैरान होता रहा कि केशहीन सिक्ख पर इसकी कृपा हो गई है। तुम भाग्यशाली हो भाई।

"1953 में डाक द्वारा भाई वीर सिंह जी को मूलमन्त्र का फ़ारसी नज़्म में अनुवाद करके भेजा। पत्र का उत्तर पत्र से नहीं दिया अपितु दो सभ्य व्यक्ति मेरे पास भेजे। उन्होंने भाई वीर सिंह जी द्वारा कहे मधुर शब्दों को दोहराते हुए कहा- आपको याद कर रहें है अमृतसर चलिए। मैं उसी समय तैयार हो गया तथा उनसे मिला। पहले केवल उनके विषय में सुना था। मिलकर पता चला कि वह एक महान् तपस्वी हैं। मेरे अनुवाद तथा नज़्म के विषय में उन्होंने जिन सराहनीय शब्दों का उच्चारण किया, मैं उनके योग्य नहीं था। सुन सुन कर सोचता- यदि मैं ऐसा हो जाऊँ तो कितना अच्छा हो। कहने लगे- आप सम्पूर्ण जपुजी का अनुवाद फ़ारसी नज़्म में करो। मैंने कहा- जी अर्थों का ज्ञान नहीं है। अब तक समस्त टीकाओं को पढ़ लिया। किसी पर मन नहीं ठहरा। कहने लगे- यहाँ हमारे पास रहो। हम अर्थ बतायेंगे।

"मुझे ओर क्या चाहिए था? जो जो बताते, व्याख्या करते, मुझे प्रतीत होता जैसे लाखों नज़्में उतर रहीं हैं, मुझे लगने लगा, अब मैं यह काम करने में सक्षम हूँ। उनकी कृपा से हो भी गया। जब 1969 में यह पुस्तक प्रकाशित हुई थी उसकी भूमिका में मैंने घोषणा की थी कि इसका प्रत्येक मनोरम भाग भाई वीर सिंह की कृपा कारण है, इसमें से जो कुछ भी अच्छा लगे, इसका श्रेय उनको देना। जो भाई वीर सिंह का सम्मान इस कारण करते हैं कि वह एक अच्छे शायर हैं, उनकी जानकारी अधूरी हैं। नेक तकदीर वह बहुत कामल फकीर थे कि सिर पर हाथ रखकर तकदीर की दिशा बदल देते थे। मुझ पर उनकी शायरी का बिल्कुल भी प्रभाव नहीं। यदि प्रभाव होता तो मैं उनके समान पंजाबी में नज़्में न लिखने लगता? कम से कम उनका

अनुकरण तो करता। न तो कभी प्रयास किया न ही अनुकरण। हमारे विषय अलग-अलग थे।

"मेरे घर का नाम वीर निवास भाई साहिब के नाम पर ही रखा गया हैं उनका निवास है यहाँ। मेरे पुत्रों के नामों के साथ 'वीर' शब्द मैंने चेतन होकर लगाया है, समझता हूँ सारा उनका ही परिवार है।

"एक शाम हम दोनों उनके चौबारे में बैठकर बातें कर रहे थे। यह उनका लेखन आलय था। मैंने कहा- भाई साहिब जी, जैसे किसी को हीर सुन्दर लगती है, किसी को सस्सी, उसी प्रकार मुझे महींवाल की सोहणी प्रभावित करती है। मेरी इच्छा है कि मैं उस पर कोई नज़्म लिखूँ। उन्होंने कहा- लिखो। मैंने कहा- यह रोमांटिक बातें एतराज योग्य तो नहीं? उन्होंने कहा- बिल्कुल नहीं। उन्होंने बताया कि बठिण्डा के दुर्ग में कलगीधर हज़ूर ठहरे हुए थे। उन्होंने लोक गीतों तथा सारंगी की धुनों को सुना तो सेवक से कहा- इन गायकों को दुर्ग में बुलाकर लाओ। गायक तथा साज़िंदे आ गए। महाराज ने वही सुनाने के लिए कहा जो वह गाते जा रहे थे। गायकों ने झिझकते हुए कहा- महाराज यह कच्ची वाणी है। आपके दरबार के योग्य नहीं है। महाराज ने कहा- आपने सही कहा। परन्तु समय की भट्ठी में शताब्दियों से पक कर यह धुनें सुन्दर हो गई हैं। हमारी इच्छा आज इन्हें सुनने की है। तब बहुत देर तक गायकों ने प्रेम प्रसंग लोक-धुनों में गाकर सुनाये। महाराज ने आशीर्वाद दिया, धन दिया तथा सम्मानित कर विदा किये।

यह बातें करते करते भोजन का समय हो गया तो हम नीचे आ गए। भाई वीर सिंह जी तो दरवाजें की ओर चले गए। मैं भी साथ ही था। कभी उन्होंने भोजन किए बिना जाने नहीं दिया था। दरवाजें के पास आकर खड़े हो गए। यह नहीं कह सकते थे कि चले जाओ। मैं भी नासमझ तो नहीं था। चला आया। काग़ज़ निकाले। कलमें बनाईं तथा स्याही की दवात को साफ़ कर सोहणी पर नज़्म लिखने बैठ गया तथा दो पहर में ही किस्सा पूरा हो गया। तब जिल्द बांधी। चूल्हे के समीप बैठकर धीमी आंच पर उसे सुखाया। जब सूख गई, पृष्ठ ठीक ढंग से पलटने लगे तो दोबार उस भार देकर भोजन किया और सो गया। सुबह जल्दी आँख खुल गई। जल्दी-जल्दी भाई साहिब ही हवेली की ओर चल पड़ा। मिला, उनके हाथों में सोहणी का किस्सा पकड़ाया। खोल कर देखा- कहा, झूठ बोलते थे कवि जी कल कि किस्सा लिखने की आज्ञा दो? आप तो महीनों से लिख रहे थे। मैंने कहा- नहीं जी। आपके समक्ष किसमें इतनी ताकत है कि झूठ बोल सके? आपका संकेत कल शाम को समझ गया था कि बिना एक पल नष्ट किए लिख दो। किस्सा पूरा करके ही सोया था कल रात।

"आए हुए मेहमानों को भाई साहिब ने स्वयं पढ़कर किस्सा सुनाया तथा फ़ारसी के अर्थ पंजाबी में बताये, साथ ही प्रशंसा की। इसके पश्चात् जब भी वह प्रसन्न होते तब कह देते- कवि जी, सोहणी के बारें में कुछ बातें करें। किस्सा सुनाओ। उन्होंने समस्त आयु मेरा नाम नहीं लिया था। 'कवि जी' कहा करते थे। मेरा यही नाम प्रसिद्ध हो गया था अमृतसर में। कवि जी का अभिप्राय लकशवीर सिंह के अतिरिक्त अन्य कोई नहीं होता था।"

पहले दिन पर जो मुझसे लिखा गया वह बातों का आंशिक विवरण है। अफ़सोस कि मैंने आवाज़ रिकार्डिंग की मशीन क्यों न खरीदी। मैं कितने नोटस ले सकता था? परमात्मा का शुक्रिया कि मुझे बहुत कुछ जल्दी ही याद हो जाता है तथा बहुत समय तक याद भी रहता है। तब भी कोई अनमोल मोती, एक भी बायीं या दायीं तरफ नहीं गिरना चाहिए था। आगे से ध्यान रखूंगा। पहली शाम को उन्होंने बता दिया था कि- बूढ़ों की कौन सी समय सूची? जब आँख खुली, महाराज का स्मरण किया। बीता समय भी याद आता। कौन बच सका है इससे? आप मुझे बताओ प्रोफैसर साहिब कि भूतकाल किसको छोड़ता है। इससे मुक्ति केवल बाबा जी का नाम सिमरन ही दिला सकता है। तभी उसका नाम लेने लगता। माला जपनी प्रारम्भ की। अनेक वर्षों तक यही काम करता रहा। जिस अंगुलि में माला लटकती थी, एक दिन, न कोई बात, न कहानी, पलंग से उठने लगा तो पता नहीं कैसे इसी अंगुलि पर भार आया तथा एक छोर टूट गया। अब भी यह छोर मुड़ता नहीं है। महाराज को गणना पसंद नहीं है न? वही अंगुलि तोड़ी जो गणना करती थी। बचपन में मैं गिनती से इन्कारी हुआ, वृद्धावस्था में गणना करने लगा। हमारे कलगीधर बाबा जी को यह पाखण्ड पसंद नहीं। वह कलाई भी तोड़ सकते थे पर उसी भाग को दण्ड दिया जिस पर माला लटकती थी।

महाराज की कृपा का वर्णन करते हुए कहने लगे- किसी बड़े शाहूकार से पूछो कि कितना धन है तुम्हारे पास? वह कहेगा- मुझे क्या पता? मेरे मुनीम से पूछो। ऐसा ही होता है। बादशाह क्या जाने लेना-देना? हम तुच्छ मुनीम बस्ते उठाये फिरते हैं, जैसे हमें उनके ख़ज़ाने का लेखा-जोखा करना आता है। निरर्थक है यह दावा। अपने हाथ में हिसाब-किताब की पुस्तक तथा कलम-दवात देखकर लोग सत् श्री अकाल कह देते हैं कि महाराज का मुनीम है, इससे कुछ मिलेगा ही। लेखा कोई नहीं किया हमने उसका। गुणगान किया पूरा।

"एक लड़की दूध के मटके लेकर बैठी थी तो खरीदार युवक आया और अपना बर्तन उसके सामने रखा। लड़की ने कई कटोरी दूध उसमें डाल दिया। युवक ने पूछा- कितना दूध डाला? लड़की ने कहा- पता नहीं। युवक ने फिर पूछा- कितने

पैसे हुए? लड़की ने कहा- पता नहीं। युवक ने पूछा- तुम्हे क्यों नहीं पता? तुम्हे पता क्या है? लड़की ने कहा- जिससे प्रेम करते हो, उसके साथ हिसाब-किताब नहीं करते, ये पता है।"

पाठको, मुझे फ़ारसी के अलिफ़-बे का ज्ञान नहीं। गुरूमुखी अक्षरों में जैसे स्वयं ही ज़फरनाम तथा भाई नन्द लाल याद हो जाते हैं, इसी प्रकार मैं ***मुनाजाति बामदादी*** का बार-बार अध्ययन करता रहा। दो स्थानों पर मुझे लगा जैसे वज़न में गलती है। निशान लगा दिया। तारिक साहिब से बात की। उन्होंने चार पाँच शेयरों पर निशान लगाए हुए थे जिनमें मेरे द्वारा चिह्नित दो शेयर भी थे। यह कहने का साहस नहीं था कि आपके शेयरों में हमें कोई त्रुटि दिखाई दी है। तारिक ने कहा- भाई साहिब जी कुछेक शेयर हमसे ठीक ढंग से पढ़े नहीं जा रहे। किस प्रकार से इन्हें पढ़ें? संकेतित शेयरों को जब पढ़ा तो वह हँसने लगे। कहा- प्रोफैसर साहिबान इतनी लिहाज़ की आवश्यकता नहीं है यहाँ। साफ-साफ कहो कि वज़न सही नहीं। मुझे पता है कि कहाँ-कहाँ गड़बड़ हुई है। आपने केवल पाँच निशान लगाए हैं। दर्जन के आस-पास गलतियाँ हैं। बंदिश बन नहीं सकी। बहुत प्रयास किया। कहीं कहीं, आपने नोट किया होगा, बंदिश ठीक करने के लिए मैंने अरबी के शब्दों का प्रयोग भी किया है। यह, गुस्ताखी है। अरबी अरबी है, फ़ारसी फ़ारसी। दोनों का कोई योग नहीं। परन्तु कोई अन्य उपाय न होने के कारण यह काम किया। अब देखता हूँ यदि ठीक हो सकते हों। फिर से एक बार मेहनत करूँगा। मैं एक बार आगरा गया। वहाँ ताजमहल के संगमरमर के मॉडल बिक रहे थे। अत्यधिक पुराने दिनों की बात है 1932 की। एक स्थान पर बहुत ही मनोरम मॉडल देखे। मूल्य पूछा। एक रूपये से कोई भी कम नहीं था। एक मॉडल मुझे बहुत पसंद आया। दुकानदार को पैसे कम करने के लिए कहा, वह नहीं माना। मैंने मॉडल को हाथ में पकड़कर ध्यानपूर्वक देखा तो एक स्थान पर दरार देखी। कहा- यह मॉडल बारह आणे का दे दो। इसमें दरार है। दुकानदार ने कहा- दिखाएँ। मैंने दरार दिखाई तो उसने मॉडल को ज़ोर से पत्थर पर मारकर कंकड़ समेटते हुए कहा- खराब वस्तु के बारह आने भी नहीं लूंगा। यहाँ खरा सौदा होता है जी। सौदेबाज़ी करनी हो तो अन्य अनेक स्थान भी हैं हजूर। तब से मेरा मन यही करता रहा है जिस शेयर में दरार है उसे पत्थर पर मारूँ। मुझसे तो पत्थर तराशने वाला कारीगर ही अच्छा, खराब वस्तु को तोड़ने में संकोच तो नहीं किया। रह गई त्रुटियों को दूर करने का प्रयास करूँगा। अनुवाद दरुस्त तो है, चुस्त भी होना चाहिए। लगा दूंगा गोटा, मगज़ी गोटा सितारे लगाने चाहिए। मालिक को यदि पोशाक ही पसंद न आई तो की गई मेहनत बेकार? जपुजी का मालिक

हार-शृंगार को वैसे व्यर्थ मानता है। वह जो चाहे करे, हम वहीं करेंगे जितनी क्षमता हममें है। देखते हैं क्या बनता है।

कोई कोई काफिआ अत्यधिक परेशान करता है। ठीक ही नहीं होता। हमारे समय के शायर इस प्रकार के शेयर भी कहते थे :

कोई इहो जिहा काफ़िआ तू घड़ मामदीना।
जिहदे विच शायर खुद जाये अड़ मामदीना।

बहुत हँसे। आज के समय में ऐसे मामदीन है या नहीं? उन्होंने पूछा। मैंने कहा- इस मामदीन ने तो अपनी सारी थकावट दूर कर दी। वर्तमान समय के मामदीन इस प्रकार के खुश-मिज़ाज नहीं होते। उनकी शायरी पर न तो हँसी आती है, न ही रोना।

फिर कहने लगे- परन्तु यहाँ कहानी कुछ ओर है। यहाँ जपुजी साहिब है। मैंने स्वयं को सांत्वना दी कि पहले तो, जिस महाराज की यह वाणी है, उसे शेयर की बंदिश की चिन्ता नहीं, वह इस तरफ से बेपरवाह है। दूसरी बात यह कि वज़न ठीक करते करते मैं अर्थों से दूर चला जाता हूँ। मेरे लिए अर्थ पहले है तथा वज़न उसके उपरान्त। मुझे पता है कि बाबा जी की वाणी हेतु हार-शृंगार की आवश्यकता नहीं है। फिर भी मैं प्रयास करूँगा। क्या पता शेयर ठीक ही हो जायें। देखो बात साफ़ है। मैंने कांच का गिलास बना लिया है। उसका प्रयोग करता हूँ। इच्छा है कि बलौर का गिलास बने। उद्यम करूँगा, परन्तु जब तक बलौर का गिलास नहीं बनता, तब तक कांच के गिलास को तो तोड़ना नहीं चाहिए? ठीक है या गलत प्रोफैसर साहिबान? जहाँ कहीं ख्याल और शेयर का वज़न आपस में टकराते हैं मैं वज़न का खून कर देता। वज़न मेरा है, ख्याल गुरु जी का, इसलिए ख्याल बचना चाहिए। गुरू मेरा काफिआ है, गुरू मेरा मित्र। गुरू मेरा वज़न है, गुरू मेरी तशबीह। गुरू बाबा जी ही चाहिए मुझे केवल। उसमें संसार की समस्त सुन्दरता विद्यमान है। जिस कलाम में हजूर का वर्णन नहीं, उस शायरी की सुन्दरता वेश्या की सुन्दरता के जैसी है जो अनगिनत बार लज्जित होगी तथा लज्जित करेगी।

"अनेक बार ऐसा भी होता है प्रोफैसर साहिब कि व्यक्ति तीन चार मंजिल ऊँची हवेली बना लेता है। हवेली के बाहर को गड्ढे रह जाते हैं, उनमें पैड़ बांधने वाले बांस फंसाये गए थे, वह गड्ढे समस्त आयु बंद नहीं होते। हवेली बनाने में ही इतना ज़ोर लग जाता है कि फिर गड्ढे बंद नहीं होते। वर्ष 1969 में मैंने इस पुस्तक पर अपना पूरा सामर्थ्य लगा दिया। तत्पश्चात् 37 वर्षों तक रखी रही। मैंने इसे दोबारा नहीं देखा। वह गड्ढे वैसे के वैसे रहे। मुरम्मत करने का साहस नहीं हुआ। अब आप आए हो। करते हैं कोई उपाय।

"मेरा एक मित्र था नाभा में, सय्यद इज़हार हुसैन। सफेद पोशाक पहना करता था। सफेद टोपी, अचकन, सफेद चूड़ीदार पजामा, सफेद जूते तथा जुराबें, हाथ में सफेद रूमाल। नमाज़ी था। 47 में दंगा करने वालों के हाथों मारा गया। उस दिन से लेकर आज तक मैंने सफेद वस्त्र नहीं पहना। मेरे कितने ही पुराने चित्र हैं इस कमरे में, देख लो किसी में भी सफेद वस्त्र हो। वह मेरे पास चला गया, तो मैं भी चला गया। मैं कौन सा यहाँ हूँ। अपने विवाह में नये वस्त्र नहीं बनवाए मैंने। यदि हुसैन होता तो दो जोड़ी सफेद नए वस्त्र अवश्य लेता, एक उसके लिए, दूसरा अपने लिए। उसके परिवार की छह लड़कियों को सुरक्षित लेकर मैं लाहौर की तरफ चल पड़ा। मार्ग में खून से लथपथ सिक्खों के काफिले मुझे उधर जाने से रोकते, कहते मुश्किल से थोड़े से ही बच कर आए हैं। मुझ पर जैसे कोई पागलपन सवार था। मैंने लाहौर सुरक्षित पहुँच कर लड़कियाँ रिश्तेदारों को सौंप दी। समाचार पत्रों में मेरी चर्चा हुई। मुसलमान बहुसंख्या में आ-आ कर मिलते। लाहौर का डी.सी आ गया। कहने लगा- कितने दिन तक ठहरोगे सरदार जी लाहौर में? मैंने कहा- कम से कम एक मास। इससे अधिक आप जितने दिन रख सको। यह 1 अगस्त 1947 की बात है। कहने लगा- दो सप्ताह तक ठहर जाओ। मैंने कहा-नहीं। एक मास तक ही रहूँगा। वह हँसने लगा तथा जाते हुए कहने लगा- अच्छा तो एक दिन मैं भी आपके साथ लाहौर देखूंगा।"

वह 14 अगस्त को कारों का काफिला लेकर आ गया। मैं बैठ गया। मुझे वाहघा बार्डर पार करवा कर खुदा हाफिज़ कह वापिस चला गया। 15 अगस्त को दोनों देशों के बार्डर सील हो गए। तारिक साहिब 26 वर्ष मैं ईद के दिन ईदगाह में नमाज़ अदा करने गया, क्योंकि हुसैन जाया करता था। वह नहीं तो क्या हुआ। मैं जो हूँ उसके स्थान पर। यह दुआ करता था परवरदगार के समक्ष कि मेरी नमाज़ का फल मेरे मित्र हुसैन को मिले।

मैंने पूछा- आपको समय सारणी कैसे निश्चित है भाई साहिब? उस अनुसार ही आपसे मुलाकात का समय लेंगे।

गुनगुनाने लगे-

दिन को फिकरि सुखन ज़िक्रि खुदा करता हूँ।
रात को दर्द भरे गीत सुना करता हूँ।

कहीं आदर-सत्कार में कोई कमी रह गई तो बुरा मत मानना भाई। फ़कीरों की दृष्टि आकाश से पार होती है कहीं दूर। चलता हुआ फकीर कंकड़ पर से फिसल कर गिर जाये तो हँसो मत। उसकी दृष्टि जब धरती पर है नहीं तो कंकड़ कहाँ से दिखाई देता?

जैसे भाई नन्द लाल जी ने हज़ूर की स्तुति दीर्घ गज़ल- 'कादरि हरकार गुरू गोबिन्द सिंह। बेकसां रा यार गुरू गोबिन्द सिंह।" रची थी, उसी बंदिश में दीर्घ नज़्म लिखी :

हस्त जिंदामीर भाई वीर सिंह।
मूनसि दिलगीर भाई वीर सिंह।

विश्वविद्यालय से प्रकाशित होगी आपकी किताब तो आपकी सुगन्ध दूर-दूर तक प्रसरित होगी- मैंने कहा।

कहा- गुच्छे में से बाहर निकालोगे तो फकीर बदनाम होगा। कभी मोती स्वयं चल कर दुकान में गया है? बस कोई लेकर जाता हे, फिर मूल्य पड़ता है। कोई मूल्य लगाता है, कोई खरीद ले जाता है। मोती खामोश रहकर जगत् तमाशा देखता रहता है। देखेंगे हम भी तुम्हारा तमाशा।

"अमीर खुसरो ने कहा था- मैंने दूध दांतों से कविता कही थी। दूसरी बार यही बात मुझ पर लागू हुई मित्रो। धन्यवाद करता हूँ गुरू महाराज का। जो व्यक्ति शुक्रिया नहीं करता, वह रोटी क्यों खाता है फिर? शुक्रिया नहीं करना, फिर तुम रोटी के लिए हाथ मत पसारो भाई। जिस रोटी की तरफ तुम्हारी अंगुलियाँ गईं, उसके लिए फरिश्ते तरसते हैं, तुम जैसे गुनाहगार को मिल रही हैं। शुक्रिया करो।

"मैंने आपको शम्मस तबरेज़ सुनाया, मनसूर, जुनैद, बैअज़ीद, हाफिज़ शीराज़ी, मौलाना रूमी, शेख साअदी तथा अमीर खुसरो की बातें सुनाईं, फिरदौसी तथा उमर ख्याम का कलाम सुनाया। मैं मूर्खों के समान ऐसे बातें करता रहा जैसे आप लोगों को कुछ पता नहीं। गुस्ताख हूँ। आपने सब कुछ पढ़ा हुआ है फिर भी इस बूढ़े को सुनते रहे। आप कितने मेहरबान हो।

तारिक से कहा- सुनाओ कोई आईत। तारिक साहिब ने नज़रें झुका लीं, कुछ समय खामोश रहे, फिर एक आईत पढ़ी। भाई साहिब ने कहा- गुस्ताखी क्यों की। बिसमिल्ला क्यों नहीं पढ़ा? यह तो बेअदबी है। तारिक ने कहा- मन में पहले बिसमिल्ला ही पढ़ा था। फिर आईत पढ़ी, क्योंकि आदेश आपने आइत पढ़ने का दिया था। तारिक साहिब द्वारा पढ़ी गई आइत के उच्चारण को शुद्ध करते हुए भाई साहिब ने कहा- यदि कोई संदेह है तो सिद्ध करूँ कि मैंने सही बात बताई है आपको? मेरे घर में इमाम गज़ाली का पूरा दफ्तर रखा हुआ है। क्या करूँ चला नहीं जाता। कुर्सी पर बैठा नहीं जाता। पुस्तकालय के बिना कोई क्या करे? कागज़ कलम के अतिरिक्त कभी कुछ और किया ही नहीं मैंने।

"नीती (महारानी पटियाला प्रनीत कौर जी) का फोन आया था पटियाला से। कहा- मिलना है। मैंने कहा- न बेटी। हो गए मेल-मिलाप बहुत। अब आराम

करो महलों में। हठ करने लगी तो मैंने कहा- मेरे पास रसोईया नहीं। राशन नहीं। सर्दियों में शक्कर की चाय पीता हूँ। शक्कर भी खत्म हो गई है। तीनों बेटियाँ आ गईं। नीती, उसकी बेटी, आगे उसकी बेटी अर्थात् दोहत्री। शक्कर भी साथ ही लेकर आईं, बाकी खाने का सामान भी। स्वयं ही चाय बनाकर पी। यहीं बैठी थीं जहाँ आप बैठे हो। नीती कहने लगी- आशीर्वाद लेने आईं हैं आपसे। मैंने कहा- न अब आशीर्वाद नहीं देना। आप जो सामान लेकर आई हो, एक हज़ार के आस-पास का होगा। अधिक से अधिक डेढ़ हजार। इतना सा देकर आशीर्वाद दस लाख का लेकर चली जाओगी तुम सब। मैं तो लुट गया। अब आशीर्वाद देने योग्य नहीं क्योंकि बंदगी नहीं होती। आशीष के बदले में परमात्मा का शुक्रिया भी तो अदा करना होता है तभी ऋण मुक्त होता है व्यक्ति। बाहर कमरे में महाराज का निवास स्थान है। उन्हें वहाँ लेकर चला गया। कहा, यह सबसे महान् हैं इनका सामर्थ्य अनन्त है। आप पटियाला निवासियों पर इसने अत्यन्त कृपा की है परन्तु आप को इधर-उधर भटकने का शौक है। केवल इन्हीं पर विश्वास रखते, कहीं न जाते, ताकत आपके पास बनी रहती। आप सब कभी बायें गए, कभी दायें, कभी ऊपर चढ़ गए, कभी नीचे आ गए। केवल यही काम रह गया दौड़ने-भागने का। उस एक पिता पर आस्था रखो। भाई नन्द लाल ने कहा तो था- आनन्दपुर जाओगे तो देखोगे कि आनन्दपुर की गलियों के भिखारी, सल्तनतें बांटते फिरते हैं।

"माथा टेका। अरदास की, हुकुमनाम लिया। उनके द्वारा लाए मेवे में से थोड़ा सा प्रसाद देकर वापिस भेज दीं। आप भी गुरू दरबार में माथा टेको, फिर अपने-अपने महलों में वापिस जाओ पटियाला। हम भी तैयारी किए हुए हैं। क्या पता कब संदेश आ जाए। अच्छा, अब जाना चाहिए। मेरी यात्रा भी आसान है। मैंने कौन सा भार उठाना है? हड्डी-मांस का भार भी उठाना नहीं पड़ेगा। निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ, कर्मों के भार से बिल्कुल मुक्त हूँ। छड़ी खाने के लिए तैयार हूँ, क्योंकि सौ अंक मैंने खुद ही स्वयं को दे दिए हैं, हिसाब कभी आया ही नहीं सारी उम्र, बातें शतकों की कर रहा हूँ।

- पूछा- आप कहाँ के रहने वाले हो तारिक साहिब?
- जी मलेरकोटला का।
- मलेककोटला किस स्थान पर रिहायश है?
- जी लोहारों वाली गली।
- कब जाओगे मलेरकोटला?
- रविवार को।

- अच्छा अब यह बताओ इस गली में रहने वाले अख़्तर परवेज़ का क्या हाल-चाल है?

- बाकी सब तो ठीक है जी, उनकी बेटी का निकाह लेट हो रहा है। कहीं कोई बात बन नहीं रही। बहुत चिन्तित हैं।

- बनेगी बात। अभी मुझे आपसे पता चला है। मेरी इस खुशनसीब बेटी का निकाह क्यो लेट हो रहा है? मैं अरदास करूँगा।

- आप मलेरकोटला जाओ तो इनके घर जाना। अन्य कोई बात मत करना। बस यही कहना कि चैल जाकर आए हैं। बाकी की बातें परवेज़ परिवार से सुनना।

पटियाला वापिस आकर बोपाराय जी को फोन करके बताया कि उनसे मिलकर वापिस आ गए हैं। कुछ बातें बताई तो कहने लगे- कल छुट्टी है, कहीं जाना तो नहीं? मैंने कहा- कहीं नहीं जाना। कहा- दस बजे आ जाना, आराम से बैठकर सुनेंगे इस दानिश्वर की बातें। अगले दिन वहाँ जी.एस रियाल, तारिक किफ़ायतुल्ला, बलदेव सिंह संधू तथा वाईस चांसलर साहिब पहले से बैठे थे। सवा दो घण्टे लगातार दरवेश की बातें सुनी। ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे रहस्यमयी प्रवचन सुन रहे हों। बोपाराय ने संधू से पूछा- इतने महान् व्यक्ति को हम क्या दे सकते हैं? संधू ने कहा- विश्वविद्यालय में सबसे बड़ी उपाधि प्रोफैसर की है। मौखिक निर्णय 4 नवम्बर को हुआ तथा 10 नवम्बर को सिंडीकेट की मीटिंग में सर्वसम्मति से यह स्वीकृत हो गया। उन्हें आनरेरी प्रोफैसर ऑफ यूनिवर्सिटी की उपाधि देने की घोषणा कर दी गई।

यह शुभ समाचार चैल निवासी भाई साहिब को फोन पर सुनाया। सुनकर कहा- इतना सब करने की क्या आवश्यकता थी? मेरा तो यह कहना है कि जब चैल आओ, दो हार ले आना। एक फूलों का जो शरीर के लिए सुखदायी हो, दूसरा जूतों का, जिसे पहनकर मेरा दिल दिमाग ठीक रहे। आगे आपकी इच्छा। बूढ़ों की इच्छा कौन देखता है? तभी कहा- तारिक ने बताया था न पन्नू साहिब कि अख़्तर परवाज़ की बेटी का निकाह नहीं हो रहा? मैंने अरदास की थी महाराज की अदालत में। कल विवाह का निमंत्रण आ गया। मैंने शगुन भेज दिया है। क्यों? यह बूढ़ा किसी काम का नहीं क्या? मैंने तारिक साहिब को फोन किया, उन्होंने बताया, हाँ जी मैं विवाह पर गया था, पहले भी गया था। सभी भाई साहिब की मेहरबानियों को याद करते थकते ही नहीं। पन्नू साहिब जिस जिस परिवार का कुशल समाचार पूछने के लिए मुझे कहा गया था, वह सभी गरीब मुसलमान हैं। जब भाई साहिब कोटला आते तो नवाब साहिब के मेहमान होते थे, परन्तु अपने साथ अमीर लोगों के बारे में कोई बात नहीं की। गरीब लोगों के विषय में बहुत प्रेम से बातें की उन्होंने अपने साथ।

उक्त बातें विश्वविद्यालय को कॉफ़ी हाऊस में बैठा पाँच-सात मित्रों को सुना रहा था, तभी प्रोफैसर एस.एम. वर्मा आकर बैठ गए, कुछ समय पश्चात् कहा- यह किसका वृत्तांत शुरू कर रखा है आज? मुझे भी तो पता चले। मैंने कहा- चैल में एक शायर रहता है जिसका नाम भाई लकशवीर सिंघ है। उससे मिलकर आया हूँ। वह कहने लगे- यह तो कमाल हो गया भाई। वह तो मेरे चाचा जान हैं। जिस रॉयल घोड़े की तुम बातें कर रहे हो, पाँच वर्ष की आयु में मैं चैल गया था तथा उस पर बैठकर घूमा भी था। आगे लगाम पकड़े हुए चाचा जी थे, घोड़े 'पर सवार मैं, तथा पीछे-पीछे मेरे पिता जी, हम पहाड़ियों पंगडंडियों पर सारा दिन सैर करते घूमते हुए बातें करते रहते, शायरी होती, जिसका मुझे उस समय कोई ज्ञान नहीं था।

"आपके चाचा जान कैसे हुए वह? मैंने पूछा।

"बात यह है पन्नू साहिब शायर का एक बड़ा भाई था प्रो. बलवीर सिंह। वह मेरे पिता जी का सहपाठी तथा मित्र था। मेरे पिता जी चाचा जी से आयु में पाँच वर्ष बड़े थे। इस समय उनकी आयु 93 वर्ष की है। चाचा जी को परिवार के सभी सदस्य नवाब साहिब कहते थे। उनके व्यवहार में गज़ब की शाही सभ्यता तथा रीति होती थी। कभी मेरे पिता जी को मिली। अत्यधिक करीबी सम्बन्ध तो पिता जी के प्रो. बलवीर सिंघ जी से रहे, परन्तु फिर भी, सम्भव है कि कोई पुरानी बात याद आ जाये।"

एक जनवरी 2007 को मैं अपने कुलीग के घर पर उनके पिता प्रो. राम गोपाल वर्मा जी को मिलने गया। सुबह गया तथा शाम को वापिस आया। सबसे पहले यही प्रश्न पूछा कि उनके द्वारा जितनी बताई गई थी, क्या भाई साहिब वास्तव में उतनी ही सम्पत्ति के स्वामी थे या हैं? वर्मा जी ने हँसते हुए कहा- शायर का सत्य इस दुनिया के सत्य से पृथक् होता है। समस्त कथा में से मुझे जितना याद है, वह सुनो :

"यह एक बहुत ही नखरेबाज लड़का था। अत्यधिक हठी परन्तु पढ़ने में कमज़ोर। दसवीं करने के पश्चात् बहुत स्थानों पर प्रयास किया परन्तु जहाँ तक मेरा मानना है दसवीं के बाद कोई कक्षा पास नहीं की। शायर तो ये था ही, सभी इस बात से सहमत थे। इसका बड़ा भाई बलवीर सिंघ बहुत ही परिश्रमी विद्यार्थी था तथा फ़ारसी भाषा में निपुण था। वास्तविक अर्थों में फ़ारसी का विद्वान् बलवीर सिंघ था, परन्तु यह हठी लड़का, जिसे हम 'नवाब साहिब' कहकर छेड़ते थे, क्लासिकल फ़ारसी ग्रन्थों का अध्ययन करता था। मैं गवाह हूँ कि फ़ारसी या अरबी के किसी विषय को लेकर बलवीर सिंह उलझ जाता, तो लकशवीर उसे सुलझा देता। बलवीर सिंघ खुश होता, दुःखी भी। खुश इसलिए कि लकशवीर बुद्धिमान् है, दुःखी इस कारण कि

पढ़ता नहीं था, आगे पढ़ाई नहीं करता था हमारे समान। इनके पिता की आर्थिक हालत ठीक थी। राजनीति में रुचि रखते थे। नाभा रियासत में अत्यधिक प्रभाव था। मजीठिया सरदारों में बहुत सम्मान था। जनरल हरबख्श सिंह जी जब पैपसु में मन्त्री बने, ज्ञान सिंह राड़ेवाला की संसद में, तब लकशवीर सिंघ के पिता जी उनके राजनैतिक सचिव नियुक्त हुए। उनका लोकव्यवहार अति उत्तम था। बहुत सम्मान मिलता था। वह लकशवीर से अधिक बलवीर सिंघ को देखकर खुश होते कि अच्छा पढ़ा-लिखा तथा नौकरी पर लगा हुआ था। पिता जी को कहीं से पता चला कि लकशवीर लोगों का हाथ देखने लगे हैं, ज्योतिष का काम करने लगे हैं, तो नाराज़ हुए, कहा- एक तो यह काम हमारे खानदान में है नहीं। दूसरे लकशवीर ने यह विद्या किसी से ग्रहण नहीं की। जिस विद्या को विधिवत् प्राप्त न किया जाए, उसका प्रयोग अनुचित है। परन्तु कम समय में ही फ़ारसी शायरी के समान ज्योतिष शास्त्र में भी वह प्रसिद्ध हो गया। बहुत धनी व्यक्ति उससे अपने भविष्य के विषय में पूछने के लिए चैल तक आते।

मैं तथा बलवीर पहले लाहौर पढ़ने गए, फिर जब देश का विभाजन हुआ, हम वापिस पटियाला आकर महेन्द्रा कॉलेज में पढ़ने लगे। जब बलवीर नाभा, तथा मैं पटियाला अपने माता-पिता के साथ पुश्तैनी छोटे घर में रहते थे, तब इस नवाब ने चैल शहर में शानदार कोठी बनाई। बलवीर तथा मैं नाभा, पटियाला से, समाना, सुनाम, भवानीगढ़ मित्रों तथा रिश्तदारों से मिलने के लिए साईकल पर जाते थे, परन्तु इसके पास शानदार घोड़ी थी। शुरू शुरू में तो हमने इसको छेड़ने के लिए इसे नवाब साहिब की उपाधि दी थी, परन्तु यह सच का नवाब बन गया था तथा हमने स्वयं को उसकी प्रजा मान लिया।

हमे यह चैल आने के लिए कहता तथा कभी कभी हम स्वेच्छा से छुट्टिया बिताने के लिए इसके पास चले जाते तो यह बहुत प्रसन्न होता। उसकी केवल एक ही इच्छा होती थी, वह यह कि हमारे आने का समाचार उसे एक दिन पहले मिल जाये। इस प्रकार वह मेहमानों का स्वागत करने का पूरा प्रबन्ध कर सकता। हमारे पहुँचने पर दरवाज़े पर वर्दी पहने दरबान खड़ा होता जो स्वागत करता, दरवाज़ा खोलता, यहाँ तक कि हमारे जूतों के फीते भी खोलता। फिर खाने-पीने का सिलसिला शुरू होता जो खत्म ही नहीं होता था। जिसने जो कुछ भी खाना होता वही पहुँच जाता। किस प्रकार का मीट खाना है, रसोईया लिखता जाता। एकांत स्थान पर बनी उसकी हवेली किसी राजा के महल के समान प्रतीत होती। असम्भव था कि कोई बात अनुशासन ने बाहर हो जाये। कोई भी व्यर्थ की वस्तु दिखाई नहीं देती थी। कुत्ता रखा तो शुद्ध नस्ल का शानदार। घोड़ा ऐसा रखा कि उसके जैसा आस-पास, दूर तक

कोई नहीं था। बहुत समय बीत गया चैल गए हुए। अब तो शायद उसकी हवेली पुरानी हो गई होगी। बहुत शान थी उस समय उसकी।

एक दिन हम पगडंडी पर चलते हुए उसकी नज़्में सुन रहे थे। घोड़ा साथ ही लगाम रहित चल रहा था। मस्ती में चलते हुए कवि के हाथ से लगाम गिरकर फिसलती हुई घाटी में कुछ फासले पर रूक गई। हम अर्थात्, मैं, बलवीर तथा लकशवीर रूककर देखते रहे। लकशवीर गुस्से से कहने लगा- देख क्या रहे हो? लगाम गिरी हुई दिखाई नहीं देती? उठाने में शर्म आती है? घुड़सवारी का आनन्द तो लेना है परन्तु गिरी हुई लगाम नहीं उठानी? क्यों?

मैं तथा बलवीर नीचे की ओर धीरे धीरे खिसकते हुए लगाम उठा ले आए। हमें उसकी यह बात एक गुस्ताखी लगी, क्योंकि वह हमसे छोटा था, उसे ऐसा करना शोभा नहीं देता था, परन्तु वह भी जानता था तथा हम भी कि वह है तो नवाब। नवाब के आदेश को प्रजा कैसे न मानती? प्रोफैसर साहिब, सच मानना वह हम पर शासन करता था। उसका सिक्का चल पड़ा। तब यहाँ आयु के घटाव-बढ़ाव का क्या महत्त्व है? वह हमारी छोटी-छोटी आवश्यकताएँ पूरी करने हेतु तैयार रहता। बच्चे गुस्से में हो, बुरे नहीं लगते। इस पर हमें कभी क्रोध नहीं आया। वह हम पर तथा हम पर उस पर फिदा थे।

मैंने पूछा- आपकी जवानी के समय में पुराना पटियाला बहुत ही सुन्दर शहर होगा प्रोफैसर साहिब, क्योंकि महाराजा भूपेन्द्र सिंह की राजधानी थी? वह हँसने लगे। कहा- कहाँ जी। यह आपका विचार है। तंग गलियों में तंग घर। राज्य की आमदन का अस्सी प्रतिशत तो महाराजा की एय्याशी पर खर्च हो जाता था, फिर पटियाला कैसे सुन्दर हो सकता था? दिन बीत रहे थे केवल। वर्तमान पटियाला उस समय के पटियाला से अत्यधिक सुन्दर है। मैंने महाराजा को उस समय भी देखा था जब वह पटियाला दर्शन हेतु निकला था। सुन्दर भी था, जवान भी था, समझदार भी, विद्वान् भी। अंग्रेजी भाषा की उसे बहुत जानकारी थी। एय्याशी ने उसे राख कर दिया था। उसे भयंकर लिंग रोग हो गए थे। मृत्यु से पूर्व उसने एक बार अपनी राजधानी आखरी बार देखने की इच्छा प्रकट की। हाथी पर सवार होकर वह बाज़ार में से निकला। मैंने अंतिम बार उसे इतने समीप से देखा। रंग बिल्कुल काला हो गया था। आँखें अंदर धंस गई थीं, कोई रौशनी नहीं थी। उसकी सूरत देखकर डर लगता था। एक शूरवीर तथा गुणी महाराजा का अंत भयंकर था। कुछ दिनों के पश्चात् पटियाला में मातम छा गया।

"आपने पन्नू साहिब जब विगत मास लकशवीर को पटियाला बुलाया था, उस समय मुझे मिलकर गया था। उसकी वही शाही ठाठ थी जो जवानी के समय

में थी। उसका स्वभाव नम्र हो गया था, अन्य कोई अन्तर दिखाई नहीं दिया। मुझसे कहता था चैल आना, वही पुरानी हुकुमत दिखाऊँगा जो बीते समय में कायम की थी, अब तक उसी प्रकार हुक्म चलता है।"

जिस दिन उन्होंने मेरे विश्वविद्यालय में आना था बोपाराय जी ने मुझे कह रखा था- उनसे सम्पर्क बनाकर रखना। गैस्ट हाऊस में उनके आने से पहले मैं पहुँच जाऊँगा। पटियाला से जब वह 15 किलोमीटर की दूरी पर थे तो मैंने कोठी में सूचना भेज दी। सरदार बोपाराय तथा उनकी पत्नी दोनों उनके स्वागत के लिए पहुँचे। हाल-चाल पूछा, बताया। उनके साथ चैल से उनका फैमिली डॉक्टर साथ आया था तथा छोटा पुत्र किशनवीर पिता जी के पीछे सावधान मुद्रा में खड़ा हो गया। इस समय मुझे ऐसा लगा जैसे गर्वनर के पीछे उसका ए.डी.सी खड़ा होता है, ठीक उसी प्रकार किशनवीर ने अपनी डयूटी दी, जो इस समय ए.डी.सी बन नवाब साहिब के पीछे सीधा खड़ा था, गम्भीर, सावधान, चुस्त तथा फुर्तीला। दोनों के शाही लिबास, परम्परा के बोधक, विशेष अवसरों पर पहनने योग्य। सम्मान-पत्र पढ़ने के पश्चात् जब वाईस-चांसलर द्वारा उन्हें ऑनरेरी प्रोफैसरशिप से सम्मानित किया गया तो विश्व पंजाबी कॉनफ्रेंस के डैलीगेटों की तालियों से साईंस आडीटोरियम गूंज उठा। कवि ने बहुत समय तक अपना माथा मेज़ पर झुकाकर परमात्मा का, मेज़बान विश्वविद्यालय तथा श्रोताओं दर्शकों का धन्यवाद किया।

ईरान के बड़े शहर कुम से एक चालीस वर्षीय शोधार्थी मुहम्मद रूहानी अप्रैल 2006 में मेरे पास आया तथा दो मास मई-जून रहने की आज्ञा मांगी तथा लाईबरेरी की प्रयोग की भी प्रार्थना की। वह तीक्षण बुद्धि एवं परिश्रमी व्यक्ति था। उसके प्रश्नों में से ताज़गी की सुगन्ध अनुभव हुई। मैंने पूछा- सिक्खों के विषय में पहले किसी ऐसी पुस्तक का अध्ययन किया है जो आपको रुचिकर लगी हो? उसकी आँखों में चमक आ गई, कहा- जी ***मुनाजाति बामदादी।*** बहुत ही मकबूल तथा आहला पुस्तक है यह। बहुत लोगों ने इसे आधार बनाया है आपके धर्म की जानकारी के लिए। क्या आपने देखी है यह महान् पुस्तक? मोहम्मद रूहानी के आने से छह मास पूर्व तक जिस लेखक का मैंने नाम तक नहीं सुना था, उसके बारे में बहुत देर तक हम बातें करते रहे।

एक दिन रूहानी कहने लगा- आप मुझे कैनवस और रंग लाकर दे दीजिए मैं हज़रत बाबा नानक अलहि सलाम की पेंटिंग बनाना चाहता हूँ। यह संदेह कि कहीं पैसे खर्च कर दूँ, आता-जाता कुछ भी न हो, पूछा- आती है चित्रकारी?

उसने मुझसे कागज़ मांगे। बॉल पैन द्वारा दो दो मिन्ट में तीन सुन्दर स्कैच बनाकर मुझे दिखाए। क्या मजाल कि किसी रेखा को मिटाने की आवश्यकता रही

हो। उसे दुकान पर ले गया। बारह-तेरह सौ के आस-पास सामान खरीदा। एक सप्ताह में उसने चित्र पूरा कर लिया। उस समय का दृश्य चित्रित किया जिस समय गुरू नानक देव जी ने बगदाद पहुँच कर प्रवचन किए। पीछे शाही मस्जिद में गुबंद तथा मीनार दिखाई दे रहे हैं। ऊँचे पलंग पर बाबा जी तथा सामने मुसलमान संगत बैठ कर प्रवचन सुन रही है। भाई मरदाना रबाब सहित चित्रित हैं। आस-पास एंकात दिखाया गया है। खजूर के वृक्ष के समीप बैठे हैं। झाड़ियों के कांटे हैं, पत्ते नहीं, करीर तथा थोहर। बाबा जी का जो चरण धरती को छू रहा है, केवल उसके समीप की झाड़ी पर कुछ पुष्प खिले दिखाई दे रहे हैं। बस, जो बताना था बता दिया।

भाई लकशवीर का वर्णन करना अब रोकना ठीक रहेगा क्योंकि बड़ों के समीप निम्नता का भाव रखने तथा मुरादें मांगने से बुद्धि ठीक रहती है। शायर लकशवीर ने स्वयं कहा था- आदमी क्या है आखिर? इसे तो बच्चों जैसे खेल भी खेलने नहीं आते। दावा करता है कि पैगम्बरों के खेल को जान गया है।

किशन ने मुझसे पूछा- कैसे लगे आपको मेरे पिता जी? मैंने कहा- अदन के बाग में से दूसरी बार आदिम स्वेच्छा से धरती पर उतरा है। अदन का वर्जित फल खाना तो दरनिकार, देखा तक नहीं। आदि-पाप से मुक्त अमृत संतान। मुझसे कहने लगे- हज़रत निज़ामुदीन के पास जितने समय तक खुसरो रहा, उतने समय तक पन्नू साहिब मेरे पास रहते, तो अच्छा होता। विशाल अज़ायबघर की परिक्रमा ही की केवल उसने। एक-एक गैलरी का ताला खुलेगा। अत्यन्त ख़ज़ाने रखे हुए हैं। अपने पुत्र अमरवीर सिंघ से कहा- अपने घर में यह नया सदस्य आया है, भाई है आपका। इसके दुःख-सुख में उपस्थित होना है। दोनों लोक में आपकी नेकियो का गवाह होगा यह प्रोफैसर पन्नू।

15 फरवरी 2007 को प्रातः जपुजी साहिब का पाठ करते समय विदा हो गए। शाम, काफ़िला श्मशान की घाट की ओर चला तो छोटे-छोटे बर्फ के दाने गिरने लगे। जैसे मोतियों की वर्षा हो रही हो। जैसे कोई मखानों फूलों का छींटा देता जाता हो। अंतिम दर्शन हेतु जब हमने मुख पर से कपड़ा उठाया तो सभी पीछे हट गए। सुनहरी धूप में लेटा शायर ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे मिसर के पिरामिड में बादशाह फराउन की देह हो। कुछ समय पश्चात् सूर्य ने फिर से पर्दा ओढ़ लिया।

किशनवीर सिंघ ने कहा- पचास वर्ष पूर्व 1956 में चैल की हवेली का मुहुर्त करना था, तो भाई वीर सिंघ को आमंत्रित किया। उनका उत्तर आया- मैं आ नहीं सकता। महाराज के लिए रूमाला डाक द्वारा भेज दिया। पार्सल मिला, तो माथे से छूते हुए बोले- भाई साहिब बड़े हैं, मुझसे पहले विदा होंगे। मैं उनकी अरदास में रूमाला लेकर जाऊँगा, परन्तु मेरी अरदास के समय वह नहीं होंगे। यह रूमाला

अंतिम अरदास के समय महाराज अंगीकृत करेंगे। मुझे दिखाकर परिवार ने अंतिम अरदास के समय भाई वीर सिंघ द्वारा दिया गया वही रूमाला गुरू ग्रन्थ महाराज को अर्पित किया।

एक दिन उनसे अमरवीर ने पूछा- "तलवण्डी से जो कड़ा लेकर आए थे, कभी पहना क्यों नहीं पिता जी?" "कोई नासमझ हूँ मैं? यह कोई पहनने वाली वस्तु है?" माथे से उसे छू कर केसरी रूमाल के ऊपर मेज़ पर रखकर लिखते पढ़ते। कहा करते- यह मेरा सर्व लोह का किला है।

ईरानी फारसी सम्बन्धी कहा- 1966 में ईरान से बादशाह का परिवार शिमला में आया। एक महीना रहे। उन्होंने पूछा, "यहाँ कोई फ़ारसी नहीं जानता? बच्चे बातें करने के इच्छुक हैं।" चैल से शिमला अपने पास बुला लिए। शहज़ादे तथा शहज़ादियों से बातें करते रहते। शाम को चैल आते, तो आधी-आधी रात तक अकेले फ़ारसी में बातें करते रहते- कल जो कहानी शहज़ादों को सुनानी होती, उसका अभ्यास करते। बस इस समय वह हिन्दुस्तानी से ईरानी हो गए।

सूक्षम सब भाइयों में से छोटी बहन है। बिछुड़ने से दो दिन पूर्व उसके पास फोन आया- मैंने अब जाना है बेटी। सूक्षम ने गुस्से से कहा- आपको पता है न पापा, पिता बेटियों के साथ ऐसी बातें नहीं करते? फोन बंद। बहुत रोई।

भाई लकशवीर सिंघ मुझसे कहते- मेरे पास थोड़ी देरी से आए हो प्रोफैसर। लम्बे समय तक मेरे साथ रहे होते, तो आपको इतना समर्थ बना देता कि ज्वालामुखी से बहता लावा सरलता से हाथों में पकड़ लेते।

कुछ लावा तो हाथों में आ ही गया आख़िर में। यही बहुत है। रूसो अपनी आत्मकथा कनफ़ैशनज़ में लिखता है- "मेरी बुआ बहुत सुन्दर थी। जब मैं पाँच-छह वर्ष का था तो मुझे सैर पर ले जाती थी। वह बहुत प्यारा गीत गाती थी, जिसकी आठ-दस पंक्तियाँ हैं, बाकी की तो भूल गया, केवल चार पंक्तियाँ याद हैं। जवानी में मर गई थी वह। मैंने अनेक बार सोचा, परिवार के अन्य सदस्यों ने भी तो यह गीत सुना होगा। चलो उनसे पूछकर पूरा कर लेते हैं। फिर मैं स्वयं ही अपना इरादा बदल देता, क्योंकि यह मुझसे सहन नहीं होता था कि किसी ओर ने भी यह गीत सुना होगा। मैं तो चुप-चाप चार पंक्तियों के साथ ही जी लूंगा।"

उसका आशीर्वाद मिला, यही बहुत है, रूसो के गीत के समान। पाठकों को उसके कुछ बोल मिले, और क्या चाहिए?

भाई वीरसिंह जी की उर्दू हस्तलिखित का लिपयान्तरण

1. नाभा के मशहूर शायर श्री लकशवीर सिंघ जी मुज़तर ने एक नज़्म हाल में ही कलमबद्ध की है जिसका नाम है जामि शहादत। इस में साहिब श्री गुरू

गोबिन्द सिंघ जी के छोटे साहिबज़ादों की शहादत का दिलसोज़ तज़करा है जो इस खूबी से बयान किया गया है कि सदियों का गुज़रा वाकया इस तरह से पेशे-नज़र हो जाता है कि गोया अभी आँखों के सामने हो रहा है।

2. ये मुस्सलसल नज़्म दो रोज़ में ही शायर ने लिखी है। ख़सूसीअत ये है कि एक ही काफ़िए में पांच सौ के करीब अशआर कहे हैं। बल्कि फ़ारसी कतआत भी उसी बहर और वज़न के हैं।

3. तशबीहात और इश्तिआरात एक अनोखा इमतिआज़ रखते हैं। मुअरब या फ़ारसी के शुअरा की तकलीद नहीं की गई बल्कि भारत वरश के बज़ुर्गों और मादरे- वतन की प्यारी चीज़ों से तशबीह की गई है या कुदरती मनाज़र या तारीखी वाकयात और मुनासिब हालि अशया के सामने रखा गया है। गैर कुदरती और बेअसर चीज़ को शेयर में खपाया नहीं गया। तलमीहात भी काबिले तारीफ़ है। इस कदर तशबीहात की नज़्म कहना आसान नहीं।

4. मुहासिने सुख़न के लिहाज़ से ये नज़्म खूबीओं से भरपूर है। तकरारि-अलफ़ाज़, हुसने-सिदक, मुहावरा, सफाई बयान, सादगी-इ-कुदरति- मज़मून, खूबीए- तरकीब, हुसनि- इसतिआरा, लुतफ़ि-तशबीह, वाकिया-गुज़ारी, जज़बा-निगारी, मामिलाबंदी, बुलंदीइ-जज़्बात, मुताबिकति-अलफाज़ो-मजमून, सोज़ोगुदाज़ और सहलि- मुमतिना जैसी सिफ़ात से अशआर मुज़इअन है। आमत का ये आलम है कि दरिया सा बहता चला आ रहा है। कई जगा गम में डूबे हुए अशआर ऐसे वाकियात सुनाते हैं कि बेइख्तयार आंखों में आँसू उमड आते हैं।

5. तारीखी नुकता-इ-निगाह से भी से नज़्म दरूसत है। गलतुल आम वाकिआत से इहतराज़ करके सही वाकिआत कीए हैं। तअसुब या रिआइत का दख्ल नहीं। इन वाकिआत पर कई असहाब ने खामा फरसाई की है मगर हकीकत में मुज़तर की नज़्म सही वाकिआत और इहसासात से पुर है। कहीं कहीं तो रामायण और भक्त तुलसी दास के जज़्बात सामने आ जाते हैं। प्रेम और भक्ति काबिले तारीुफ है। बतौर मुज़तर, “उनकी असल उनका खलूस है और बस।”

6. आप के जद्दे अमजद भाई मूल चंद जी आरिफ़ और कामिल बर्जुग हुए हैं। मशहूर फ़ारसी के शायर और गुरू गोबिन्द सिंघ जी के मलिकल-उल-शुअरा भाई नंद लाल जी गोया इन के बजुरगानि सलफ में से थे! गोया शायरी उनको विरसे में मिली है और ज़ौकि सलीम ने आप को शायर बनाया है। हर शेयर जज़्बाति-हकीकी का आईनादार है।

7. मेरा ख्याल है जामि-शहादत हर गुरूद्वारे में मौजूद होनी चाहिए और हर खालसा स्कूलों की लाइब्रेरी में तुलबा के पढ़ने के लिए इसे रखा जाए ताकि फ़र्ज और धर्म की सही तालीम से आने वाली नस्लें फ़ायदा उठा सकें।

सही/- देहरादून
वीर सिंह 09.04.1949

रबीन्द्रनाथ टैगोर

भारत में मुगलों के आक्रमणों से पहले ब्राह्मण मत तथा श्रमण मत का पारस्परिक टकराव रहा। सर्वप्रथम जैन मत ने यज्ञ आदि कर्मकाण्ड में होने वाली परम्पराओं विशेषतः बलि की रस्म का कड़ा विरोध किया। तत्पश्चात् महात्मा बुद्ध ने ईश्वर में विश्वास रखने का मज़ाक उड़ाया। बुद्ध ने सामान्य भाषा का प्रयोग करते हुए पालि में धर्म उपदेश दिए तथा लिपिबद्ध किए, जाति-पाति तथा वर्णाश्रम को तोड़ा। धीरे-धीरे बौद्धों ने राज्य शक्ति प्राप्त कर ली। अशोक, कनिश्क तथा पोरस के समय में यह ताकत चरम सीमा पर थी। वैदिक मत के अनुयायी बौद्ध-शक्ति को सहन तो करते रहे परन्तु उनके मन में इसके प्रति विरोध था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे श्रमण मत के प्रतिनिधि द्रविड तथा वैदिक मत के प्रतिनिधि आर्य थे। इस प्रकार इन दोनों सभ्यताओं में परस्पर टकराव था। शंकराचार्य वैदिक मत को पुनः सजीव करना चाहते थे। उसने वैदिक मत के प्रचार हेतु सार्थक परिभाषा दी तथा हिन्दु समाज को पुनः संगठित किया। तब से हिन्दु धर्म की शुद्धता पर विचार प्रारम्भ हो गया अर्थात् जो भारतीय नास्तिक विचारों को ग्रहण कर चुके थे, उन्हें सनातन धर्म अपनाने के उपाय शुरू हो गए। आठवीं शताब्दी तक बंगाल में हिन्दु धर्म ने पुनः अपना अस्तित्व प्राप्त कर लिया।

इस समय कन्नौज, विद्वान् ब्राह्मणों का केन्द्र था। कन्नौज में से पाँच विद्वान् बंगाल में आमंत्रित किए गए जिनके वंश सम्बन्धी रिकार्ड अभी भी उपलब्ध हैं। इन पाँच विद्वानों में से एक का नाम दक्ष था, जो टैगोर खानदान का बुर्जुग था। बंगाली लोक इन्हें ठाकुर (भाव हाकिम) कहा करते थे। अंग्रेज ठाकुर शब्द का उच्चारण नहीं कर सके तो उन्होंने इन्हें टैगोर कहना शुरू कर दिया। भारतीयों ने इसी शब्द को स्वीकार कर लिया।

यद्यपि मुसलमानों द्वारा आक्रमण बहुत पहले, आठवीं सदी से पूर्व ही प्रारम्भ हो गए थे परन्तु बाहरवीं सदी में बंगाल सहित सारे हिन्दुस्तान पर मुसलमानों ने अधि ाकार कर लिया। इन परिस्थितियों में कुछ व्यक्तियों ने डरते हुए तथा कुछ ने लोभ वश धर्म परिवर्तन कर लिया था। इसी ठाकुर वंश का एक युवक एक मुस्लिम लड़की से प्रेम करने लगा तथा विवाह का प्रस्ताव रखा। लड़की वालों ने यह शर्त रखी कि इस्लाम धर्म अपना लोगे तो निकाह कर देंगे। ऐसा ही हुआ। उच्च वंश का यह तीक्ष्ण बुद्धि युवक, पीर अली खान के नाम से जाना जाने लगा जिसने दक्षिणी बंगाल के जैसौज प्रदेश के सूबेदार से दीवान की कुर्सी प्राप्त कर ली। पीर अली खान के दो

भाई नामदेव तथा जैदेव थे जिन्होंने अपने मुसलमान भाई से सम्बन्ध विच्छेद तो नहीं किए परन्तु वह अपनी हिन्दु परम्परा से ही जुड़े रहे।

खान नमाज़ पढ़ता तथा रोज़े रखता। रमज़ान के एक दिन नामदेव ने देखा, पीर अली खान नींबू सूंघ रहा था। नामदेव बोला- परम्परा अनुसार खाने-पीने की वस्तु को सूंघना भी गुनाह है, क्योंकि माना जाता है कि यह आधा खाना खाने के समान होता है। इस कारण आपका रोज़ा भंग हो गया है। खान को इस कथन पर आपत्ति हुई परन्तु उसके पास इसका कोई उत्तर नहीं था।

उसने अपने महलों में संगीत सभा बुलाई, भोजन की व्यवस्था की तथा अपने हिन्दु भाइयों को निमंत्रण दिया। श्रोतागण संगीत सुनने में मग्न थे। साथ के कमरे में मेहमानों के लिए उनके पसंदीदा पकवान बन रहे थे। भोजन की सुगन्ध इस तरफ आई तो नामदेव ने कहा- बहुत ही स्वादिष्ट सुगन्ध आ रही है पीर खान। खान ने कहा- गाय का मांस बन रहा है, उसकी सुगन्ध है यह। इसे सूंघना, खाने के समान ही होता है जैसे आपका विश्वास है जैदेव। आपका धर्म भ्रष्ट हो गया। कुछ अन्य हिन्दु श्रोताओं सहित यह दोनों भाई नाक बंद कर वहाँ से उठकर आ गए। ऐसा करने से रिश्तेदारी में दोनों भाइयों का अपमान हुआ। ठाकुर जाति के लोगों ने नफ़रत करते हुए वह इन्हें पीराली ठाकुर (पीर अली से पीराली) कहने लगे।

जिस प्रदेश में इनके बुज़ुर्ग दक्ष को सम्मान हेतु आमंत्रित किया गया था, वहाँ तब तिरस्कार प्रारम्भ हो गया। पहले तो हौसले के साथ 'दड़ वट्ट ज़माना कट्ट' नीति अनुसार दिन बिता रहे थे परन्तु स्थिति ऐसी आ गई थी कि अन्य ठाकुरों ने इनकी पुत्रियों के विवाह तथा अपनी पुत्रियों का विवाह इनके साथ करने पर प्रतिबन्ध लगा दिया। एक साहसी युवक जगननाथ कुशार ने भाईचारे की परवाह न करते हुए पीराली ठाकुरों की लड़की से विवाह कर लिया, परिणामस्वरूप उसे भी उजड़ना पड़ा।

कुशार परिवार तथा पीराली परिवार ने अनुभव किया कि ऐसा कर्मकाण्ड जो नफ़रत का उत्पादक है, उजाड़ देता है, उसके भार से मुक्त होना चाहिए। बड़ी से बड़ी चोट ओर कर भी क्या सकती है? सिद्ध करें कि हम मानवता के हित हेतु कितने सुहृद् हैं। अकेली ब्राह्मण जाति नाराज़ भी हो गई तो क्या? अन्य लोग कौन से पशु हैं? उनके हृदय में अपना स्थान बनायेंगे। उच्च वंश के लोगों के पास, अपमान के अतिरिक्त, देने के लिए कुछ नहीं होता।

सत्रहवीं सदी के अंत तक अंग्रेजों ने व्यापार में अपनी पकड़ पक्की कर ली। उनकी प्रसिद्धि की कहानियाँ हिन्दु परिवारों में तो प्रचलित थीं ही, मुसलमान भी उनके विषय में सजग रहने लगे। अंग्रेजों में न तो जाति अभिमान था, न हिन्दुओं के रहन-सहन तथा खाने-पीने जैसी बंदिशें। पीराली खानदान गोबिन्दपुर नामक बस्ती

में रहने लगा। यह स्थान बंदरगाह के समीप था जहाँ से अंग्रेज अपने जहाज़ों द्वारा माल की लाते ले जाते थे। यह गरीब मछुआरों की बस्ती थी। इस निम्न जाति को जब पता चला कि नए आए लोग ब्राह्मण हैं तो उनके मन में दया और आत्मसम्मान की भावना उत्पन्न हुई कि ऐसे ब्राह्मण भी हो सकते हैं जो मछुआरों से नफ़रत नहीं करते, उनके साथ रहने लगे हैं। मछुआरे इनको सत्कार पूर्वक 'ठाकुर चाचा' कहकर बुलाने लगे। यह भी उनके सुख-दुःख में सहायक बनते।

परमात्मा को यही बात पसंद आई। तिरस्कृत ब्राह्मण जब मछुआरों के साथ रहने लगे तो इनका भाग्य बदलने लगा। धीरे धीरे इनके कर्तव्य बढ़ने लगे तथा इन्हें प्रिंस तक की उपाधियाँ प्राप्त हुईं। सम्भव है यदि यह परिवार जाति द्वारा निष्कासित नहीं किया जाता, तो परिवार के अन्य सदस्यों के समान आयु व्यतीत करते हुए मरते एवं जन्म लेते रहते। यह सोना नफ़रत की आग में से निकलकर पहले से शुद्ध हो गया।

रबीन्द्र नाथ के बाबा द्वारका नाथ की आयु अभी 13 वर्ष की थी जब उनके पिता का देहांत हो गया। द्वारका इतना उद्यमी था कि उन्नति करते हुए नील के कारखाने लगा लिए, शीरे, चीनी की फैक्ट्री लगाई तथा खानें खरीद कर कोयला निकालना प्रारम्भ कर दिया। बंगाल तथा ओड़ीसा की बंदरगाहों पर नावों का मज़बूत बेड़ा तैयार किया। सफलता मिलती गई तो द्वारका नाथ ने भारत की राजधानी में आधुनिक बैंक की स्थापना की जिसका नाम यूनीयन बैंक रखा। इस समस्त कारोबार को टैगोर ऐंड कम्पनी के अधीन रखा।

धीरे-धीरे एक सामान्य घर महल का रूप धारण करने लगा जहाँ विचार-गोष्ठियाँ होती, संगीत सम्मेलन होते तथा अंग्रेजों सहित अन्य बड़े लोगों को विस्की और शानदार खाने-पीने की दावतें दी जातीं। सुगन्धित तम्बाकू के हुक्के सारा दिन घूमते रहते। कलकत्ता के बिल्कुल मध्य जोड़ासांको नामक नगर में स्थित यह महल आज भी उनके खानदान के वैभव ओर समृद्धि का बोधक है। वर्तमान में यह विद्या का केन्द्र तथा शानदार ऐतिहासिक यादगार है।

वह अत्यधिक उदार हृदय व्यक्ति थे। कोई संस्था ऐसी नहीं थी जो यह कह सके कि दान नहीं मिला। वर्ष 1816 में उन्होंने पहले हिन्दु कॉलेज की स्थापना की जो अंग्रेजी तर्ज़ पर सैकुलर संस्था थी। पहले पाठशालायें हिन्दुओं तथा मुसलमानों के लिए अलग-अलग थीं। बाद में इसका नाम प्रैज़ीडैंसी कॉलेज रखा गया। 1835 में उन्होंने कलकत्ता में पहले मेडिकल कॉलेज की तथा अस्पताल की स्थापना की। जरूरतमंद विद्यार्थियों को वजीफें दिए गए। मृत शरीर के साथ छेड़खानी करना पाप है, हिन्दुओं के इस भ्रम को दूर करने के लिए वह प्रयोगशालाओं में विद्यार्थियों के साथ दिन व्यतीत करते।

1784 ईसवी में अंग्रेजों ने ऐशियाटाक सोसाइटी ऑफ बंगाल की स्थापना की तो द्वारका नाथ को प्रथम भारतीय सदस्य चुना गया। इसी सोसाइटी में से आरकियालोजी सर्वे ऑफ इंडिया, जिआलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, बोटानिकल एंड जिआलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, आधुनिक वैज्ञानिक संस्थाएँ निर्मित हुईं। उसने सागर पार कर हिन्दु परम्परा का उल्लंघन किया।

वह प्रत्येक उस कदम के साथ चलने लगते जो कदम लोकहित को आगे बढ़ रहा होता। राजा राम मोहन राय को आधुनिक बंगाल का निर्माता कहा जाता है, जिन्होंने बंगाली समाज के पिछड़े वहम-भ्रम दूर करने हेतु एक प्रकार युद्ध शुरू किया। राजा जी का उदार हृदय देख द्वारका दास ने उन्हें अपना मित्र बना लिया तथा लोकहित दान देते रहे। उनको पूर्ण विश्वास था कि ब्रिटिश राज्य दौरान भारत आधुनिक वैज्ञानिक युग में प्रवेश कर सकेगा। यह भी अंग्रेजों के कारण ही था कि पारम्परिक टुकड़ों में विभाजित भारत एक हो गया।

1842 में पहली बार तथा 1844 में दूसरी बार इंग्लैंड गए। वहाँ से फ्रांस की यात्रा की। पैरिस में वह नौजवान विद्यार्थी फ्रैडिंक मैक्स मूलर से मिले जो प्रोफैसर बरनोव के निर्देशन में ऋग्वेद का अध्ययन कर रहा था। अपनी जीवनी में मैक्स मूलर ने द्वारका नाथ के विषय में बहुत ही सुन्दर शब्दों में कहा है- "मेरे मन में इस हिन्दुस्तानी व्यक्ति ने स्थायी याद बनाई हुई है। मैं उस दावत में शामिल हुआ जो फ्रांस के बादशाह लूई फिलिप के सम्मान में द्वारका नाथ ने आयोजित की थी। विशाल मेहमान घर रेशमी, शानदार कश्मीरी शालों, पश्मीनों ने ऐसे ढक रखा था जैसे हम सभी उस भवन में बैठे उड़ रहे हों।"

अगस्त 1846, 52 वर्ष की आयु में उनका लंदन में देहांत हुआ तो समाचारपत्र ***द टाईमज़*** ने 3 अगस्त 1846 को लिखा, "भारत में उस जैसा अन्य कोई नहीं था जो अपने आस-पास रहते लोगों का सदैव भला सोचे, सुरक्षा प्रदान करे। भारत तथा इंग्लैंड में ऐसे लोगों की कमी नहीं, जिन्होंने द्वारका नाथ द्वारा सफलता प्राप्त की हो तथा जो इस ठाकुर के ऋणी हों।"

द्वारका नाथ के तीन बेटे थे, जिसमें से सबसे बड़ा दविन्द्र नाथ हमारे नायक रबिन्द्रनाथ का पिता था। दविन्द्रनाथ धनाढ्य पिता का लाडला बेटा अवश्य था, परन्तु सांसारिक वैभव, धन, दावतों आदि से निर्लेप। पिता जी को लोग सम्मानपूर्वक प्रिंस कहते थे तो दविन्द्र को ऋषि कहा जाने लगा। पिता की अपेक्षा आत्मिक रूप से वह राजा राम मोहन राय के अत्यधिक करीबी थे, जिस कारण उन्हें राजा जी का उत्तराधिकारी माना गया।

दविन्द्र नाथ की आयु दस वर्ष थी जब उनकी दादी जी का निधन हो गया। मृत्यु से पूर्व दादी जी को गंगा तट पर एक कुटिया में लेकर गए क्योंकि विश्वास था कि इस स्थान पर मुक्ति प्राप्त होती है। तीन दिन तक दादी मृत्यु से संघर्ष करती रही तथा पौत्र बैठा पहरा देता रहा। अपनी यादों में दविन्द्र ने लिखा, "मृत्यु से पूर्व पहली रात को जब मैं नदी के तट पर अकेला बैठा तभी अकस्मात् मुझे कोई दैवी अनुभव हुआ। मैं मूर्च्छित अवस्था में आ गया। मैं पहले जैसा नहीं रहा था। धन-वैभव के प्रति मेरा मोह भंग हो गया था। जिस फटी-पुरानी बांस की चटाई पर मेरा आसन था, ऐसा अनुभव हुआ जैसे सबसे बहुमूल्य एवं उपयोगी वस्तु मेरे लिए यही है, अन्य सब आडम्बर हैं।" इस घटना के सम्बन्ध में ऐविलिन अंडरहिल्ल ने लिखा है, "आत्मा की उड़ान के ऐसे रहस्यमयी प्रमाण इतिहास में कम मिलते हैं।"

पिता अपने पुत्र के इा स्वभाव से परेशान रहते। किसी ने भी नहीं सोचा था कि द्वारका नाथ का 52 वर्ष की आयु में निधन हो जायेगा, परन्तु इंग्लैंड जाने से पूर्व यह सोचकर कि कहीं कारोबार तबाह न हो जाये तथा मेरे तीनों पुत्र संकट का शिकार न हो जायें, बहुत ज़मीन अपने तीनों पुत्रों के लिए खरीद ली। देहांत के पश्चात् यही हुआ। कारोबार में बहुत आर्थिक हानि हुई, कारोबार बंद हो गए, परिवार को दिवालिया इसलिए घोषित नहीं किया गया क्योंकि लेनेवाले यह जानते थे कि द्वारका नाथ अत्यधिक दयालु व्यक्ति थे। पुत्रों ने लेने वालों से कहा कि हम खुशी से ऋण उतारने के इच्छुक हैं, समस्त जायदाद अपने नाम वसीयत करवा लो। उन लोगों ने कहा- नहीं, आप नेक व्यक्ति की संतान हो। हम आपस में मिलकर कारोबार को फिर से उसी स्थिति में ले आयेंगे तथा आपको अच्छा वेतन मिलता रहेगा।

शीघ्र ही व्यापार फिर से समतल हो गया। दविन्द्र नाथ ने न केवल मिश्रित व्याज सहित अपना ऋण उतारा, अपितु घोषणा की, "लंदन जाने से पूर्व जिन संस्थाओं के साथ पिता जी ने वायदा किया था कि दान देंगे, मैं पिता जी की इस इच्छा को अवश्य पूरा करूँगा।"

वह अनेक महीनों के लिए एकांतवास हेतु हिमालय चले जाते जहाँ सतत बंदगी करते रहते। वर्ष 1858 में उन्होंने देखा, निर्मल झरना स्वच्छ जल भेज रहा है। उसके बहाव के साथ साथ वह नीचे उतरते गए। मैदानों में आकर देखा कि उस झरने का पानी मैला हो गया है, साथ ही यह देखा कि उस मैले पानी से किसान फसलों की उपज बढ़ा रहे हें। उसी समय विचार आया- मैं कितना गलत था जो ये सोचता था कि बंदगी करने हेतु हिमालय की ऊँचाई अनिवार्य है। इस झरने के समान मैं लोगों के बीच जाऊँगा, जिसे मैल समझता रहा वही पैदावार के लिए आवश्यक है, यही हमारी कर्मभूमि है। सांसारिक कर्म निभाता हुआ मैं परमात्मा के समीप रह

सकूँगा। उन्होंने अनेक बार संन्यास लेने के विषय में सोचा, परन्तु त्याग दिया तथा धार्मिक कर्त्तव्यों को गृहस्थ जीवन बिताते हुए ही निभाया।

7 मई 1861 को रबीन्द्र का जन्म हुआ। बहन-भाई जितने गोरे थे, उनकी अपेक्षा रवि का रंग सांवला था। बड़ी बहन कहा करती थी- नहीं गोरा तो न सही, मेरी रवि (सूर्य) वीर की किरणें विश्व को प्रकाशित करेंगी। शारदा देवी विशाल परिवार की अत्यन्त धैर्यशाली माँ थी, जिसके स्वयं के 14 बच्चे तो थे ही, चाचा-चाची के बच्चों को भी संभालती, तथा स्वयं ही यह परम्परा बना ली कि बेटियाँ तथा दामाद यहाँ जोड़ासांकी के विशाल घर में रहेंगे।

बालक रबीन्द्र को नौकरों की निगरानी में रखा गया जिस कारण वह चिड़चिड़ा तथा हठी हो गया। तंग आकर नौकर उसके आस-पास चारपाई की दीवार बनाकर उसे इस पिंजरे में बंद कर कहते- यदि बाहर निकले तो मर जाओगे। इस उदासीन माहौल का वर्णन उन्होंने अपनी पुस्तक ***मेरा बचपन*** में किया है।

बड़ा भाई जतिन्द्रनाथ कवि, संगीतकार, दार्शनिक तथा गणित-शास्त्री था। रबीन्द्र ने इस भाई से कविता लिखना तथा लय में उसका उच्चारण सीखा। दूसरा भाई सतिन्द्रपाल आई.सी.एस. करने में सफल रहा तथा समस्त आयु सत्ता की कुर्सी पर विराजमान रहा। यह अच्छा पाठक तथा लेखक था। बंगाली, संस्कृत तथा अंग्रेजी तीनों भाषाओं में वह निपुण था। उसने गीता तथा मेघदूत का बंगाली कविता में पहली बार अनुवाद किया। उसने मराठी क्लासिकल ग्रन्थों के अनुवाद बंगाली भाषा में किए। पिता दविन्द्रनाथ की जीवनी का उसने अंग्रेजी में अनुवाद किया जिसे मैकमिलन लंदन ने प्रकाशित किया था। सतिन्द्र की पत्नी बहुत सुन्दर थी। जब बिना मुख ढके वह उसको तांगे में बिठाकर सड़क से स्टेशन जाने के लिए गुजरा तो यह खबर जंगल की आग की तरह फैल गई। प्रत्येक यही कह रहा था- इतना बड़ा कलंक यह कैसे मिटायेंगे? परन्तु सतिन्द्र धुन का इतना पक्का था कि जब इंग्लैंड गया तो पत्नी को साथ लेकर गया। यहीं 14 वर्ष की आयु में पहली बार रविन्द्र पढ़ने के लिए अपने भाई के साथ रहा। यहाँ इसका मन भी लग गया था।

हिमिन्द्रनाथ तीसरा भाई था जिसका देहांत 40 वर्ष की आयु में हो गया था। अपने इस भाई का वर्णन रविन्द्र सम्मानपूर्वक करता है। इसने कहा था कि प्रारम्भ में अंग्रेजी नहीं, बंगला सीखनी है। टैगोर ने लिखा है- जब अन्य बच्चे जल्दी जल्दी अंग्रेजी बोल रहे होते तो उस समय मैं बी ए डी- बैड तथा एम ए डी- मैड का रट्टा लगा रहा होता। मेरे भाई का निर्णय, बिल्कुल सही था। बाद में इसी नीति को मैं स्वयं लागू करता रहा जो सफल सिद्ध हुई।

घर में सादगी का वातावरण था परन्तु आर्थिक तंगी नहीं थी। रवी बचपन के दिनों का स्मरण करते हुए लिखता हैं- "खाने-पीने की अनेक वस्तुएँ होतीं। वस्त्र भी अच्छे होते, यद्यपि आजकल के बच्चों को यह अच्छे न लगते हों। दसवीं उत्तीर्ण करने से पूर्व सुन्दर पंजाबी जूती नहीं मिल सकती थी। सर्दियों में मोटा सूती कपड़ा होता । कभी ऐसा अनुभव नहीं हुआ कि भेदभाव रखा गया है। उस समय शिकायत अवश्य करते जब बूढ़ा दर्जी कुर्ते पर जेब लगाना भूल जाता, क्योंकि घर का कोई भी बच्चा इतना गरीब नहीं था कि जेब में डालने के लिए कुछ पैसे उसके पास न हों।"

रवी का बचपन रंग रंग की कल्पना से इस तरह पूर्ण था कि उसे कोई भी सत्य कथन अच्छा नहीं लगता था। अब्दुल मल्लाह मछलियाँ लेकर आता था। उसने बालक रवी को एक घटना सुनाते हुए कहा, एक बार वह चैत्र के अंत में मछलियाँ पकड़ने के लिए गया तो आंधी आ गई। नाव संभल नहीं पा रही थी। उसने नाव की रस्सी पकड़ी तथा पानी में कूद गया। बहुत मुश्किल से वह उसे घसीटता हुआ तट पर पहुँच गया। रवी का कथन है, "यह कहानी मेरे स्वभाव के विपरीत शीघ्र ही समाप्त हो गई। नाव भी नष्ट न हुई, मल्लाह भी सुरक्षित रहा। यह क्या कहानी हुई?" मैंने बार बार पूछा- फिर क्या हुआ? आगे बताओ क्या हुआ? अब्दुल क्या बताता जब कुछ हुआ ही नहीं। मैं जिद्द करता रहा तो वह बोला- मैंने देखा आंधी आने पर एक चीता वृक्ष पर चढ़ गया था परन्तु जब तेज़ आंधी के कारण वृक्ष नदी में गिर गया तो चीता नदी में डूबने लगा। डूबता तैरता वह नदी के तट पर आ गया। उसे बहुत भूख लगी हुई थी मुझे देखते ही उसकी आँखों मे चमक आ गई और वह लार टपकाने लगा। उसका इरादा जानते ही मैंने रस्सी की गांठ लगाकर फांसी जैसा एक फंदा बना लिया जो खींचने से और भी तंग हो जाता था। जब वह आगे के पंजे उठाकर मेरी तरफ बढ़ा तो मैंने फंदा उसकी तरफ फेंक दिया तथा गले में पड़ते ही रस्सी को खींच दिया। जैसे जैसे वह फंदे में से निकलने का प्रयास करता, उसमें ओर भी जकड़ जाता। अंत में उसकी जीभ बाहर निकल आई।

"वह मरा नहीं?" मैंने जोश में आकर उससे पूछा- बाढ़ पार कर मैंने भी तो बहादुरगंज वापिस जाना था, मैं क्यों मरने देता? मैंने उसे अपनी नाव के आगे जोत लिया। चालीस मील तक उससे नाव खिंचवाई। जब वह चीखने लगता तो मैं पतवार के साथ उसे पीटता। पन्द्रह घंटों के सफर को उसने डेढ घंटे में ही तय कर लिया। बस बरखुर्दार, आगे अन्य कोई प्रश्न मत करना। मेरे पास कोई और उत्तर नहीं।

“अच्छा, “चलो यह तो हुई चीते की बात। अब मगरमच्छ के विषय में कोई बात सुनाओ।” अब्दुल कहने लगा, “मैंने उसके नाक की करूंबल पानी में से बाहर अनेक बार देखी है। धूप में लेट कर वह मुस्कराता है। यदि मेरे पास बंदूक होती तो मैं उसे बता देता कि मैं कौन हूँ परन्तु मेरा लाईसेंस खत्म हो चुका है। फिर भी एक दिन की बात सुनाता हूँ। एक ग्रामीण स्त्री नदी के तट पर दात्री से बांस छील रही थी तथा उसकी बकरी समीप ही घास चर रही थी। मगरमच्छ आया तथा उसकी बकरी को घसीटता हुआ पानी में ले गया। स्त्री ने आगे देखा न पीछे, उसी क्षण नदी में छलांग लगा दी और मकर की पीठ पर बैठ गई तथा दात्री से उसका गला काटने लगी। मकर ने बकरी को छोड़ दिया तथा स्वयं पानी के अन्दर चला गया।

“फिर? आगे?” मैंने हैरान होते हुए पूछा।

“अरे यार, मगरमच्छ डूब गया तो कहानी भी उसके साथ ही डूब गई। जब मकर निकलेगा तो कहानी भी निकल आएगी परन्तु मगरमच्छ को बाहर आने में अभी समय लगेगा। अब किसी को भेजूँगा यह पता करने के लिए कि आगे क्या हुआ, तब तुम्हे बताऊँगा।”

अब्दुल तब से अभी तक वापिस नहीं आया। मगरमच्छ को ढूंढ रहा होगा।

कल्पना में रवी अध्यापक बन जाता तथा जंगले की सलाखें उसकी कक्षा की छात्राएँ थीं। उनमें से कुछ अत्यधिक शैतान थीं तथा पढ़ने में ध्यान नहीं देती थीं। “मैं उन्हें भयानक कथनों का प्रयोग कर भयभीत करता कि बड़ी होकर मज़दूरी करोगी। छड़ी से वार भी करता। सिर से पैरों तक उनके शरीर पर मेरी मार के निशान थे, परन्तु फिर भी शैतानी करने से हटती नहीं थीं? वह तो शरारतें करने से हटी नहीं, परन्तु मैंने पढ़ाना अवश्य बंद कर दिया।”

कुछ समय तक घर में पढ़ाने के लिए टयूटर आते थे। बहन -भाइयों को बग्घी में बैठकर विद्यालय जाते देखता तो रवी चिल्लाता कि मुझे भी विद्यालय में दाखिल करवाओ। मैंने घर में रहकर नहीं पढ़ना। अध्यापक ने थप्पड़ मारते हुए कहा- आज स्कूल जाने की जिद्द कर रहे हो, कल स्कूल न जाने के लिए आसमान सिर पर उठा लोगे। यह भविष्यवाणी सही सिद्ध हुई। बालक का मन कभी भी स्कूल में नहीं लगा। आठ वर्ष की आयु में ही उसने कविता लिखनी प्रारम्भ कर दी।

व्यावहारिक प्रकार की शिक्षा से वह शीघ्र ही ऊब जाता। लिखता है, “मैंने पुस्तक में पढ़ा था कि मानव ने सबसे बड़ी खोज उस समय की जब उसे आग जलानी आ गई। मुझे यह बात सही नहीं लगी। मैं सोचता, चिड़ियों को भी तो आग जलाना नहीं आता फिर क्या हो गया? उनके माता-पिता को रात्रि में दीया जलाने की भी

आवश्यकता नहीं। न ही स्कूल जाना पड़ता है इसलिए एक ही पाठ जो उन्हें याद हो गया है उसे ही सुबह शाम आनन्द से गाती रहती हैं।"

रवी के पिता अकसर हिमालय यात्रा पर जाते तथा एकांत में सिमरन करते; कभी कभी रवी को भी साथ ले जाते। एक बार पिता-पुत्र हिमालय जाने के लिए अनेक दिनों तक अमृतसर में रूके तथा हरिमन्दिर साहिब के दर्शन किए। देर तक कीर्तन सुनते, संगत के साथ कीर्तन में शामिल होते।

जब माता-पिता ने देखा कि पढ़ने में अधिक होशियार नहीं है तो उन्होंने स्कूल बदलने के विषय में सोचा। सेंट ज़ेवीअर स्कूल में दाखिल करवा दिया। यहाँ भी अन्तर दिखाई नहीं दिया। रवी ने लिखा, "यह भी अस्पताल तथा कैदखाने का मिलाजुला रूप था।" अध्यापकों ने देख लिया कि इस नालायक ने कभी भी नहीं ढ़ना, तंग आकर उन्होंने डांटना भी बंद कर दिया। इतनी बात तो अवश्य थी कि जब उसने बंगला पढ़नी सीख ली तो वह हाथ आने वाले प्रत्येक कागज़, पुस्तक को पढ़ कर ही सांस लेता। वह अनथक पाठक था। चौदह वर्ष की आयु में उसकी कविता फरवरी 1876 में अमृत बाज़ार पत्रिका में प्रकाशित हुई, तो सिद्ध हो गया कि उसकी आन्तरिक शक्तिशाली प्रतिभा प्रकट होने लगी है।

इसी वर्ष मार्च में माँ का देहांत हो गया। रवी के कोमल हृदय को गहरा आघात न पहुँचे, भाई जतिन्द्र की पत्नी कदम्बरी ने अत्यधिक स्नेह दिया। बंकिम चन्द्र चैटर्जी का नॉवल बंग दर्शन प्रकाशित हुआ तो बंगाल में जैस तूफान आ गया। घर घर में यह नॉवल पढ़ा गया। भाभी चाहती तो स्वयं पढ़ सकती थी, परन्तु वह रवी से कहती- तुम पढ़कर सुनाओ। बिजली तो थी नहीं, भाभी पंखा करती, रवी नॉवल पढ़कर सुनाता। दूसरी तरफ भाई जतिन्द्र नाथ जो संगीतज्ञ प्रतिभा का धनी था, प्यानो उठा लाता, सूक्ष्म धुनें बजाते हुए कहता- रवी, इस मूक साज़ को शब्द दो। रवी गीत बनाता, गुनगुनाता तथा गीत को पूरा करता। इस प्रकार रवी की भीतरी कला को तो प्रकट होती ही, उसे ऐसे सहयोगी भाई-भाभी मिले कि आस-पास का वातावरण अपनत्व पूर्ण हो जाता, स्नेहमयी हो जाता। छोटी कली को विकसित होने के लिए जिस प्रकार की सामग्री चाहिए थी, वह सब विद्यमान थी। रवी ने लिखा, "भाई-भाभी की कैद से निकलने का प्रयास नहीं किया, क्योंकि इसकी आवश्यकता नहीं थी। इस कैद में से जब कभी मैं मुक्त हुआ तो मुझे दुःख के अतिरिक्त कुछ नहीं मिला।"

भाई के साथ वह अपनी सम्पत्ति के निरीक्षण एवं दौरे हेतु जाता। भाई शेर के शिकार पर जाते समय रवी को साथ लेकर जाता। शेर के शिकार सम्बन्धी एक घटना के विषय में रवी ने लिखा है- "बहुत घना जंगल था। धूप-छाया में कहीं भी शेर दिखाई नहीं दिया। ज्योति दादा (जतिन्द्र भाई) ने बांसों की एक कच्ची, काम

चलाने योग्य सीढ़ी बनाई तथा हम भरी बंदूक लेकर एक वृक्ष पर चढ़ गए। मेरे पास शेर की बेइज़्जती करने के लिए कोई डण्डा या लाठी भी नहीं थी। बहुत देर लगातार देखते रहने पर दूर घनी झाड़ियों में आते हुए शेर के पैर दिखाई दिए, भाई ने उसी समय गोली चला दी। गोली जंगल के राजा की रीढ़ की हड्डी को चीरती हुई निकल गई तथा वह वहीं ढेर हो गया। अत्यधिक भयानक आवाज़ में दहाड़ता रहा, जहाँ जहाँ उसके पंजे जा सकते थे, झाड़-फूंस तथा बिखरे पत्तों पर झपटता रहा, जोर जोर से पूंछ को धरती पर पटकता रहा। मैं समझ गया कि वह मर गया है क्योंकि शेरों का यह स्वभाव नहीं होता कि वह धैर्यपूर्वक लम्बे समय तक मरने की प्रतीक्षा करें। मैंने सोचा हो सकता है कल रात किसी ने इसके खाने में अफीम मिला दी हो।

सतिन्द्र नाथ, जो ज़िला के सैशन जज थे, उन्होंने छुट्टियाँ बिताने के लिए इंग्लैंड जाना था। उसने पिता जी से कहा रवी साथ चले तो अच्छा होगा। यहाँ पढ़ता नहीं, वहाँ पढ़ सकता है। वकील का भी बहुत सम्मान होता है। वकालत कर ले। पिता जी मान गए। भाई का परिवार पहले से निकल चुका था। तभी यह निर्णय लिया गया कि पहले सतिन्द्र, रवी को कुछ समय अहमदाबाद में बने अपने बंगले में ठहराकर अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजों के रहन-सहन के ढंग सिखाए, तत्पश्चात् इंग्लैंड चले जाएँ। जिस हवेली में जज का निवास था, वह बादशाह शाहजहां द्वारा बनवाया गया महल था। इसमें अंग्रेजी, बंगला तथा संस्कृत की अनमोल पुस्तकें थीं। बालक रवी ने इन पर भूखे शेर के समान हमला कर दिया। यहाँ उसे अंग्रेजी साहित्य की समृद्धि का बोध हुआ, पहले तो अध्यापक जबरदस्ती पढ़ाते थे, परन्तु अब वह स्वयं इस उपवन में प्रवेश का चुका था। उसने अंग्रेजी भाषा द्वारा यूरोप के अन्य साहित्य का अध्ययन भी यहीं रहकर किया। साथ ही साथ नोटस लेता, लम्बे आलोचनात्मक निबन्ध लिखता तथा प्रकाशन हेतु भेजता। इन दिनों उसके जो लेख भारतीय में प्रकाशित हुए थे, वह हैं- ***द सैकशंज़ एण्ड ऐंग्लौ सैकसन लिटरेचर, द नार्मनज़ एण्ड ऐंग्लो नार्मन लिटरेचर, पैट्रारक एण्ड लोरा, दांते उण्ड हिज़ पोइट्री, गेथे, पैटटर्न*** **आदि।** अल्पायु में ही वह विचार एवं चिन्तन-मनन करने लगा था। उदाहरण स्वरूप कुछ वाक्य प्रस्तुत हैं-

"ऐसे लोग बहुत ही कम होते हैं जो धनी होते हुए भी निर्धन दिखाई दें। मैं इतना गरीब हूँ कि कोट के पीतल के बटनों पर सोने का पानी चढ़वा गर्वित होकर घूमता हूँ। मुझे इतना अमीर होना होगा कि एक दिन बता सकूँगा- यह पीतल के हैं।"

"कहा जाता है प्यार अंधा होता है। इसका यह अर्थ तो नहीं कि कहीं भी ज्यादा देखने का भाव अंधा होता है, क्योंकि प्रेम जहाँ आँखों की धारा को तेज करता है, वहाँ बुद्धि कम कर देता है।"

"मित्रता और प्रेम में अन्तर है कि मित्रता से संसार का बोध होता है तथा प्रेम में दो व्यक्तित्वों का बोध होता है। मित्रता में एक जमा एक बराबर है तीन, प्रेम में एक जमा एक का अभिप्राय है एक।"

"वेदना, स्वयं में गुम हो जाना है। यही कारण है कि सुन्दरता हमें अपने से बाहर निकाल कर खुद प्रवेश कर जाती है तथा हम आनन्द विभोर हो जाते हैं।"

"कुछ लोगों का विचार है कि स्त्री शून्य के समान है तथा पुरुष 1 अंक के समान। यदि 1 के दायीं तरफ शून्य लगा दो तो 10 की संख्या हो जाती है तथा यदि बायीं तरफ लगा दो तो 1, अकेला रह जाता है।"

"हमारे बुर्जुग कहा करते थे कि लज्जा स्त्रियों का सबसे सुन्दर आभूषण है परन्तु स्त्रियाँ स्वयं को आभूषणों से इस कदर लाद लेती हैं कि लज्जा पहनने हेतु कहीं स्थान ही नहीं बचता।"

अहमदाबाद में वह चार मास तक रहा। यह चार मास का समय कोई चमत्कार ही था, क्योंकि इन दिनों संगीत की ऐसी धुनों का प्रवेश रवी में हुआ कि बाद में वह रवीन्द्र संगीत पद्धति ही बन गई जो बंगला संगीत पद्धति से पृथक् शैली है। कभी गीत पहले लिखा जाता, संगीत के सुर बाद में आते। कभी कभी दोनों एक साथ ही उतरते, कभी संगीत की धुनें पहले प्रकट हो जातीं तो रवी उन्हें शब्द देने के लिए व्याकुल हो जाता। यहाँ से यह सिलसिला इस प्रकार प्रारम्भ हुआ कि रवी ने जीवन में दो हज़ार गीत लिखे। बंगला के ज्ञाता लोग बताते हैं कि उसके गीतों ने उसकी कविताओं को पीछे छोड़ दिया था।

भाई ने सोचा कि अभी इंग्लैंड जाने के लिए प्रशिक्षण अधूरा है। एक मराठी मित्र मुम्बई में डॉक्टर था जो अंग्रेजी सभ्यता का धारणी समाज सुधारक था। डॉक्टर की बेटी अन्ना इंग्लैंड से वापिस आई थी। उसे यह काम सौंपा गया कि वह रवी को इंग्लैंड के रहन-सहन से परिचित करवाये क्योंकि कभी पेइंग गैस्ट के रूप में रवी को अंग्रेज के घर में रूकना होगा। इस मधुर एवं कोमल स्वभाव वाली अध्यपिका को रवी कभी भूला नहीं सका। अपनी आयु के अंतिम महीनों में उसके विषय में लिखता हुआ कहता है, "उस समय मुझमें कोई गुण नहीं था, इस कारण यदि वह मुझे अनदेखा कर देती तो भी दोष मेरा होता परन्तु उसने ऐसा नहीं किया। मैंने उसे बताया कि मैं केवल कविता लिख सकता हूँ, ओर कुछ नहीं जानता। उसने मेरी इस बात को बिना संदेह मान लिया। कोई प्रश्न नहीं किया, न ही कहा तुम सिद्ध करो कवि हो। उसने केवल एक ही मांग की- मुझे एक नाम दो। मैंने उसे जो नाम दिया, उसे प्राप्त कर वह बहुत प्रसन्न हुई कहा- जितना सुन्दर तुमने ये शब्द चुना है, मैं वैसी नहीं हूँ। मैं चाहता हूँ संगीत के समान यह नाम मेरी कविताओं की रूह बन जाये। उसके

लिए मैंने एक गीत लिखा, और उसमें इस नाम का भी प्रयोग किया। सुबह सुबह राग भैरवी में मैंने यह गीत सुनाया तो उसने कहा- दफनाने के लिए रखी मेरी मृत देह के समीप यह गीत गाया जाए तो मैं पुनः जीवित हो जाऊँगी। लड़कियों को पता होता है कि हौसला कैसे बढ़ाया जाता है। व्यक्ति को यह सुनकर बेशक प्रसन्नता हो या न हो परन्तु वो ऐसा करते हुए आनन्द प्राप्त करती है। उसने मुझे सलाह दी कि कभी भी दाढ़ी मूछ मत रखना, क्योंकि तुम्हारे चेहरे पर एक भी ऐसी रेखा नहीं जिसे छिपाना चाहिए। सभी जानते हैं कि मैंने उसकी इस बात को नहीं माना। उस लड़की का विवाह स्काटलैंड के नागरिक से हुआ तथा कुछ समय पश्चात् उसकी मृत्यु हो गई। रवीन्द्र की कविताओं में वह जीवित है।

वर्ष 1878 में भाई के साथ इंग्लैंड में लंदन पहुँच गया, जिसके प्रथम प्रभाव में रवी ने लिखा, "ऐसा मनहूस शहर मैंने पहले कभी नहीं देखा था। धुएँ के कोहरे में लिपटा हुआ... हड़बड़ी में भागे जाते एक दूसरे के कँधे से टकराते लोग... यहाँ पुस्तकों की दुकान कहीं दूर ही दिखाई देती है, शराब का ठेका सड़क के प्रत्येक मोड़ पर है।

"लड़कियाँ प्यानो बजाते हुए गाती हैं। आग के समीप बैठी रहती हैं। मेहमानों का मनोरंजन करती हैं, खुश होने के लिए मज़ाक कर लेती हैं। यहाँ के लोगों का मानना है जब तक मैं लंदन नहीं आया था, मुझे पता नहीं था कि सभ्यता क्या होती है। एक सज्जन ने मुझे बहुत गंभीरता से समझाया कि कैमरा किस चीज़ का नाम है। एक मैडम ने मुझसे पूछा- तुमने पहले कभी प्यानो देखा था? प्रातः छह बजे उठकर मैं ठण्डे पानी से स्नान करता हूँ, जिसे भी इसके बारे में पता चलता, बहुत हैरान होता।"

कुछ समय पश्चात् वह मिस्टर बार्कर के घर में पेइंग गैस्ट के रूप में रहने लगा। पति-पत्नी का आपस में झगड़ा रहता था। बार्कर जब गुस्से मे होता तो पत्नी की अपेक्षा अपने कुत्ते को डांटता। खाने के मेज़ पर किसी खाने वाली वस्तु की आवश्यकता के बारे में जब बार्कर कहता तो पत्नी डांटती- आपको थोड़ा नम्र होनालो होगा मिस्टर। बार्कर कहता- मैंने वाक्य बोलते समय 'प्लीज शब्द का प्रयोग किया था। मैडम कहती- मुझे नहीं सुनाई दिया ये शब्द। बार्कर कहता- तब तुम अपने कानों का इलाज करवाओ। मेरा इसमें क्या दोष? मैंने तो प्लीज़ कहा था। बस इसी बात पर झगड़ा बढ़ जाता।

उसने घर बदल लिया तथा डॉ. स्कॉट के घर रहना शुरू किया। इस डॉक्टर की दो जवान बेटियाँ इस कारण घर से भाग गईं कि घर पर एक काले हिन्दुस्तानी

का कब्ज़ा होने लगा है। जब उन्हें यकीन हो गया कि यह काला लड़का बदमाश नहीं है, तब घर वापिस आईं।

मित्रों, रिश्तेदारों तथा घर के सदस्यों को रवी ने जितने भी पत्र लिखे, उसमें अंग्रेजों की स्वतन्त्रता का वर्णन होता। पुरुष तथा स्त्रियों के अधिकारों में कोई विशेष अन्तर नहीं था, अनेक स्थानों में स्त्री को अधिक सम्मान दिया जाता था। यह पत्र पढ़कर घर के बुजुर्ग परेशान हो जाते कि इसे वहाँ अकेला छोड़कर जतिन्द्र को यहाँ नहीं आना चाहिए था। वह बिगड़ जायेगा। परिणामस्वरूप... परिवार का निर्णय लंदन पहुँच गया- हमें तुम्हारी पढ़ाई की कोई आवश्यकता नहीं है... शीघ्र वापिस आ जाओ।

रवी बहुत खुश हुआ। उसका तो पहले ही पढ़ने में मन नहीं लगता था, नियमित व्यावहारिक शिक्षा से भाग कर, वह बिना कोई सर्टीफिकेट लिए अपने देश पहुँच गया तथा लिखा, “मेरे देश की रोशनी, मेरे देश का स्वच्छ, मौन आकाश, मुझे बुला रहे हैं।”

उसका नाट्य-काव्य ***टूटा दिल*** प्रकाशित होने पर अत्यधिक चर्चा हुई। सूक्ष्म भावों, सूक्ष्म धुनों के अतिरिक्त इसमें दार्शनिक अनुभव था। इसके सभी पात्र एक दूसरे का दिल तोड़ने में माहिर थे। अंतिम पंक्तियाँ हैं- जिसके पास कुछ नहीं होता, उसके पास सबकुछ होता है। जिसका कोई मित्र नहीं, वह किसी के लिए अजनबी नहीं। जब मुझे किसी वस्तु की अभिलाषा नहीं, तब मुझे निराशा क्यों होती है? किसी ने मुझ पर आक्रमण नहीं किया, तब यह घाव कैसे हुआ?

बंगला में यह नवीन प्रकार का काव्य प्रयोग था। त्रिपुरा के महाराजा ने अपना दूत और रथ भेजकर रवी को निमंत्रण भेजा कि महल में आकर अपनी रचनाएँ सुनाओ। सभी ने अत्यधिक प्रशंसा की। कवि ने लिखा, “आश्चर्यजनक बात नहीं थी कि 18 वर्षीय लड़के ने कोई अच्छी रचना सुनाई, चमत्कार यह हुआ कि वहाँ उपस्थित सभी बड़े व्यक्ति भी 18 वर्षीय लड़के बन गए थे।”

इसके पश्चात् गीतों का झरना बहने लगा। कवि बार-बार परमात्मा का शुक्रिया अदा करता है कि लंदन से पीछा छूटा तो गीत आ गए। अब उसने गीत नाट्य, बाल्मीकि प्रतिभा की रचना की। प्रारम्भ में लेखक सूचित करता है कि अध ययन की अपेक्षा यह नाटक देखने योग्य है। मूल आधार वाल्मीकि का ग्रन्थ है, परन्तु इसमें मौलिक कला दिखाई देती है। डाकूओं का सरदार, क्रौञ्च पक्षी के शिकार से नहीं, एक जवान लड़की की चीखों से द्रवित होता है, जिसे देवी को प्रसन्न करने के लिए बंदी बनाकर मन्दिर में बलि के लिए लेकर जा रहे हैं।

उसकी पंक्तियों में उदासी दिखाई देती, दूसरे को अपने प्रेम में घायल करने के विषय में सोचता तो देखता वह स्वयं ही उसके प्रेम में घायल हो गया है, दूसरा तो स्वतन्त्र है। सारे संसार के खज़ाने जमा करके मैंने स्वयं के लिए एक कैद तैयार की। असंख्य अभिलाषाओं के साथ मैंने अपनी नाव को इतना भर लिया कि अब वह डूबने वाली है।"

एक पत्र में लिखा, "सौन्दर्य-शास्त्र से सम्बन्धित अंग्रेजी भाषा की पुस्तक का अध्ययन करते करते मैं थक गया। पुस्तक को मेज़ पर पटक मोमबत्ती बुझाकर सो गया। नींद नहीं आ रही थी। खिड़की के रास्ते से चन्द्रमा की चांदनी भीतर आ गई तथा झिलमिलाने लगी। बाहर देखा, आकाश खिला हुआ था। मैं हैरान हो गया कि मानव द्वारा निर्मित एक छोटी सी मोमबत्ती किस प्रकार सरलता से प्राकृतिक सौन्दर्य को परे धकेल देती है।"

दूसरी बार जब कवि लंदन में पढ़ने हेतु गया तो उसका एक छह वर्षीय पुत्र तथा चार वर्षीय पुत्री थी। सारा परिवार, सेवक आदि सभी उसके जाने की तैयारी में लगे हुए थे। आवश्यक निर्देश दिए जा रहे थे। जब दो सन्दूक लेकर रवी जाने के लिए बाहर निकलने लगा तो उसकी चार वर्षीय पुत्री दरवाज़े के बीच खड़ी होकर कहने लगी- पिता जी आपको जाने नहीं दूंगी। कवि ने कहा- मैं तुम्हारे लिए बहुत सुन्दर उपहार भेजता रहूँगा तथा आते समय अनेक तोहफ़े लेकर आऊँगा। बेटी ने कहा- मुझे नहीं चाहिएं ये उपहार। जाने नहीं दूंगी।

बेटी को यह कहकर, ठीक है नहीं जाऊँगा, टाला गया। उसे बहाने से एक तरफ ले गए तो टैक्सी में बैठकर जा सका। उम्र भर वह इस घटना को भूला नहीं सका। लिखता है, "घर के सभी सदस्य मुझे खुशी खुशी भेज रहे थे परन्तु परिवार के एक सदस्य ने मुझे आज्ञा नहीं दी थी।"

इन पंक्तियों को पढ़ते समय मुझे गुरू नानक देव जी के ये शब्द स्मरण हो उठे-

नदीआं होवहिं धेणवा सुंम होवहि दुधु घीउ।
सगली धरती सकर होवै खुसी करे नित जीउ।।
परबतु सुइना रुपा होवै हीरे लाल जडाउ।
भी तूं है सालाहणा आखण लहै न चाउ।।

(माझ म.1, अंग 141-42)

(गायें नदियाँ बन जायें। झरने दूध घी के हो जायें। सारी धरती शक्कर बन जाये, लोग सदैव खुश रहें। हीरे रत्नों से जड़ित चांदी सोने के पर्वत हों, तो भी मैं

तुम्हारी प्रशंसा करूँगा मालिक, थकूँगा ही नहीं। तुम्हारी वस्तुएँ मेरा ध्यान आकृष्ट नहीं कर सकतीं।)

महाभारत की पुराण कथा में से एक घटना का चयन कर कवि ने चित्रांगदा नामक गीत नाटक लिखा जो बहुत प्रसिद्ध हुआ। दैत्यों के आचार्य शुक्र अमरापद का रहस्य जानते थे तथा स्वेच्छा से मृत व्यक्ति को पुनः जीवित करने की ताकत उनमें थी। देवता चाहते थे कि उन्हें भी यह विद्या प्राप्त हो। उन्होंने आचार्य बृहस्पति के युवा पुत्र कच्च को इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु शुक्र के पास भेजा। आचार्य शुक्र उसे विद्यार्थी के रूप में ग्रहण करने के लिए नहीं माने परन्तु उनकी पुत्री देवयानी ने इस कार्य में कच्च की सहायता की। आचार्य शुक्र के पास जाकर उसने विद्या ग्रहण करनी प्रारम्भ कर दी। देवयानी कच्च से प्रेम करने लगी। जब वह अमर करने की विद्या प्राप्त कर वापिस जाने लगा तो देवयानी ने कहा-

"आखिर तुमने वह विद्या प्राप्त कर ही ली जो तुम चाहते थे। जिस ज्ञान की प्राप्ति हेतु देवगण बेचैन हैं, तुम उसे जानते हो। परन्तु यह बताओ, विदाई मांगने के अतिरिक्त अन्य तुम्हारे पास कुछ नहीं है? कोई अदृश्य कांटा तुम्हारे मन में चुभ नहीं रहा?"

"नहीं देवयानी, ऐसी कोई बात नहीं।"

"तब तो तुम सृष्टि के सबसे सुखी व्यक्ति हो। जाओ, स्वर्गलोक में अपनी विजय का नगाड़ा बजाओ, देवगण शंख एवं पुष्पों से तुम्हारा स्वागत करने के लिए उतावले हो रहे हैं। हे ब्राह्मण, सत्य बताओ, इस नीरस पृथ्वी को किसी ने तुम्हारे लिए मंगलमय नहीं किया था?"

कच्च ने कहा, "दुःख से नहीं, खुशी से मुझे भेजो देवयानी।"

"खुशी? यह तुम्हारा स्वर्गलोक नहीं है सखे। इस पृथ्वी पर खुशी इतनी सरलता से नहीं मिलती। यहाँ तो हृदय-कमल में रहने वाला कीट, पुष्प को खा जाता है। यहाँ तो स्मृति चिंताग्रस्त रहती है तथा अंत में पत्ते के समान सूख कर झड़ जाती है। ठीक है जाओ। अब मूल्यवान समय क्यों नष्ट करना?"

दोनों अपनी तरफ से मज़बूत तर्क देते हैं। कच्च उत्तरदायित्व निभाने हेतु वचनबद्ध है तथा देवयानी प्रेम सम्बन्ध निभाने के लिए। उसने कहा, "शत्रु के पुत्र को मैंने अपने पिता जी से विद्या दिलवाई, जो कि असम्भव था।"

"मैं तुम्हारा धन्यवाद करता हूँ। तुम्हारा अहसान रहेगा मुझ पर देवयानी। मुझे क्षमा कर दो देवयानी।"

"क्षमा? क्षमा किस लिए ब्राह्मण पुत्र? तुम अपने ज्ञान सहित स्वर्ग चले जाओगे तथा मेरे लिए रह जाएगा उजड़ा हुआ जंगल। यादें शूल बनकर मुझ पर

आक्रमण करेंगी और एक पवित्र लज्जा मुझे बार-बार धिक्कारेगी। लज्जा तो तुम्हें भी आनी चाहिए थी ब्राह्मण, क्योंकि धूप की तपिश में मैं तुम्हारे लिए छाया बनी थी, तुम्हारे आस-पास एक बगिया के समान थी मैं। इस बगिया के समस्त फूल तोड़कर तुमने शीघ्रता से एक माला भी बना ली और बाद में एक क्षण में इस माला का धागा तोड़ सभी फूलों को रेत में फेंक कह रहे हो- मैं जा रहा हूँ, मुझे क्षमा करो।"

"ठीक है सखे। जाओ अब। तुम्हें शाप लगेगा। मेरी सहायता से तुमने इस विद्या को प्राप्त किया था। मेरा अपमान करके जा रहे हो, परिणामस्वरूप यह ज्ञान तुम्हारे पास भार बनकर रहेगा, तुम इसका कभी प्रयोग नहीं कर सकोगे। अमृत क्या क्या है, इस विषय में तुम विस्तृत भाषण तो दे सकोगे, परन्तु किसी मृत व्यक्ति को जीवित नहीं कर सकोगे अब जाओ।"

1898 में जब स्वतन्त्रता आन्दोलन की लहर चली तो सरकार ने राज्य-द्रोह एक्ट पास कर दिया जिसके अन्तर्गत विद्रोही लोगों के लिए दण्ड निश्चित किए गए। लोकमान्य तिलक ने इस विरुद्ध आवाज़ उठाई तो उसे बंदी बना लिया गया। कवि ने तिलक के पक्ष में क्रांति-रोध नामक एक विस्तृत लेख लिखा जिसमें सरकारी दमन की कड़ी आलोचना की तथा तिलक का पक्ष लेते हुए दान एकत्रित करना शुरू कर दिया। उसी समय कलकत्ता में पलेग का प्रकोप हुआ। सिस्टर निवेदिता की सहायता करते हुए धन भी एकत्रित किया तथा रोगियों की देखभाल में भी सहयोग दिया।

बौद्ध साखी पर एक कविता की रचना की। बुद्ध का शिष्य उपगुप्त मथुरा शहर की चारदीवारी से बाहर धरती पर सो रहा था कि उसकी कमर में चोट लगी। राज्य नर्तकी वासवदत्ता अपने प्रेमी से मिलने के लिए रात को बाहर निकली थी कि अंधेरे के कारण भिक्षु को ठोकर लगी। देखा, यह तो युवा एवं सुन्दर उपगुप्त था। नर्तकी ने कहा- हे विद्वान् और सुन्दर भिक्षु, यह कठोर धरती तुम्हारे विश्राम के लिए नहीं है। तुम कभी मेरी हवेली में आना, वहाँ तुम्हें पता चलेगा सुख आराम क्या होते हैं।

भिक्षु ने कहा- जब तेरे पास आने का समय आया, तो मैं अवश्य आऊँगा नर्तकी। अब तुम जहाँ जा रही हो, वहाँ जाओ। वह चली गई।

समय बीतता गया। भ्रमण करते कई वर्षों के पश्चात् वह फिर से मथुरा शहर के समीप से गुजरा तो देखा, एक रोगग्रस्त विवश स्त्री अकेली, धरती पर लेटी हुई तड़प रही है। समीप गया तो पहचाना, यह तो वही नर्तकी है! चेचक होने के कारण लोग उसे शहर से बाहर फेंक गए थे कि कहीं किसी ओर को यह छूत का रोग न हो जाये। भिक्षु ने उस बीमार स्त्री का सिर अपनी गोद में रखा, पानी पिलाया, उसके फोड़ों से भरे शरीर पर मरहम लगाया, स्वस्थ होने हेतु भजन गाए। बीमार स्त्री ने होश आने पर पूछा- हे कृपा निधान आप कौन हो?

"भिक्षु उपगुप्त हूँ नर्तकी। वचन दिया था न कि आऊँगा? वचन निभाने आ गया देखो।"

19वीं शताब्दी बीतने पर एक लम्बी कविता, 'शताब्दी की संध्या' लिखी। इसमें वर्णित है कि यूरोप के देशों में आपसी नफ़रत की आग जलने लगी है, जिसमें सारा संसार भस्म हो जायेगा। "इस शताबि का अंतिम सूर्य पश्चिम के खूनी बादलों तथा घृणा के बीच उलझता हुआ अस्त हुआ है।"

उसके परिवार में दो पुत्र तथा तीन पुत्रियाँ थीं। अपने बच्चों को स्वयं पढ़ाते थे। एकांतवास हेतु अपने पुश्तैनी फार्म हाऊस सियालदा में चले गए। उसे अंग्रेजों द्वारा प्रारम्भ की गई विधि अनुसार शिक्षा देना स्वीकार नहीं था। बचपन में जो कुछ भी बुरा लगा, छोड़ दिया। उसे तकनीकी विधि से शिक्षा देना हमेशा ही अप्रिय था। उसकी इच्छा थी कि प्राचीन भारतीय महार्षियों जैसा जंगली तपोवन हो, जहाँ ऋषि शिक्षक और प्रकृति शिक्षिका हो, दोनों ही विद्या की वर्षा करें। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु 22 दिसम्बर 1901 को शांति-निकेतन की स्थापना पाँच विद्यार्थियों को दाखिला देकर कर दी। इन पहले पाँच विद्यार्थियों में उसका ज्येष्ठ पुत्र, तीन भारतीय ईसाई तथा एक अंग्रेज था। यह वो अंग्रेज था जो कवि के बच्चों को अंग्रेजी पढ़ाने के लिए घर आता था। कवि ने लिखा, "मैं अपने स्कूल के दिनों को भूल नहीं सकता। बच्चों को मूर्तियों समान सजाकर हम पर पाठ के गोलों की वर्षा की जाती। उसी तरह जैसे बगीचें में ओलें पड़ रहे हों।" कवि का बचपन में देखा गया स्वप्न शांति निकेतन की स्थापना से साकार हो गया था। कवि की इच्छा बंगला पढ़ाने की थी परन्तु बंगला भाषा की पुस्तकें नहीं थीं। बहुत पुस्तके स्वयं ही लिखीं, ओर कुछ अन्य लोगों से भी लिखवाईं। वृक्षों के नीचे कक्षाएँ लगती थीं। कठिन परिश्रम के पश्चात् यदि कुछ क्षण विश्राम के लिए मिलते तो गाने लगते।

23 नवम्बर 1902 को पत्नी मृणालनी का देहांत हो गया। उसने बीस वर्ष तक कवि की सेवा की। न तो कभी कीमती वस्त्र पहनती, न ही आभूषण। विवाह के समय वह शिक्षित नहीं थी। कवि ने उसे पढ़ना-लिखना सिखाया। इतनी परिश्रमी थी कि मूल संस्कृत रामायण का बंगला में अनुवाद कर दिया। उसने अंग्रेजी भाषा को पढ़ना तथा समझना भी सीख लिया था। पति के नाटकों में अभिनय करती। दो मास तक जब बिस्तर पर थी, कवि ने सेवकों और नर्स की अपेक्षा स्वयं उसकी दिन रात सेवा की। गीत लिखा-

दुःख की सेज पर मेरी रात बीती
मेरी आँखे थमकर अब सूख गई हैं
उसकी रात को प्रभात प्राप्त हो गई है

और तुमने पिता उसे अपनी भुजाओं में संभाल लिया
मैं तुम्हारा धन्यवाद करता हूँ
तथा वह सौगातें जो तुमने मुझे दी हैं, वापिस भेजता हूँ।
मेरा घर छोटा है, जो एक बार चला जाता है, वापिस नहीं
आता।
परन्तु मालिक तेरी कृपा तो अनन्त है न
उसे ढूंढता ढूंढता मैं तुम्हारे दरवाज़े पर पहुँच गया हूँ।

पत्नी की मृत्यु के कुछ महीनों पश्चात् उसकी पुत्री रेणुका बीमार हो गई। माँ के बिना बच्चे उदास हो गए। कवि उन्हें सांत्वना देने के लिए अपने मन पर काबू रखता। बच्चों की इच्छाएँ, जिद्द सभी पूरी करता। उनसे बातें करता रहता। इन दिनों में उसने जो गीत, कविताएँ लिखीं, उनका नाम शिशु (बच्चा) है। यह लघु काव्य संग्रह अंग्रेजी में **द करिसैंट मून** नाम के नीचे छपा तो प्रसिद्ध चैक्क विद्वान् प्रोफैसर लैसनी ने लिखा, "बच्चों के विषय में लिखी गईं इन कविताओं का संसार में स्थान विलक्षण है।" 'बचपन में स्वर्ग का निवास होता है', कविता की कुछ पंक्तियाँ हैं-

मोतियों की तलाश में गोताखोर डुबकी लगाता है।
व्यापार करने के लिए व्यापारी समुद्र में जहाज़ ठेलते हैं।
बच्चे कंकड़ चुन चुन कर फेंकते रहते हैं।
अनन्त विश्व के सागर तटों पर
बच्चों की महासभा विराजमान है।

रेणुका इस संसार से विदा हो गई। पति का भी निधन हो गया। महात्मा गाँधी उस समय स्वतन्त्रता आन्दोलन को प्रचण्ड कर रहे थे परन्तु इसके विपरीत रवीन्द्रनाथ ने स्वयं को एकांतवासी बना लिया। इस बात की कड़ी आलोचना हुई परन्तु कवि ने कहा- जो काम करने के मैं योग्य नहीं, उसे क्यों करूँ? मैं इस प्रकार का भावुक व्यक्ति नहीं हूँ।

अपने गीतों में कवि ने स्वयं को अनेक बार परमात्मा की भिखारिन मानते हुए लिखा है, "मेरे समीप से राजकुमार गुजरा तथा मुझसे भिक्षा मांगी। मैं उसे क्या दे सकती थी? मेरे पास तांबे का एक सिक्का था जो मैंने राजकुमार को दे दिया। वापिस झोंपड़ी में जाकर देखा जिस जेब में से सिक्का निकाला था, वहाँ एक सोने की मोहर थी। फिर मुझे अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ कि मैंने स्वयं को ही राजकुमार को क्यों नहीं सौंप दिया?"

नवम्बर 1913 में वह अंग्रेज मित्र के साथ भ्रमण करते हुए शांति निकेतन की तरफ जा रहे थे तो मार्ग में डाकखाना आता था। टैगोर को देखकर डाकिया दौड़ता

हुआ आया तथा हाथ में तार थमा दी। कवि ने तार को जेब में डाल लिया। कुछ समय पश्चात् अंग्रेज मित्र ने कहा- देखो तो इस तार में क्या लिखा है? कवि ने कहा- घर जाकर देखेंगे। अंग्रेज ने कहा- जिस प्रकार से डाकिया तार पकड़ा कर गया है मुझे लगता है कोई जरूरी संदेश है, पढ़ो। दोनों रूक गये। टैगोर ने तार को खोलकर पढ़ा। सविस अकादमी का संदेश था- आपको नोबेल पुरस्कार के लिए चुना गया है। मुबारक हो।

शांति-निकेतन में प्रशंसकों की जैसे बाढ़ आ गई। हज़ारों पुरुष स्त्रियाँ फूलों की मालाएँ लेकर आ रहे थे। प्राईमरी स्कूल के बच्चे नाच गा रहे थे। इस समय प्रशंसकों का धन्यवाद करते हुए टैगोर ने कहा- यह क्या हो रहा है? बच्चे जो नहीं जानते थे कि नोबेल पुरस्कार किस चिड़िया का नाम है नाच रहे हैं। जिन्होंने मेरी लिखी एक पंक्ति कभी नहीं पढ़ी वो मुबारक पर मुबारक दे रहे हैं। यह एक प्रकार की मूर्ति पूजा है। मूर्ति तोड़ने वाले मुसलमान भी इस रोग से कभी मुक्त नहीं हो सके, तुम हिन्दु जो मूर्ति-पूजा को मानते हो अत्यधिक सावधान रहना होगा। मेरा नहीं, मुझे दिए पुरस्कार का सम्मान हो रहा है।

जब 1914 में टैगोर को नोबेल पुरस्कार मिल चुका था तब भी विद्यालयों के अध्यापक यही समझते थे कि उसे बंगला लिखनी नहीं आती। दसवीं की परीक्षा के प्रश्न पत्र में टैगोर की रचना का गद्यांश देकर लिखा होता था- इस गद्यांश को सही करके बंगला में लिखो। लोग अपने बच्चों को उसके स्कूल में न भेजते तथा दूसरे भी न भेजे यह प्रचार भी करते। उसे सरकार का गुप्तचर भी कहा गया। इन दिनों उसके नाटक ***डाक घर*** का अभिनय लंदन में सफलता पूर्वक आइरिश कलाकारों ने किया। तत्पश्चात् इसका जर्मन में अनुवाद कर जर्मनी में नाटक का अभिनय हुआ। विलियम बी.येटस तथा सी.ऐफ.एंड्रियूज़ ने इन नाटकों की बहुत प्रशंसा की।

"सत्य प्राप्ति हेतु अपनी शर्तें निश्चित करें या सत्य की शर्तें मानें? यादें इतिहास नहीं बनती। यादें तथा इतिहास समान रूप से चलते हैं, तब भी दोनों भिन्न-भिन्न हैं।"

लंदन में अपनी भतीजी इंदिरा को लिखा, "गीतांजलि के अंग्रेजी अनुवाद में मैंने तुम्हारा ज़िक्र किया है। मुझे अब तक पता नहीं चला कि लोगों ने इसे क्यों पसंद किया है। सभी जानते हैं कि मैं अंग्रेजी नहीं लिख सकता। इस कमी के कारण मुझे कभी खुद पर शर्मिन्दा नहीं होना पड़ा। कोई व्यक्ति काग़ज़ पर अंग्रेजी भाषा में लिखकर मुझे चाय का निमंत्रण भेजे। मुझे यह भी नहीं पता कि इसका उत्तर कैसे दूं। अंग्रेजी में लिखते समय मुझे अनुभव हुआ कि मैं किसी भ्रम का शिकार हो गया हूँ।

अपने पुत्र रथीन्द्रनाथ तथा बहू प्रतिभा सहित लंदन गए। अंग्रेज़ चित्रकार विलियम रोज़नस्टाईन ने यूरोप के लोगों को उनकी कला से अवगत करवाया। रोज़नस्टाईन, शांति-निकेतन में कवि के पास आकर उनकी कविताएँ सुनता। गीतांजलि का अंग्रेजी अनुवाद टैगोर ने उसे सौंप दिया। रोज़नस्टाईन ने लिखा, "शाम तक मैंने पूरी पुस्तक को पढ़ लिया। मैंने सोचा, यह अलग प्रकार की कविताएँ हैं- महान् रहस्यवादी की जैसी रूहानी बातें होती हैं, बिल्कुल वैसी हैं।" मैंने यह काव्य संग्रह एंड्रियूज़ ब्रैडले को पढ़ने के लिए दिया। मेरी बातों से सहमत होते हुए उसने कहा- ऐसा प्रतीत होता है जैसे हमारे बीच कोई महाकवि विराजमान है। मैंने येटस को एक पत्र लिखा, उसने कोई उत्तर नहीं दिया, फिर दूसरा पत्र लिखा तो उसने कविताएँ भेजने के लिए कहा। कविताएँ पढ़ने के पश्चात् वह भी मेरी तरह आनन्द विभोर हो गया। वह लंदन आया तथा ध्यानपूर्वक उन कविताओं का पुनः अध्ययन किया। कहीं-कहीं सुझाव अवश्य दिए परन्तु मूल पाठ में कोई फेरबदल नहीं की। उसने गीतांजलि की भूमिका में लिखा, "अनुवादित कविताओं की पाण्डुलिपि को मैं रेलगाड़ी, बसों तथा होटलों में बैठकर पढ़ते हुए इस प्रकार मग्न हो जाता कि मुझे देखकर अजनबी हैरान हो जाते।" यहीं टैगोर सी.ऐफ. एंड्रियूज़ से मिला। एंड्रियूज़ एक नेक दिल तथा निष्पक्ष पादरी था जिसने ननकाना साहिब तथा जैतो के मोर्चे में शांत अकालियों को अंग्रेजों के हाथों गोलियों एवं डण्डों को प्रहार झेलते देखकर कहा था- सैंकड़ों यीसू मसीह मैंने अपनी आँखों से मरते हुए देखे हैं।

ऐज़रा पाऊंड, जिसे बाद में नोबेल पुरस्कार मिला था, ने लिखा, "एक मास पूर्व मैं येटस के कमरे में गया था। मैंने देखा येटस किसी महाकवि के आगमन से आनन्दित है, ऐसा कवि जिस जैसा अन्य यहाँ कोई नहीं, समकालियों में वह शिरोमणि है। मुझे समझ में नहीं आ रहा, मैं कैसे बात करूँ, मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे हमे नया यूनान मिल गया हो। यूरोप के पुनःजागरण जैसा वातावरण निर्मित हो गया है। तकनीकी युग में इस प्रकार की शांति का मिलना चमत्कार है। काव्य किसी तूफान या आगज़नी वातावरण से उत्पन्न नहीं हुआ। यह अनन्त सहज की सुन्दर अभिव्यक्ति है। आधुनिक पश्चिमी वह ढंग इसमें नहीं, जिसमें नाटकीय विधि से यह सिद्ध किया जाता है कि मानव ने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली। यह उस प्राचीन यूनान जैसा काव्य भी नहीं जहाँ मानव देवताओं के हाथों का मात्र खिलौना है। टैगोर से बातें करने के पश्चात् जब मैं वापिस आया, मुझे अनुभव हुआ, हम अभी भी वही वनमानुष है जिन्होंने कमर के गिर्द पशु की खाल लपेटी हुई है तथा हाथ में पत्थर उठाए एक दूसरे को मारने के लिए तैयार खड़े हैं। एक के बहाने अन्य चालीस वस्तुओं की प्राप्ति हेतु यूरोप महानगरों के शोर में प्रवेश कर चुका है। मानव

विज्ञापनता के भ्रम में उलझ गया है। टैगोर का काव्य आज की नवीन अंजील है। कुछ लोग इन कविताओं को इस कारण अच्छा नहीं कहेंगे क्योंकि यह धर्म के रंग में रंगी हुई हैं परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि दांते की बंदगी बिल्कुल ऐसी ही थी।"

"तुमने वह लोग मेरे मित्र बनाये जो अजनबी थे।
मुझे उन घरों मे सम्मान मिला जो मेरे नहीं थे।"

रोज़नस्टाईन ने लिखा, "भारत में यह अफ़वाह फैल रही थी कि गीतांजलि के अंग्रेजी अनुवाद का संशोधन येटस ने किया है इस कारण यह प्रसिद्ध हो गई है। यह बात सरासर बकवास है। मेरे पास टैगोर की मूल रचना भी है तथा वह पाण्डुलिपि भी जिस पर येटस ने परामर्श दिए थे। येटस की सलाह को माना नहीं गया, हमने टैगोर की मूल रचना को प्रकाशित किया है। संदेह हो तो मेर पास आकर देख लो।"

गीतांजलि का रीविऊ लिखते समय ***टाईमज़ लिटरेरी सपलीमेंट*** ने लिखा, "यह कविताएँ किसी अजनबी की रचना प्रतीत नहीं होतीं। ऐसा अनुभव होता है जैसे यह काव्य के आदि कथन हों, जिन्हें यहाँ इंग्लैंड में भी लिखा जा सकता हो, यदि कहीं हमारे कवि भावनाओं तथा विचारों में समानता रखते, वह इस प्रकार लिख सकते थे, परन्तु हमने धर्म और दर्शन दोनों को ठुकरा दिया है। परिणामस्वरूप हमने ठोकरें खाईं। कुछ आलोचक कहेंगे- यह विदेशी दर्शन है, हमारा नहीं। मैं पूछता हूँ- आपका दर्शन है कहाँ? आप पूरी तरह से उलझे घूम रहे हो। हमारे कवियों के पास कहने के लिए है ही क्या?"

कुछ अंग्रेज आलोचकों ने यह भी शेखी मारी कि अंग्रेजों ने भारत को अनपढ़ता से बाहर निकालने का जो निर्णय लिया था, टैगोर उसी का परिणाम है। अमेरिका में एक अंग्रेज ने भाषण देते समय जब यह कहा कि ऐसा कवि शताब्दियों के पश्चात् जन्म लेता है तो वहाँ उपस्थित कुछ बंगाली प्रगतिवादी युवकों ने ऊँची आवाज़ में कहा- बकवास। टैगोर से पूर्व भी तथा अब भी उससे महान् कवि हमारे पास हैं। नवीन सेन तथा दजिन्द्र लालराय टैगोर से बड़े हैं। टैगोर के पास है ही क्या? उसने प्राचीन वैष्णव भक्तों की नकल की है तथा उसका दर्शन औपनिषदक दर्शन है।

टैगोर अमेरिका गया। उसे अनेक स्थानों से निमंत्रण मिलने लगे। बसंत कुमार राय ने कहा- जितना शीघ्र सम्भव हो सके, अपनी समस्त रचनाओं का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करवाओ। आपको नोबेल पुरस्कार मिल सकता है। भारत तो कया, ऐशिया में अभी तक किसी को यह सम्मान नहीं मिला। टैगोर ने पूछा- क्या किसी ऐशियन को इस योग्य समझा जा सकता है?

उसने शिकागो तथा न्यूयार्क की यूनिवर्सिटीओं में भी भाषण दिए। उसका यश विश्व इतना फैला कि सैंकड़ों पुरुष-स्त्रियाँ इस कारण वापिस चले जाते क्योंकि हॉल में खड़े होने के लिए भी स्थान नहीं होता था। यहाँ से वापिस इंग्लैंड आए तो अंग्रेज उनसे परिचित हो चुके थे। अनेक स्थानों पर उनके भाषण हुए। ***द गार्डनर, द क्रिसैंट मून*** तथा नाटक ***चित्रा,*** अंग्रेजी में प्रकाशित होकर पाठकों पास पहुँचे।

पाँचवी कक्षा की एक लड़की ने पूछा- आप कविता कैसे लिख लेते हो?

टैगोर ने कहा- तुम्हारा नाम क्या है? लड़की ने कहा- छवि। टैगोर ने पंक्तियाँ रची-

तोमार नाम छवि, आमार नाम रवि, बोने गैलो कविता, खुशी होलो कवि।

(तुम्हारा नाम छवि, मेरा नाम कवि, बन गई कविता, खुश हुआ कवि।)

ईसाई समाचारपत्र **बैपटिसट टाईमज़** ने लिखा, "ईसाई अनुभवों के साये हिन्दु मानसिकता में स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। बेसब्री से हम जिस व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रहे थे, वह आ गया है। कुदरत ने इस व्यक्ति को इसलिए भेजा है ताकि प्रभु-रथ के आने से पूर्व यह उसका रास्ता साफ कर सके।"

क्रमानुसार जो कुछ पुरस्कार प्रक्रिया के समय हुआ, वह यह था- सर्वप्रथम रस्मी विचार अंग्रेजी कवि स्ट्रज़ मूर ने नोबेल अकादमी के सचिव को अकादमी सदस्य की हैसीयत में लिखकर भेजा। लिखा, "माननीय सचिव, यूनाईटेड किंगडम की रॉयल सोसाइटी का सदस्य होने के नाते मुझे इस बात का मान है कि रवीन्द्रनाथ टैगोर नामक एक योग्य व्यक्ति की सिफारिश करते हुए मैं समझता हूँ कि मेरे विचारानुसार इसे साहित्य के नोबेल पुरस्कार से सम्मानित किया जा सकता है।"

हस्ताक्षर/-टी.एस.मूर।

वर्नर वान हाईदनसटेम ने इसकी प्रौढ़ता की। वर्नर को तीन वर्ष पश्चात् नोबेल पुरस्कार मिला। सचिव पेर हालस्टार्म ने लिखा, "रूहानी काव्य का स्रोत कहाँ से बह सकता है, किसी को पता नहीं। अपने निजत्व से पीछे हटकर हम यह बड़ा निर्णय लेने लगे हैं। इस पुरस्कार के साथ धनराशि को ध्यान में रख कर फिर कुछ अनुमान लगाने तथा निर्णय लेने ठीक नहीं। टैगोर काव्य पूर्णतः धर्मखण्ड है, बिल्कुल वैसा जैसे डेविड के बाईबल के भजन या संत फ्रांसिस के गीत। इन रचनाओं के सामने पैसे का क्या महत्त्व है?"

पुरस्कार कमेटी में गेटे को याद किया गया जिसने ब्राह्मण कन्या पर कविता लिखी थी- झरने के पानी से मुटियार घड़ा भरती है परन्तु जब उसकी नज़र पानी पर पड़ती है, पानी पत्थर बन जाता है तथा ऐसा बार-बार होता है। एक कमेटी सदस्य ने कहा- गेटे की मृत्यु 1832 में हो गई थी। अब तक यूरोप में क्या उसके

जैसा एक भी कवि हुआ है? टैगोर में उस जैसा सामर्थ्य देख लगा जैसे मैं एक नये युग से टकरा गया हूँ।

आयरलैंड के गुमनाम क्षेत्र में रहने वाले एक 15 वर्षीय युवक पर इसका जो प्रभाव पड़ा, वह यह था, "टैगोर का अध्ययन करते ही मैं दूर अदृष्ट विलक्षण वादियों में खो गया था। टैगोर का यह ईश्वर किस प्रकार का है? मित्र, प्रेमिका, कमल का पुष्प, मछुआरा जो अकेला नाव में वीणा पकड़ गाता जा रहा है, यहाँ से लेकर दूर-दूर तक। नदी की धारा के साथ-साथ। कभी ऐसा प्रतीत होता है जैसे मैं मृत्यु के सामने खड़ा हूँ। पश्चिमी मन में यह रूहानी यथार्थ प्राचीन काल का अजूबा है।" ये शब्द हालदार लैकसनैस्स के हैं, जिसे बहुत समय पश्चात् नोबेल पुरस्कार मिला।

देश-विदेश में एक कविता जिसकी सभी ने अत्यधिक प्रशंसा की, वह इस नश्वर संसार में क्रय-विक्रय को रूपक बनाकर लिखी गई। एक व्यक्ति अपनी पीठ पर सन्दूक उठाकर सुन्दर वस्तुएँ बेच रहा है। राजा उसे धमकी देता है- मैं सारा समान जबरदस्ती छीन सकता हूँ। एक प्रौढ़ व्यक्ति कहता है, जितना भार इस टोकरी का है, उतना सोना ले लो, सामान मुझे दे दो। एक सुन्दर युवती उसे अपनी सुन्दरता के जाल में फंसा कर सामान प्राप्त करने की इच्छुक है। बेचने वाला किसी को कुछ नहीं देता, भार को पीठ पर उठाये चलता रहता है। उसी समय हाथ में कौड़ी लिए एक बालक उसकी भुजा पकड़कर कहता है- यह समस्त वस्तुएँ मेरी हैं। भार से उसे तब मुक्ति मिलती है जब वह बिना कुछ लिए सारा सामान बच्चे के सामने रख देता है और बच्चा वस्तुओं से खेलने लगता है।

शांति-निकेतन के एक अध्यापक ने पूछा- ईश्वर का अनुभव क्या आपको निजी रूप से प्राप्त हुआ? कवि ने उत्तर दिया- जिस समय आनन्द विभोर अवस्था में गीत बनते है, उस समय कुछ ऐसा प्रतीत होता है-

मैं नहीं, मेरी गीतों ने तुम्हारे चरण छूए।
तुम दरिया के इस पार मैं उस पार।
मुझसे मिलना, तुम टालते रहे।
... ...
दिल यदि प्रेम करने के लिए नहीं बना
तो सुबह आकाश को तुम गीतों से क्यों भर देते हो?
धरती फूलों से क्यों खिल जाती है?
हवा में मधुर गुनगुनाहट क्यों तैरती रहती है?
काम-काज की जिम्मेवारी में यदि इतना बांधना था
तब अनन्त आनन्द की वर्षा क्यों करते हो मेरे सिर ऊपर?

यदि स्वयं को जला कर भस्म कर दूँ तो अच्छा
क्योंकि इसके बाद जलकर मरने का खतरा न रहे।

महात्मा गांधी के साथ उनके सदैव प्रेमपूर्वक सम्बन्ध रहे, यद्यपि दोनों में राजनैतिक मतभेद भी थे। सत्य तो यह है कि टैगोर को राजनीति का न तो ज्ञान था, न ही उसमें रुचि थी। वह कहा भी करता था कि जो काम न आता हो, उसमें टांग नहीं फंसानी चाहिए। गांधी का विचार था कि चरखे के अधिकतर प्रयोग से स्वराज्य की प्राप्ति होगी, क्योंकि चरखा मानव को आत्म-निर्भर बनाने की ओर पहला कदम है। टैगोर से कहा गया कि यदि वह चरखे का प्रयोग शुरू कर दे तो इसके अच्छे संकेत मिल जायेंगे। टैगोर ने गांधी से कहा- यदि मैं गीत कातता रहूँ तो यह अधिक अच्छा नहीं होगा? यह काम मुझे आता है। मैं आपको गीत कातने के लिए नहीं कहता, क्योंकि आपको कातने नहीं आते। मुझे चरखा कातना नहीं आता।

गांधी जी शांति निकेतन में आकर टैगोर के पास रहे। शुद्ध घी में बनी हुई सब्जियाँ तथा पूरियाँ परोसी गईं। गांधी जी घी में बनी वस्तुओं से परहेज करते थे। कहने लगे- आपको पता नहीं, आप विष खा रहे हो। टैगोर ने कहा- अर्द्ध शताब्दी से यह विष खा रहा हूँ, मरा नहीं, अभी भी कुछ नहीं होगा। बातें करते करते शाम को यह निर्णय हुआ कि सैर के लिए जायेंगे। गांधी जी ने क्या करना था, लाठी उठाई और खड़े हो गए। टैगोर ने सूट पहना, जूते तथा जुराबें पहनी, शीशे के सामने खड़े होकर दाढ़ी को संवारा, टाई ठीक करने लगे। गांधी जी ने कहा- इस आयु में शीशे के सामने इतने समय तक खड़े होना ठीक नहीं गुरूदेव। टैगोर ने कहा- जानबूझ कर कुरूप दिखाई देना हिंसक व्यवहार होता है महात्मा।

लार्ड कारमाईकल, बंगाल के गर्वनर ने टैगोर को नोबेल पुरस्कार दिया था। टैगोर ने उसे शांति-निकेतन आने के लिए निमंत्रण भेजा। 20 मार्च 1914 को उसके आने पर टैगोर ने उसका भव्य स्वागत किया। देश-भक्तों ने टैगोर की सख़्त आलोचना की। टैगोर ने कहा- मैं तुम्हारे देश-भक्ति के भ्रम और अंधविश्वास में सम्मिलित नहीं होऊँगा। मुझे तुम लोगों की कोई परवाह नहीं है।

फिर लिखा, "भारतीयो! जब मैंने कहा कि मुझे तुम लोगों की कोई परवाह नहीं है तो मेरी बात का सत्य मत मान लेना।"

अंग्रेज़ सरकार ने जब 'नाईट' की उपाधि प्रदान की, देश-भक्तों ने उसे पूरी तरह बदनाम किया। 1916 को अमेरिका अकादमिक भाषण हेतु जाना था परन्तु आलोचकों ने दोष लगाया कि उसे भारत को बदनाम करने के उद्देश्य से भेजा गया है। इसके विपरीत अंग्रेज़ों को उसके युद्ध-विरोधी व्याख्यान नापसंद थे। उन्हें लगता था कि ये जर्मन तथा जापान के पक्ष में हैं परन्तु अंग्रेज़ इस कारण खामोश रहे कि

जब अपने देशवासी ही बदनामी करने लगे हैं तो हमने इस झगड़े से क्या लेना देना। जब जान गए कि अंग्रेज़ उनकी नीति को पसंद नहीं करते तो अमेरिका की यात्रा को बीच में ही छोड़ कर 1917 में जापान चले गए।

जापान में अनेक भाषण दिए। उसके मन में सदैव नवीन प्रभाव उत्पन्न होते रहते। लिखा, "जापान में मैं जितने दिन भी ठहरा, किसी स्त्री या बच्चे को गुनगुनाते हुए नहीं देखा। इन लोगों के मन झरने के समान प्रवाहित नहीं होते, झील के समान स्थिर हैं। मैंने इनके गीतों को पढ़ा तो देखा कि यह चित्र-गीत हैं, गेय गीत नहीं।"

उसने जापान के विषय में जो कहा, विश्वयुद्ध ने उस टिप्पणी को भविष्यवाणी के रूप में सिद्ध कर दिया- खिलौना रेत में गिरने से धूल से भर गया है क्योंकि ईश्वर ने सिद्ध करना है, रेत तेरे खिलौने से अधिक महान् है।

वह देख रहा था कि भारत में अनेक बार शास्त्रों के कारण जीवन में विराम आ जाता है, अन्याय होता है। इस विषय पर उसने अनेक कहानियाँ लिखीं, जिनमें से एक 'बंधनमुक्त' भी है। इसकी नायिका सुन्दर लड़की मंजुली है, जिसका विवाह तो हुआ परन्तु वह जल्दी ही विधवा हो गई। मंजुली की माँ अपनी युवा पुत्री के दुःख को सहन नहीं कर पाती तथा रोग-ग्रस्त हो अंत में मृत्यु को प्राप्त हो जाती है। उसका वृद्ध पिता हर समय हुक्का पीता रहता है तथा शास्त्रविद्या का व्याख्यान करता रहता है। बूढ़े को अकेलापन सताने लगता है। यद्यपि मंजुली अपने पिता की प्रत्येक आवश्यकता का पूरा ध्यान रखती है परन्तु वह एकाकीपन से तंग आकर दूसरा विवाह करवा लेता है, क्योंकि शास्त्रों अनुसार ऐसा करना उसका अधिकार है। यह देखकर मंजुली पड़ोसी डॉक्टर के साथ भाग जाती है जिसे वह दिल से प्रेम करती थी परन्तु माता-पिता की इच्छा पर फूल चढ़ाकर जहाँ उन्होंने कहा, विवाह के लिए मान गई थी। पिता उसे शाप देता है, क्योंकि स्त्री का पुनर्विवाह शास्त्रानुसार निषिद्ध है।

इन दिनों में शांति निकेतन विश्व भारतीय स्तर प्राप्त कर रहा था, जिसमें हिन्दुस्तान की प्राचीन बौद्धिक सम्पन्नता को पुनः सजीव करना था। आधुनिक शिक्षा के विषय में उसने टिप्पणी देते हुए कहा- आज के विद्वान् कभी एक कूड़ेदान को छानते हैं, कभी दूसरे को। जो कूड़ा-करकट एकत्रित होता है, उसे अपने नाम से प्रकाशित कर प्रशंसा प्राप्त करते हैं। उसने 'तोता' कहानी लिखी। एक चिड़िया को पकड़ कर पिंजरे में बंद कर विद्या देने की घोषणा की गई। प्रसन्न होकर छलांगे लगाती, उड़ती, गीत गा रही थी, यह असभ्यक कार्य बंद होने चाहिए। अंततः उसने सभ्य समाज में सम्मान से रहना है, इस कारण विद्या प्राप्त करे। वह लोग भी यह

देखकर प्रसन्न हुए, जो न तो चिड़िया को जानते थे, न ही विद्या को। ब्राह्मणों का एक समूह पिंजरे के समीप बैठ गया तथा दिन रात चिड़िया को विद्या देने का प्रबन्ध किया गया। हुआ ये कि एक दिन चिड़िया मर गई। सभी को बहुत दुःख हुआ। राजा शोक व्यक्त करने आया। उसने मृत चिड़िया को अंगुलि से हिलाया तो उसके भीतर से पुस्तकों के पृष्ठों की सरसराहट सुनाई दी।

फ्रांसिसी चिन्तक रोमा रोलां उसके विचारों से पूर्णतः सहमत थी तथा युद्ध के विरूद्ध। वह देश-भक्ति के तिरंगे की अंदरूनी डकैती से परिचित थे। रोमा ने लिखा, "सत्य सभी राष्ट्रों के लिए समान है तथा सम्माननीय है, परन्तु प्रत्येक राष्ट्र के अपने अपने झूठ होते हैं, जिन्हें आदर्शवाद का नाम देते हैं।" रोमा रोलां ने स्वतन्त्रता का घोषणा पत्र लिखा, जिस पर विश्व के समस्त चिन्तकों के हस्ताक्षर करवाये। टैगोर ने 26 जून 1919 को इस पर हस्ताक्षर किए। यूरोप यात्रा के समय उसने लिखा, "अंग्रेज चाहते हैं कि युद्ध में उनके लिए हम लड़ें तथा कच्चा माल भेजते रहें, परन्तु इन्होंने अपने दरवाज़े पर लिखकर लटका रखा है- ऐशिया के लोगों का अन्दर आना मना है। पकड़े जाने की स्थिति में कानूनी कार्यवाही की जायेगी। मेरी भावनाएँ यह सोचकर कांपने लगती हैं तथा मुझे अपना देश याद आने लगता है, विशेषतः शांति-निकेतन का धूप से भरा वह कोना, जो मेरी प्रतीक्षा कर रहा है।

वापसी के समय जहाज़ के सहयात्री आग़ा खान उनके साथ थे, जिन्हें हाफ़िज़ का दीवान अच्छी तरह याद था तथा वह अकसर उस दीवान में से टैगोर को कुछ न कुछ सुनाते रहते थे। हाफ़िज़ ने एक शेयर में समरकंद तथा बुख़ारा शहर अपनी प्रेमिका के गाल के तिल पर लुटा देने की इच्छा प्रकट की है। टैगोर ने यह सुनकर टिप्पणी दी, "शांति निकेतन के एक कोने पर मैं भी लंदन लुटा देना चाहता हूँ परन्तु क्या करूँ, लंदन मेरी जायदाद नहीं। परन्तु समरकंद तथा बुख़ारा कौन से हाफ़िज़ की सम्पत्ति थे? हाफ़िज़ की जायदाद गाल का तिल था तथा मेरी सम्पत्ति शांति-निकेतन।"

कवि उस समय यूरोप में ही था जब लंदन की संसद ने जलियांवाले बाग के मुख्य हत्यारे जनरल डायर को क्षमा कर दिया। समाचार पढ़कर टैगोर ने कहा- इस क्षमा दान ने बरतानिया के कुरूप चेहरे तथा कठोर ह्रदय को प्रकट कर दिया है।

लंदन यात्रा के समय वह लारंस ऑफ़ अरेबिया नामक युवक से मिला। उस युवक ने कहा- मैं एक हठी स्वभाव का स्वतन्त्र व्यक्ति हूँ। अब मैं अपने देश अरब वापिस नहीं जाऊँगा, क्योंकि मेरे कहने पर अरबी लोगों ने अंग्रेजों के साथ जिस समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, अंग्रेज उससे इन्कारी हो गए हैं। लारंस ने कवि से

कहा- अंग्रेज से इज्ज़त प्राप्त करने का ढंग यह है कि जब वह तुम्हें थप्पड़ मारे, उससे अधिक ज़ोर से उसके जबड़े पर मुक्का मारो। इस प्रकार सोया हुआ दिमाग जाग जायेगा तथा भाई अपने भाई को पहचान लेगा।

पैरिस में वह बरगसां सिलवा लेवी से मिला। बतौर विजिटिंग प्रोफैसर, लेवी शांति निकेतन में भी आया। हॉलैंड से होते हुए वह बैलजीयम गया तथा वहाँ के बादशाह ने उसका सम्मान स्वयं किया। यहाँ से वह न्यूयार्क अमेरिका गया। उसने यूरोप तथा अमेरिका से शांति-निकेतन के लिए दान राशि मांगी परन्तु उसे नहीं मिली। समस्त धन सम्पदा तो युद्ध के लिए भेजी जा रही थी। वह निराश नहीं हुआ, अपितु उसने लिखा, "मैंने सुजाता की साखी पढ़ी। महात्मा बुद्ध ने उससे भोजन नहीं मांगा था। वह तो तपस्या में लीन थे। सुजाता स्वयं उनके लिए खीर की कटोरी लेकर आई थी, क्योंकि बुद्ध की तपस्या पूर्ण हो चुकी थी। जिस दिन मेरी तपस्या पूर्ण होगी, उस दिन लोग स्वयं ही पैसे देने आ जायेंगे। अंग्रेज जो अधिकतर नरसंहार कर रहे हैं, उनसे दान मांगना ठीक नहीं था।"

स्वीडिश अकादमी ने तार भेजी- हम आपका 60वां जन्मदिन मनायेंगे। कृपया स्वीडन आइए। शांति-निकेतन के लिए पुस्तकें भी दी जायेंगी। कवि वहाँ गया तथा भाषण दिए। आरक बिशप ने भाषण सुनकर कहा- "साहित्य का नोबेल पुरस्कार उस व्यक्ति के लिए है जिसमें सिमरन और सृजन दोनों हों। टैगोर में यह दोनों ही हैं। उसके अतिरिक्त कोई इस शर्त पर पूरा नहीं उतरता। स्टाकहोम से वह बर्लिन गया। इतनी भीड़ कि अनेक स्त्रियाँ बेहोश हो गईं। सैंकड़ों को हॉल अन्दर आने की आज्ञा ही नहीं मिली, जिस कारण अगले दिन पुनः भाषण दिया गया। म्यूनिख में टॉमस मान उससे मिला। युद्ध में जर्मन की स्थिति अत्यधिक दयनीय हो गई थी। भाषणों द्वारा जितना धन उसने एकत्रित किया था, वह म्यूनिख के घायलों तथा भूखे बच्चों के लिए दान में दे दी। जर्मन चिन्तक माऊंट हर्मन कैसरलिंग ने लिखा, "जितने भी लोगों को आज तक मिला, उनमें से टैगोर सबसे महान् है। संसार में प्राप्त यश तथा भारत में मिले स्थान से वह बहुत ऊँचा है। अनेक शताब्दियों से लेकर उस जैसा अन्य कोई नहीं है। मैंने उसमें सम्पूर्ण मानव को देखा है।" वापसी के समय पराग पहुँचे, जहाँ प्रोफैसर वी. लैसनी के साथ मिलना हुआ। लैसनी ने टैगोर की कविताओं का मूल बंगला से अनुवाद किया तथा जीवन कथा भी लिखी। कवि की यह जीवन कथा बाद में अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। चैकोसलवाकिया में उसका स्वागत उत्साह सहित किया गया। जुलाई 1921 में भारत आया।

उसने निर्णय किया कि वह एकाग्रचित्त हो साहित्य रचना करेगा। राजनीति के मामलों से उसने क्या लेना, परन्तु यहाँ आकर उसने देखा महात्मा गांधी द्वारा

चलाया आन्दलोन प्रत्येक दर तक पहुँच चुका है। दिमाग की क्या आवश्यकता है, लोक भावना का अनुकरण करते हुए विजय द्वार तक पहुँच रहे हैं। कृष्ण कृपलानी का कथन है, "कितने समय तक आंधी का स्वागत करते रहोगे? आँखों में धूल के कण पड़ेंगे तो स्वयं ही चिल्लाओगे।"

गाँधी पूर्णतः राजनीतिज्ञ थे। अकस्मात् नाटकीय ढंग से मोड़ बदल कर सबको हैरान कर देते। कभी कभी बहुत बड़ी घटना को भी अनदेखा कर देते जैसे वह घटित ही नहीं हुई, कभी छोटी सी घटना के लिए शोर मचा उसे पर्वत के समान बड़ा बना देते, क्योंकि इसमें उनका राजनीतिक लाभ था। अंधी आँख को नैलसन के समान दूरबीन के शीशे के आगे रखकर कहता- मुझे तो कुछ दिखाई नहीं दे रहा। परन्तु टैगोर की बाज़ जैसी आँखें सब कुछ स्पष्ट देख परेशान थीं। ऐसी अंधी देशभक्ति के विरोध में तो वह विदेशों में अनेक भाषण देकर आया था, जिसमें प्रत्येक विदेशी वस्तु को घृणामयी दृष्टि से देखा जाए। यहाँ कृपलाणी की टिप्पणी है- अध्यापक जो देना चाहता है, विद्यार्थी अकसर उसे ग्रहण नहीं करते, वह वहीं लेते है, जो लेने की उनकी इच्छा होती है।

दुकानों से जबरदस्ती विदेशी वस्त्र निकाल जलाये जाने पर, वह बहुत विरोध करता था। जब गांधी जी ने विद्यार्थियों से कहा कि पढ़ाई छोड़कर स्वतन्त्रता आन्दोलन में कूद पड़ो तो उसने इस घोषणा का भी विरोध किया। चरखा कातने से देश की आर्थिक स्थिति ठीक हो जायेगी, इस तथ्य को निरर्थक मानता था। गांधी ने कथाकार शरत्चन्द्र चटर्जी जो अपने दूत के रूप में टैगोर के पास भेजा कि मेरे राजनीतिक आन्दोलन में समर्थन दो। सी.एफ.एंड्रियूज़ भी इस मीटिंग में शामिल हुआ। टैगोर ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि वह गांधी से सहमत नहीं है। जब यह बातचीत हो रही थी तो गांधी के समर्थकों ने दुकानों में से जबरदस्ती विदेशी वस्त्र उठाये तथा टैगोर के घर के आंगन में उन्हें आग लगा दी। गांधी बार-बार कह रहा था कि मेरा आन्दोलन अहिंसक है। टैगोर ने लिखा, "स्वयं आकर मेरे घर के आंगन को देखो तो पता चल जायेगा कि आपके शांतिदूत क्या कर रहे हैं। चितपुर मार्ग के दुकानदारों से वस्त्र छीन कर मेरे आंगन में उसे जला उसके इर्द-गिर्द पागल कलंदरों के समान नाचते हुए चीखें मार रहे है। क्या यही है आपकी अहिंसा, आपकी शांति?"

रोमा रोलां को दोनों की मानसिकता का पूर्णतः बोध था। उसने लिखा, "दोनों एक दूसरे के प्रशंसक हैं, परन्तु दोनों के मार्ग भिन्न-भिन्न हैं। जैसे दार्शनिक धर्म- प्रचार से अलग होता है, ऐसे ही हैं ये दोनो। सेंटपाल के लिए यह अनिवार्य है कि वह किसी अफ़लातून से दूर ही रहे। गांधी, टालस्टाय जैसा था, जिसकी प्रत्येक वस्तु हिंसक थी। यहाँ तक कि उसका अहिंसावादी सिद्धान्त भी हिंसक था। टैगोर

ऐशिया का मसीहा होते हुए भी संसार से रूहानी सहयोग की याचना करता घूम रहा है, यह मान कर कि ग्लोब एक विशाल घर है। गांधी ने असहयोग आन्दोलन को भड़काया। टैगोर गांधी जी के व्यक्तित्व से परिचित था वह जानता था कि उसके सहयोगी देश-भक्ति की भावना अधीन कोई भी अनैतिक कार्य कर सकते हैं। वह विद्यार्थियों से कहते- गांधी आपसे कैसा बलिदान मांग रहा है? विद्या की बलि। मैं तुम सबसे निवेदन करता हूँ शिक्षा ग्रहण कर पूर्ण मनुष्य बनो ताकि तुम अपनी जिम्मेवारियों को जान सकों।"

कवि ने गांधी आन्दोलन की कमियों पर एक लम्बा लेख लिखा तथा उसे मार्डन रीविऊ में प्रकाशित करवाया, जिसका शीर्षक था- ***द काल ऑफ़ द टरुथ।*** महात्मा गांधी ने इस चुनौती को स्वीकार करते हुए यंग इंडिया में अपनी सख़्त प्रतिक्रिया प्रकाशित की। इस लेख में टैगोर को 'महान् मन्त्री' कहा गया, जिसके संदेह निराधार नहीं है परन्तु इस बात की निन्दा की गई कि जब घर में आग लगी हो तो पालथी मार कर शांत नहीं बैठना चाहिए।

गांधी ने लिखा, "कवि भविष्य में जीता है तथा हमसे भी यही आशा करता है कि भविष्य में जीयें। प्रातः आकाश में उड़ती चिड़ियों को देखकर गीत गाता है। यह वही पक्षी हैं जिन्होंने कल भोजन किया तथा रात को वह हज़म होकर रक्त में मिल गया। मैं ऐसे पक्षी देख रहा हूँ जो पिंजरे में बंद हैं तथा उनके पंखों में उड़ने की शक्ति नहीं रही। भारतीय आकाश में मानव उड़ नहीं सकता अब, वह तो रोटी तक के लिए निर्भर है। उसे काम दो ताकि पेट भर सके। कबीर के भजन गाना सरल है, रोगियों को राहत पहुँचाना कठिन है।"

इसे पढ़ कर टैगोर ने कहा- इस ऐतिहासिक बड़े संकट से संघर्ष करते अपने साथियों के साथ यदि कदम मिला कर चल नहीं सकते तो यह भी मत कहो मैं सही हूँ, वह गलत हैं।

जर्मन शायर हीन ने लिखा, "वह हमारे युग का ऐसा संगीतकार है जो काल के खण्डहरों में बैठा गा रहा है। वह काल की अनन्तता में ओतप्रोत है परन्तु वर्तमान को भी अनदेखा नहीं करता।"

नोबेल पुरस्कार में मिली राशि तो पहले ही कवि ने शांति-निकेतन को दे दी थी। 1921 में अपनी समस्त रचनाओं का कॉपी-राईट भी दे दिया। कवि कभी कभी यह सोचकर उदास हो जाता कि इस सांसारिक कार्यों में उसने कितना समय नष्ट कर दिया। कभी कहता, शांति-निकेतन जैसा इतना बड़ा पंगा शुरू करने का क्या फायदा था? लिखा, "जब मैं संसार में आया, मेरे पास एक बांसुरी के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। मैंने स्कूल छोड़ दिया, दुनियादारी में सफल नहीं हो सका, परन्तु

मेरी बांसुरी मेरे पास ही रही। मेरा एक मित्र मेरे संगीत में सम्मिलित होता था। उसका संगीत पत्तों में, बहते पानी में, तारों की खामोशी में, अश्रुओं में, मुस्कान में, दुःखों तथा सुखों में तरंगित हो जाता। मैं अपने मित्र की मातृभाषा से परिचित था, इसी कारण जल तथा पवन मेरी बांसुरी के मध्य आकर खड़े हो गए। मैं मूर्खों के समान उनकी बातें मानता रहा। बांसुरी को कहीं रखकर मैं भूल गया। पल में ही मैं बूढ़ा हो गया तथा बुद्धि का भार पीठ पर लाद कर दर-दर आवाज़ देता रहा। यह सब कुछ मुझे भयानक स्वप्न के समान प्रतीत होता है। मैं आधी रात को भयभीत हो जाग जाता हूँ तथा स्वयं से पूछता हूँ- मेरा संगीत कहाँ गया?

"मैंने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक विख्यात एक विश्वविद्यालय का निर्माण तो कर लिया, ठीक है यह एक व्यापक कार्य था परन्तु मैंने अपना लघु गीत खो दिया। मेरी यह कमी कभी पूरी नहीं हो सकती। मुझे तो बांसुरी चाहिए, समझदार लोग बेशक मुझे अनदेखा करें, नफ़रत करे, निकम्मा कहें या आवारा, मुझे परवाह नहीं।"

सितम्बर 1922 में कवि दक्षिण पश्चिमी भारत के भ्रमण हेतु गया, तब अहमदाबाद में साबरमती आश्रम में ठहरा। उस समय गाँधी जेल में थे। कवि ने कहा- बलिदान के वास्तविक अर्थ को गाँधी व्यक्त कर रहा है। पुनः जापान तथा चीन का भ्रमण किया। इन यात्राओं के कारण शिंघाई में ऐशियाटक ऐसोसिएशन बनी जो अब तक गतिशील भूमिका निभा रही है। कवि की आयु 63 वर्ष हो गई थी परन्तु प्रेम-गीत फिर भी पूर्णतः निश्छल भाव से लिख रहे थे-

आँसुओं से भरी आँखों से जब तुमने मेरी तरफ देखा
मैंने कहा था कभी नहीं भूलूंगा तुम्हे
क्षमा करना, मैं भूल गया।
सदियां हो गई इस बात को
मेरी रूह पर छपी हुई हैं तुम्हारी आँखे
प्रेम का पहला ख़त, शर्माता तथा डरता
उस पर तुम्हारे दिल के हस्ताक्षर
समय की कूची चली धूप छाया के ऊपर से
मेरे दुःख की लौ यदि चुपचाप विदा हो गई थी
तो मुझे क्षमा करना
मैं इतना जानता हूँ तुम मेरे जीवन में आई
तो गीतों की भरपूर फ़सल पैदा हुई।

पीरू की यात्रा पर जाते समय कवि मार्ग में इतना बीमार हो गया कि यात्रा को वहीं स्थगित कर सान इसीदरो में उतर गया। वहाँ वह किसी को नहीं जानता

था परन्तु एक नेक स्त्री विकटोरिया ओकांपो उसे समाचार पत्रों के माध्यम से जानती थी। वह कवि को अपने सुन्दर बंगले में ले गई। घर के समीप एक नदी बहती थी जो बॉलकनी में से देखने पर बहुत ही रमणीय लगती। यहाँ जिन कविताओं की रचना की, उस संग्रह का नाम पूर्वी (शाम का एक राग) रखा। यह पुस्तक उसने अपनी इस मेहरबान मेज़बान को समर्पित की है। डाक द्वारा उसे पुस्तक भेजते हुए लिखा, “इच्छा तो ये थी कि अपने हाथों से तुम्हें यह पुस्तक भेंट करूँ, परन्तु डाक द्वारा भेज रहा हूँ। तुम्हें ऐसा अनुभव होगा जैसे इस पुस्तक में कुछ भी नहीं। बस यही कि जितने समय तक तुम्हारे घर में रहा, उससे अधिक समय यह पुस्तक तुम्हारे साथ बिताएगी।” इस नेक स्त्री को याद करते हुए कवि लिखता है, “हँसती हुई, खुशी के फूल लेकर वह मेरे पास आई। इसके बदले में देने के लिए मेरे पास दुःख के सिवाय कुछ नहीं था। मैंने पूछा, “किसकी पराजय होगी यदि हम आपस में इन वस्तुओं का वितरण कर लें? उसने प्रेम से मुस्कराते हुए कहा, 'आओ बदल लें। यह लो मेरे फूल तथा अश्रुओं में भीगा यह फल तुम मुझे दे दो'। मैंने उसकी तरफ देखा तो पूर्णतः सौन्दर्य ही था। मेरे फल का भार उठाकर वह हँसने लगी। “मैं जीत गई', हँसते हुए उसने कहा और चली गई। गर्मी बहुत थी। जो फूल मैंने उससे मांग कर प्राप्त किए, वह दोपहर तक मुरझा कर सूख गए।”

मई 1925 में महात्मा गाँधी शांति-निकेतन में आए, इस आशा से कि वह कवि को समझा सकेंगे कि स्वराज्य की प्राप्ति का मार्ग चरखे में से होकर निकलता है। जिस कमरे में गाँधी जी का पलंग था, उसे सुगन्धित पुष्पों से सजाया गया। गाँधी जी ने हँसते हुए कहा- यह सुहाग सेज किसके लिए तैयार की है? कवि ने कहा- शांति-निकेतन, मेरी सर्वदा युवा युवरानी आपका स्वागत इस कमरे में करती है। चरखा, कवि के मन को प्रभावित करने में सफल न हो सका, गाँधी जी को बहुत दुःख हुआ। इसी वर्ष सर्दियों में बड़े भाई दिजेन्द्रनाथ का निधन हो गया। कवि की अपेक्षा वह गाँधी जी के अधिक करीब था, क्योंकि वह चरखे का उपहास नहीं उड़ाता था। इस समय मसोलीनी ने दो विद्वानृ शांति-निकेतन में विजिटिंग प्रोफैसर के रूप में भेजे तथा साथ में अनेक पुस्तकें भेंट स्वरूप दीं। मसोलीनी ने इटली आने का निमंत्रण भी भेजा।

15 मई 1926 को वह नेपलज़ के लिए रवाना हो गए। कवि का अत्यधिक सम्मान हुआ। 7 जून को रोम गए जहाँ गर्वनर ने उनका दिल से स्वागत किया। यहाँ कला विषय पर दिया गया भाषण मसोलोनी सहित सभी ने सुना। महाराजा विक्टर इमैनुअल तृतीय ने अलग से सम्मानित किया और यहीं इटालियन भाषा में ***चित्रा*** नाटक का अभिनय किया गया। क्रोचे उन दिनों में नज़रबंद था। कवि ने

उससे मिलने की इच्छा ज़ाहिर की तो चोरी-चोरी, खतरा उठाते हुए कुछ मित्रों ने उसकी मुलाकात करवा दी। इटली की सरकार उसके भाषणों को फाशीवाद के प्रसार हेतु समाचार पत्र की सुर्खियों के रूप में प्रकाशित कर रही है, कवि को इस बात का कोई ज्ञान नहीं था। स्विटज़रलैंड के भ्रमण के समय उसे यह बात रोमा रोलां ने बताई। सुनकर कवि को बहुत दुःख हुआ तथा यहाँ उसने फाशीवाद की सख़्त आलोचना की। कवि ने लिखा, "मैं उड़कर शांति-निकेतन पहुँचना चाहता हूँ, क्योंकि सावन के मेघ आने वाले हैं जो आकर पूछेंगे, कहाँ गया हमारा प्रिय कवि जो अपने नवीन गीतों से हमारा स्वागत करता था, कहाँ है वो?"

जर्मन में उसका स्वागत राष्ट्रपति हिंडनबर्ग ने किया। यहीं वह आईनस्टाइन से मिले तथा यह मुलाकात एक शाश्वत मित्रता में बदल गई। एक सप्ताह तक पराग में रूके जहाँ चैक्क भाषा में उसके नाटक ***डाकघर*** का अभिनय किया गया। यहीं से यूनान चले गए, वहाँ की सरकार ने एथंज़ में 'आर्डर ऑफ़ द रिडीमर' सम्मान से सम्मानित किया। तत्पश्चात् तुर्की गए। कवि को सम्मानित करते हुए तुर्क सरकार ने संसद की चल रही कार्यवाही को बीच में ही रोक दिया। राजा फौद ने अरबी पुस्तकों को भेंट स्वरूप विश्व-भारती हेतु दिया। परन्तु कवि इन विशाल आयोजन से ऊब जाता। उसने लिखा, "यश तथा शांति एक साथ नहीं रह सकतीं। यदि बलात् इनको एक साथ कर दिया जाए तो जल्दी ही बिछुड़ जाती हैं।"

पांडेचरी श्री अरविन्दों से मिले तथा लिखा, "जब मैंने वर्षो पहले जवान अरविन्द को प्रचण्ड राजनीतिक योद्धा के रूप में देखा था, मैंने मन में कहा था, 'अरविन्द, रवीन्द्र का प्रणाम स्वीकार करो'। अब मैंने एक शांत ऋषि को समाधि लगाए हुए देखा तो फिर से कहा, 'अरविन्द, रवीन्द्र का प्रणाम स्वीकार करो'।"

रूस से जर्मन के मार्ग से होते हुए वह अमेरिका गए। स्थान-स्थान पर उनका सम्मान किया गया तथा भाषणों की एक श्रृंखला चली। राष्ट्रपति हूवर उन्हें स्वयं बोसटन लेकर गए। अमेरिका भी बरतानवी गतिविधियों से सन्तुष्ट नहीं था। यहाँ वे प्रसिद्ध दार्शनिक विल डूरां से मिले। विल डूरां ने भारत का पक्ष लेते हुए एक पुस्तक की रचना की- ***द केस फॉर इंडिया,*** जिस पर अंग्रेज सरकार ने पाबन्दी लगा दी थी। यह पुस्तक टैगोर को समर्पित करते हुए डूरां ने कहा- केवल इस कारण कि टैगोर ने जाने के लिए कह दिया है, अंग्रेजों को भारत से चले जाना चाहिए।

कवि ने 'शाहजहाँ' नामक एक लम्बी कविता लिखी, जिसमें वह इसके निर्माता की इस इच्छा का प्रशंसक है कि संसार में शताब्दियों तक पसंद आने वाली सुन्दरता छोड़ी जाये। फिर भी कवि सोचता है कि उत्तम सुन्दर कब्र में बैठकर सोचने

की अपेक्षा बच्चे का छोटा झूला ताजमहल से कहीं अधिक मूल्यवान है क्योंकि यहाँ मानवता की लता आगे बढ़ रही है।

4 जनवरी 1932 को उनका जन्मदिन कलकत्ता में व्यापक स्तर पर मनाने का निर्णय लिया गया परन्तु तभी गाँधी जी को बन्दी बना लिए जाने का समाचार छपा। कवि ने इस समारोह को निम्न स्तरीय बना दिया। अभी एक सप्ताह पहले ही वह यूरोप से वापिस आए थे। उन्होनें लंदन के प्रधान मन्त्री रैमज़े मैकडोनालड को एक लम्बी तार भेजी- इतना अधिक दमन प्रारम्भ हो चुका है कि भारतीय स्थायी रूप में बरतानिया के विरुद्ध हो जायेंगे। 26 जनवरी को बयान भी जारी किया जिसे सरकार ने सैंसर के कारण छोटा करके प्रकाशित किया। कवि ने इसे अपना अपमान समझा तथा 'प्रश्न' नामक कविता की रचना की। जिसमें लिखा- हे परमात्मा! तुम अपना दूत भेज देते हो, जो तुम्हारा संदेश देता है। आज वह संदेश जो यीसू मसीह द्वारा आया है, मज़ाक बन गया है। तुम इन लोगों को क्षमा कैसे करोगे अब? तुम्हारा रोशनी का रास्ता अंधकारमय हो गया है, क्या तू उनसे प्रेम करेगा जिन्होंने तुम्हारी धरती को विषैला कर दिया है?

आयु अधिक होने के कारण कमज़ोरी आने लगी तो कवि ने निर्णय किया अब कोई विदेश यात्रा नहीं करनी, स्वास्थ्य साथ नहीं देता। ईरान के बादशाह रज़ा शाह का निमंत्रण पत्र आया। कवि ने डायरी में लिखा, "अपने मित्र देश के सर्वोच्च राज्यप्रमुख का आमंत्रण कैसे वापिस कर सकता हूँ?" इसलिए 11 अप्रैल 1932 को ईरान समुद्री यात्रा द्वारा नहीं, अपितु हवाई जहाज़ से गए।

पहले शीराज़ गए जहाँ हाफ़िज़ शीराज़ी तथा शेख साअदी, शायरों की कब्रों पर पुष्प भेंट किए। साअदी 13 वीं तथा शीराज़ी 14 वीं शताब्दी के फकीर थे। इसफाहान की यात्रा की तथा बाद में राजधानी तहरान पहुँचे। भिन्न-भिन्न समय में शीराज़ तथा इसफ़ाहान भी ईरानी शासन की राजधानी के नाम से जानी जाती थीं। इन पंक्तियों के लेखक ने इन समस्त स्थानों का भ्रमण करके जाना कि संसार कभी भी ईरानी कला का मुकाबला नहीं कर सकता। ईटली तथा यूनान भी नहीं। काग़ज़ों में लगाने वाले क्लिप भी चित्रित किए हुए हैं। बादशाह ने तहरान में कवि का सम्मान किया तथा समारोह एक ऐतिहासिक यादगार बन गया, उन्हें "पूर्वी आकाश का सर्वाधिक चमकने वाला नक्षत्र" कहा गया। वापसी के समय वह बग़दाद से होते हुए आए जहाँ ईराक के बादशाह फ़ैसल ने उनका स्वागत किया। वहाँ उन्होंने एक दिन बैदुइनो की बस्ती में व्यतीत किया।

जीवन में अनेक मौतें देखीं। एक एक करके सभी प्रियजन मित्र, भाई, बहन तथा पुत्र आदि बिछुड़ गए। बग़दाद में यह समाचार मिला कि उनका प्रिय

पौत्र जो जर्मन में कवि के संग्रह को प्रकाशित करने हेतु गया था, संसार से विदा हो गया। यह समाचार सुनकर कवि को आघात पहुँचा। कविता लिखी, "पत्थर दिल महानता ने तुझे अजीत तो बनाया है, भयानक भी कर दिया। तुम्हारी ताकत से भयभीत कांपते दिल से मैं तुम्हारे सामने खड़ा हूँ। तुमने यह चोट दी। मैंने कांपते हुए पूछा- अन्य कुछ शेष है? क्या यह अंतिम है? ओर तो नहीं कुछ? मेरा भय चला गया। जब तुम मुझ पर बिजली गिराने लगे, उस समय तुम कितने बड़े लग रहे थे, परन्तु जब बिजली गिर गई तो तुम मेरे जितने हो गए, मैं पहले जैसा वैसे का वैसा ही रहा। तू बड़ा हो सकता है परन्तु मृत्यु से बड़ा नहीं। अब मैं हूँ जो मृत्यु से बड़ा हूँ। इसे तुम मेरा अंतिम वाक्य समझना।"

गाँधी जी ने 20 सितम्बर 1932 को जेल में अनशन-व्रत शुरू कर दिया। अंग्रेजों ने ऊँची तथा निम्न जातियों के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों की स्थापना के शाश्वत भेदभाव की नींव रख दी जिसके विरोध में यह व्रत रखा गया। सबसे पहला पत्र उन्होंने टैगोर को लिखा, "प्यारे गुरूदेव, आज मंगलवार है। सुबह के तीन बज रहे हैं। दोपहर को मैं अग्नि द्वार में प्रवेश करूँगा। इस प्रयास हेतु आपके आशीर्वाद की आवश्यकता है। आप मेरे सच्चे मित्र हो, क्योंकि प्रत्येक बात आपने मेरे साथ निष्कपट, निःशंक होकर की। यदि मन से मेरे इरादे का समर्थन करते हो तो मुझे आशीर्वाद दो। मुझे इससे शक्ति प्राप्त होगी।"

अभी पत्र को डाक में नहीं भेजा था कि उन्हें कवि की तार मिली, "भारत की एकता तथा सामाजिक संगठन को कायम रखने हेतु अपने अमूल्य जीवन को बलिदान करने का निर्णय सही है। आपकी महान् तपस्या का सम्मान करते हुए हम प्रेमपूर्वक आपके मार्ग पर चलेंगे।"

कवि का कोमल हृदय तार भेजकर शांत नहीं हुआ। वह 24 सितम्बर को यरवदा जेल पूना में महात्मा गाँधी से मिलने के लिए निकले। परन्तु खतरा अनुभव कर सरकार ने 26 सितम्बर को अपना फैसला वापिस ले लिया तो गाँधी जी ने व्रत खत्म कर दिया। इस समय कवि गाँधी जी के पास ही बैठे थे। गाँधी ने लिखा, "ईश्वर का नाम लेकर व्रत शुरू किया था। गुरूदेव के सामने ईश्वर का नाम लेकर ही इसे समाप्त करने लगा हूँ।" इस अवसर पर कवि ने गीत गाया-

जीवन जखन शुकाये जाये
करुणा धाराएँ ऐसो...

(जब जीवन सूख जाए तो प्रभु जी दया की धारा में आओ।
जब समस्त मिठास खत्म हो जाये तो प्रभु जी अमृत गीत की वर्षा करो।)

15 जनवरी 1934 को उत्तर भारत में भयानक भूकम्प आने से जान-माल एवं प्राणों का अत्यधिक नुकसान हुआ। सर्दियों में लोग आकाश के नीचे सोने लगे। महात्मा गाँधी ने समाचार लिख कर भेजा, "जाति-पाति के भेदभाव के कारण ही मानव मानव से नफ़रत करता है। यह भूकम्प इसी पाप का ईश्वर द्वारा दिया गया दण्ड है। मुझे विश्वास है कि छूत-अछूत से इस भूकम्प का जो सम्बन्ध है अदृष्ट है।"

इसे पढ़कर टैगोर बहुत हैरान भी हुए, दुःखी भी। उन्होंने कहा, "मुझे इस बात का खेद है कि गाँधी जी ने भूकम्प को ईश्वर द्वारा दिया दण्ड कहा है। इससे अधिक खेद इस बात का है कि इस प्रकार की अवैज्ञानिक बातों को भारतीय सत्य मान लेते हैं।"

कवि की इस टिप्पणी को पढ़ कर गाँधी जी ने ***हरिजन*** लोगों के मध्य पुनः कहा, "मेरे लिए यह भूकम्प ईश्वर द्वारा दिया गया दण्ड ही है, यह मेरा कोई अंध-विश्वास नहीं है। ईश्वर की नीतियों, नियमों तथा कार्यवाही का किसी को कोई बोध नहीं। मेरा यही विश्वास है कि यह ईश्वरीय प्रकोप है।"

जवाहर लाल नेहरू की इस विषय में टिप्पणी है, "जब भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों का भ्रमण कर रहा था तो गाँधी जी का बयान पढ़कर मैं हैरान रह गया कि यह ईश्वर द्वारा दिया गया दण्ड है। यह एक निराशाजनक विचार है। मैं रवीन्द्रनाथ टैगोर के विचारों से पूर्णतः सहमत हूँ।"

गाँधी जी प्रत्येक घटना/दुर्घटना में राजनैतिक समीकरण ढूंढ लेते थे तथा इसमें से ऐच्छिक लाभ प्राप्त करते थे। यह सही है कि सब कुछ निजी न होकर देश के हित के लिए ही होता था। हिन्दुस्तानियों की मानसिकता को गाँधी से अधिक न तो टैगोर समझते थे, न ही नेहरू। यही कारण है कि सामान्य जन टैगोर एवं नेहरू की अपेक्षा गाँधी जी पर अधिक विश्वास करते थे। केवल कथनों के आधार पर नहीं, अपितु गाँधी जी का जीवन यापन भी एक निर्धन व्यक्ति के समान ही था यद्यपि नेहरू एवं टैगोर का जीवनयापन का ढंग उच्च कुल के समान था।

शांति-निकेतन टैगोर का वह स्वप्न था जो साकार हुआ। साकार तो हो गया, खर्च अधिक, आय कम। जिन लोगों के बच्चों के भविष्य को सफल बनाने के लिए उसने अपनी समस्त सम्पत्ति खर्च कर दी, उस देश के निवासी इस विश्वविद्यालय की आर्थिक सहायता करने के लिए तैयार नहीं थे। भारतीयों की अंग्रेजों के समय से लेकर अब तक यही प्रवृत्ति है कि वह या तो धर्म के नाम पर पैसे देते हैं, या राजनीतिज्ञों को। विद्यालयों की ओर कोई रुचि नहीं थी। टैगोर के समय देश गुलाम था, निर्धन था। तथापि जिन धनी व्यक्यिों के पास पैसे देने का

सामर्थ्य था, वह भी संकोच करते थे, क्योंकि गाँधी जी के साथ उनकी मित्रता थी। धनी व्यक्ति सरकार को नाराज़ नहीं कर सकते।

हाथ में पात्र पकड़ दर दर मांगना भी टैगोर की प्रवृत्ति नहीं थी। एक योजना बनाई गई कि स्थान-स्थान, गाँवों, शहरों में घूमकर टैगोर की रचना को मंच पर प्रस्तुत किया जाये। बेशक आयु के अंतिम पड़ाव पर पहुँच चुके थे और इस क्षेत्र में काम करना सरल नहीं था परन्तु दो बातें सदैव उन्हें प्रेरणा एवं उत्साह देती। एक तो शांति-निकेतन का अस्तित्व रहना चाहिए, दूसरे इस प्रदर्शनी द्वारा उसकी कला भारतीयों के हृदय तक पहुँचनी थी। उनके मन में इस कला ने उतरना था, जो अशिक्षित था, उनके मन में भी, जो बंगला नहीं जानते थे। शिष्य, गायक तथा अभिनेताओं को समूहबद्ध किया गया। स्वयं निर्देशक बने। वर्ष 1932 से लेकर 1936 तक पाँच वर्ष भारत के भिन्न-भिन्न प्रदेशों, स्थानों में यह कार्य चलता रहा।

जब मैं अप्रैल 2008 में ईरान गया, वहाँ टैगोर के साथ आयतुल्ला माराशी का चित्र देखा। माराशी ने विश्व प्रसिद्ध पुस्तकालय की स्थापना कुम्म शहर में की है, जिस का विस्तृत वर्णन मैंने अपने लेखन ईरान तथा ईरानी में किया है। यात्राओं के समय टैगोर की साहित्य रचना भी साथ ही चलती रही।

उसकी अंतिम रचनाओं में अत्यधिक मधुरता, शांति का प्रवेश होता है। शांति-निकेतन के समीप से कोपाई नदी बहती है। बचपन से लेकर वृद्ध होने तक वह कोपाई के अंग-संग रहा। बचपन से ही वह मल्लाह तथा नदी से सम्बन्धित कहानियाँ सुनते सुनते तथा नदी के आस-पास घूमते लोगों को देखने से उसके हृदय में स्थायी स्मृमियाँ बन गईं। उदाहरणतः, "उसकी बातें विद्वानों जैसी नहीं, अपितु सामान्य व्यक्तियों के समान साधारण ही हैं। कंधे पर धनुष लटकाये जब कोई संन्यासी बालक इस के तट पर चलता है तो लहरें भयभीत नहीं होतीं। बैल धीरे-धीरे गड्डा खींचते हुए चलते रहते है। अपने झुके हुए कंधों पर कुम्हार बर्तनों का टोकरा उठाये, हाँफते हुए जा रहा है। गाँव का पालतू कुत्ता उसके साये के साथ-साथ चलता जा रहा है कुछ दूर तक। अपने समय को उसने ऐसे बांध लिया है जैसे गाँव के स्कूल मास्टर को तीन रूपये मासिक वेतन ने बांध लिया है तथा वह अपने हाथ में पुरानी छतरी पकड़े धीरे-धीरे चलता हुआ पढ़ाने के लिए जा रहा है।" ये पंक्तियाँ 'कोपाई' कविता में हैं।

कवि के लिए स्वर्ग कहीं दूर आकाश में नहीं, धरती पर है। उसका कथन हे, "मैंने प्रेम किया। पता नहीं कितना और किस ढंग का। मैंने धरती को प्रेम किया। देर तक मेरी आँखे सतत धरती को देखती रहती हैं। भूख तथा प्यास में मैंने प्रेम अमृत

का पान किया। इसकी रेत में मुझे जीवन की यथार्थ सार्थकता प्राप्त हुई। तिरस्कृत, धिक्कारे हुए लोगों के बीच मुझे मुक्ति मिली है।"

'पुनश्च' नामक कविता में कवि ने एक घटना का वर्णन किया है। अमीना मुसलमान ललारी की पुत्री है। विद्वान् ब्राह्मण शंकर लाल को अपने पाण्डित्य पर अत्यधिक गर्व था। उसने किसी अन्य विद्वान् के साथ शास्त्रार्थ हेतु जाना था। उन दिनों में ऐसे बौद्धिक टकराव होना सामान्य बात थी। उसने देखा कि पगड़ी मैली हो गई है। ललारी को धोने तथा रंग करने के लिए दे दी। ललारी ने अपनी पुत्री अमीना से कहा- जाओ, नदी पर जाकर पगड़ी को धोकर ले आओ। जब लड़की पगड़ी को धोकर सुखाने लगी तो उसने पगड़ी के एक कोने में कविता की एक पंक्ति जो धागे से लिखी हुई थी, देखी। लिखा था :

तोमार श्रीपद मोर ललाटे विराजे।

(आपके पवित्र चरण मेरे सिर पर सुशोभित हैं।)

अमीना अपनी झोपड़ी में गई। सूई में धागा डाला तथा निम्न पंक्ति लिखकर उसे पूरा किया :

परश पाईने ताई हरदयेर माझे।

(इसके लिए मन उनका स्पर्श पा नहीं सका।)

पण्डित ने दूसरी पंक्ति पढ़कर कहा- लड़की, अब मै राज-दरबार में वाद-विवाद करने क्या जाऊँगा? तुमने मेरे घमण्ड को मन के ज्ञान में परिवर्तित कर दिया, जो अब तक मेरे सिर में था। अब मेरा मार्ग कोई अन्य है।

एक शाम कवि अपने कमरे में अकेला बैठा था। उसे एक लड़की याद आई जिसके साथ वह बचपन में खेलता था। उसे कविता में चित्रित करते हुए लिखता है- "अचानक लगा जैसे कोई सरसराहट मेरे समीप आ गई। मैं उसके सांसों की महक को पहचान गया, उसके आने का अहसास हुआ। मैंने पूछा- दूसरी दुनियां में से तुम वापिस आ गई हो लड़की? उसने कहा- किसके पास वापिस आऊँ? कवि ने पूछा- क्या मैं यहाँ नहीं हूँ? क्या तुम्हें दिखाई नहीं देता? तभी आवाज़ आई- धरती पर जो मेरा था, वह मेरे बचपन का साथी था एक छोटा सा। इस कमरे में वह कहीं नहीं है। मैंने पूछा- क्या वह कहीं नहीं? एक धीमी आवाज़ सुनी- वह वहाँ है जहाँ मैं हूँ। और कहीं दिखाई नहीं दिया।"

कवि के परिवार के सभी सदस्य एक एक करके बिछुड़ गए। एक बेटी रह गई थी केवल, इस बेटी का इकलौता पुत्र जर्मन में मौत से संघर्ष कर रहा था। माँ उसके पास ही बैठी थी। पुत्र की मौत हो गई, अगले दिन माँ का भी देहांत हो गया। यह सब सहन करना कवि के लिए बहुत कठिन था। उसने अपना निवास

स्थान बदलना शुरू कर दिया। आज यहाँ, कल वहाँ, जिस स्थान पर आज सोया, कल वहाँ नहीं रहेगा। अंत में फैसला किया कि मिट्टी का कच्चा कमरा बनाकर उसमें रहना है। जब मिट्टी के साथ मिट्टी होने का समय समीप आ रहा है, तो क्यों न पहले से ही मिट्टी के बीच ही रहें। बस, बेचैनी से मुक्त होने के मार्ग हैं सभी।

कलकत्ता से गेय-नाटकों की यात्रा उत्तर की तरफ बढ़ती हुई दिल्ली पहुँच गई। उन्हीं दिनों में गाँधी जी दिल्ली में थे। उन्हें यह देख कर बहुत दुःख हुआ कि इस आयु में टैगोर को शांति-निकेतन के लिए धन एकत्रित करने हेतु कष्ट सहना पड़ रहा है। उन्होंने साठ हज़ार का चैक्क देकर कहा- अब आराम करने की आयु है गुरूदेव। वापिस जाओ।

परन्तु उनकी रुचि पुस्तकों में से निकल कर मंच पर प्रस्तुत होने वाली कला में हो गई थी। कृष्णा कृपलानी ने लिखा, "शांतचित्त हो एक तरफ बैठकर देखते रहते, न दर्शक के समान, न आलोचक की तरह, ऐसा प्रतीत होता जैसे एक तरफ साक्षात् रचना है, दूसरी तरफ रचना का हस्ताक्षर बैठा है।"

वर्ष 1937, शीत ऋतु का आगमन हो रहा था। दस दिसम्बर की शाम, कुर्सी पर बैठे बैठे बेहोश हो गए। उस समय टैलीफोन की सुविधा नहीं थी। कलकत्ता में डॉक्टरों को सूचना देते देते देर हो गई। कोई बीमारी नहीं थी, बिल्कुल सही पढ़ते लिखते थे। क्या हो गया अचानक? 16 पहर तक मूर्च्छा दौरान मृत्यु तथा जीवन के मध्य संघर्ष करते रहे। फिर धीरे-धीरे होश आया। इस घटना के पश्चात् अठारह कविताओं की एक माला प्रकाशित करवाई, जिसका नाम 'प्रांतिक' रखा। इन कविताओं में वैराग्य या दुःख नहीं है। जैसे कवि प्रत्येक अनुभव से स्वतन्त्र हो गया हो, लिखा, "मंच पर से परदा उठा, मंच पर कुछ नहीं था। परदा गिरा, तब भी कुछ नहीं था, न शृंगार, न शृंगार कर्त्ता।"

कभी-कभी कवि को व्याकुल करने वाले स्वप्न आते। लिखा, "एक बार मैंने देखा, कलकत्ता लड़खड़ाते कदमों से कहीं जाने के लिए निकला। हज़ारों रोशनियाँ एक दूसरे को आगे धकेल रही थीं। ईंटों की विशाल इमारतें गैंडे के समान चलने लगीं, खिड़कियाँ तथा दरवाज़े खटकने लगे। गलियाँ साँप के समान रेंगने लगीं, जिनके बीच बसें, कारें तथा ट्रक गिरने लगे। बाज़ार की दुकानें नशे में धुत शराबी के समान शोर करतीं, झगड़ती देखीं। हैरीसन सड़क को अपने पीछे पीछे खींचता हुआ हावड़ा पुल एक विशाल बिच्छू के समान प्रतीत हुआ। पागल हुआ हमारा स्कूल सबसे आगे भागने लगा, गणित तथा व्याकरण की पुस्तकें उससे भी आगे निकल गईं। करोड़ों लोग चीख रहे थे, इस पागलपन को रोको। अरे कलकत्ते, तुम बताओ तो सही किधर जा रहे हो? वेग के नशे में मग्न कलकत्ता तक यह आवाज़ें नहीं पहुँची। उसकी नाचने

की इच्छा के कारण स्तम्भ तथा दीवारें व्याकुल हो गई थीं। मैं सोचने लगा, यदि कलकत्ता ने दिल्ली आगरा या लाहौर जाना है तो इसे पगड़ी बांधनी चाहिए तथा जूते पहनने चाहिए। यदि इसका निर्णय इंग्लैंड जाने का है, तब टोप, सूट तथा बूट पहन ले। तभी एक धमाका हुआ। मेरी आँख खुल गई। कलकत्ता, हमेशा की तरह कलकत्ता में ही था।"

5 अप्रैल 1940 को सी.एफ. एंड्रियूज़ का कलकत्ता में देहांत हो गया। कवि ने मन को एक और आघात पहुँचा। श्रद्धांजलि देते हुए कहा- किसी अन्य व्यक्ति में इस प्रकार की श्रेष्ठ धार्मिकता मैंने नहीं देखी। एंड्रियूज़ कहा करता था- महात्मा, अंग्रेजों को गालियाँ देने की तुम्हें क्या आवश्यकता है। यह काम मैं करता रहूँगा।

टैगोर ने अंग्रेज़ी में सबसे अधिक पत्र एंड्रियूज़ को लिखे। एंड्रियूज़ ने अपने जीवित रहते हुए इन पत्रों के संग्रह को प्रकाशित करवा दिया था, जिसका शीर्षक है- *लैटरज़ टू ऐ फ्रैंड।* ऐसा प्रतीत होता है जैसे टैगोर को एक ऐसा मित्र मिला था जिसके सामने वह मन के समस्त रहस्यों को प्रकट कर सकता था। एंड्रियूज का मन अत्यधिक दयालु था, जिस कारण भारत में वह दीनबन्धु नाम से जाना जाने लगा। एंड्रियूज के निधन के पश्चात् कवि अकसर कहने लगे थे- अब मैं घाट की सीढ़ियों पर बैठा नाविक की प्रतीक्षा कर रहा हूँ कि उस पार मुझे भी ले चल अब।

ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी ने 7 अगस्त 1940 को कवि को ऑनरेरी डी.लिट् की डिग्री देने का निर्णय लिया। भारत की सुप्रीम कोर्ट के उस समय के जज सर मौरिस गवेयर, डॉ. राधा कृष्णन तथा कलकत्ता हाई कोर्ट के न्यायाधीश ने ऑक्सफोर्ड की प्रतिनिधिता की। यह सम्मान शांति-निकेतन में प्रदान किया गया। इस सन्दर्भ में रोज़नस्टीन की टिप्पणी उल्लेखनीय है, "फाकस स्टेनवेज़ का विचार था कि ऑक्सफोर्ड या कैंबरिज़, दोनों में से कोई यूनिवर्सिटी टैगोर को सम्मानित करे। जब उसने इस सम्बन्धी लार्ड कर्ज़न से परामर्श किया तो वायसराय कर्ज़न ने कहा- भारत में टैगोर से भी महान् व्यक्ति रहते हैं। मैं हैरान हो गया कि उससे महान् अन्य कौन हो सकता है। टैगोर की साहित्य-रचना से इंग्लैंड इस कदर मुनकिर हो जायेगा, यह जानकर बहुत दुःख हुआ। अब मैं समझ गया कि इंग्लैंड ने अपने को भारत से अलग मान लिया है।"

26 सितम्बर को बीमार हो गए। इस समय वह कलिम्पांग पहाड़ी पर विश्राम कर रहे थे। जब तक कलकत्ता से डॉक्टर नहीं आते, तब तक दार्जलिंग के सिविल सर्जन से निवेदन किया गया कि वह जाँच करके दवा दे दें। वह बहुत ही बेरुखी से पेश आया। साथ तो चल पड़ा, परन्तु आकर पूछा- इसे थोड़ी बहुत अंग्रेज़ी

आती है? उसका यह व्यवहार स्पष्ट कर रहा था कि अंग्रेज़ भारतीयों से स्वयं ही किस हद तक दूर हो चुके हैं। जाँच करके कहा कि किडनी खराब है। मेजर आप्रेशन करना होगा। कवि के सेवकों ने आप्रेशन नहीं करने दिया। तभी कलकत्ता से डॉक्टरों की टीम पहुँच गई।

महात्मा गाँधी जी की तरफ से उनका सचिव उनसे मिलने आया तथा बताया कि गाँधी जी शोकग्रस्त है और आपके स्वास्थ्य के लिए प्रार्थना करते हैं। कवि को ऊँचा सुनाई देने लगा था, जुबां साथ नहीं दे रही थी। विवश वह देसाई की तरफ देखते रहे और उनसे बात न हो सकी, आँखों से आँसू बहने लगे। उनकी बहू, जो इस समय वहाँ सेवा के लिए उपस्थित थी, लिखती है, "जीवन में पहली बार कवि की आँखों में आँसू देखे। उनका अपने मन पर इतना वश था कि बड़े-बड़े आघात झेलते हुए भी आँखों से आँसू बहने नहीं दिया। आज उन्हें देखकर ऐसा लगा जैसे बांध टूट चुका है, दरिया स्वेच्छा से जिधर जाना चाहेगा, उधर जायेगा।"

नवम्बर के प्रारम्भ वह पुनः स्वस्थ हो गए तथा छोटी -छोटी घटनाओं को उसी प्रकार देखने लगे जैसे हमेशा देखते आए थे। 11 नवम्बर को 'चूकती चिड़िया' नामक कविता लिखी। यह चिड़िया अपनी चोंच को खिड़की के साथ रगड़कर साफ करती, इधर-उधर तीव्रता से कूदती, अपनी भीगी पूंछ को हिला हिला कर चहचहाती तथा कवि से पूछती- मेरे लिए क्या समाचार है आपके पास?

रात्रि का पीड़ाजनक जागरण
लम्बा हो जाता है।
मैं तुम्हारी पहली चहचहाट की प्रतीक्षा करता हूँ।
तुम मेरे लिए शुभ संदेश तथा
दिन की रोशनी लेकर आओगी प्यारी चिड़िया,
अरे मेरी चूकती चिड़िया।

बिस्तर पर लेटे कवि को उनकी सेवा में लगी लड़कियाँ जब कहतीं, "शांत लेटे रहे, अधिक बातें नहीं करना, थोड़ा सा और खाना पड़ेगा," तो हँसने लगते। जो लड़कियाँ आज मुझे हिदायतें दे रही हैं कल मेरे घर के कोने में गुड़ियों से खेलती थीं।

अपने पास बच्चों के लिए मीठी गोलियाँ तथा चॉकलेट ज़रूर रखते। कोई बच्चा बिना कुछ खाए, या बिना बात किए चला जाए, कवि को पसंद नहीं था। एक आवारा कुत्ता कवि की कुर्सी के नीचे आकर बैठ गया। कोशिश की, मगर बाहर नहीं निकला। घर का सदस्य बन गया। कवि के समीप आकर खड़ा हो जाता, जब सिर

पर हाथ फिरा देते, तब कुर्सी के नीचे शांत होकर बैठ जाता। इस मस्त कुत्ते पर कविता लिख दी- 'खाली कुर्सी'।

कमज़ोरी की अवस्था में उन्हें खाने के लिए गलैक्सो की खुराक दी जाती जो बच्चों के लिए थी। जितनी खुराक दो महीने के बच्चे को देनी थी उतनी खुराक उन्हें दी जाती। दवा खाने के पश्चात् पूछते- अब मैं कितने महीने का हो गया? आने-जाने वाले से अकसर पूछते- क्या आपके घर के आंगन में महूए का वृक्ष है? यदि नहीं तो पौधा लगा लो। जब बड़ा हो गया, देखना, युवा संथाल स्त्रियाँ इसके फूल चुनकर गज़ब की शराब बनायेंगी। मेरी बेरी के जम्बू बेर खाकर देखो। मंगवाता हूँ। देखा कितना रस है? लिखा :

मैं जान गया सत्य के बारे में
सत्य कठोर है।
इस कठोरता को करता हूँ प्यार
क्योंकि यह धोखा नहीं देती।

उसकी कविताओं में गहनता बढ़ती गई परन्तु जटिलता नहीं। वेद-वाक्यों जैसी सादगी देखो-

पहले दिन के सूर्य ने पूछा-
नयी सृष्टि के आँचल में कौन है तू?
कोई उत्तर नहीं मिला।
युग बीते, अंतिम दिन अंतिम सूर्य ने शाम को पूछा-
कौन है तू?
कोई उत्तर नहीं।

7 अगस्त 1941 की दोपहर को उसी घर में कवि ने प्राण त्याग दिए, जहाँ उसका 80 वर्ष पहले जन्म हुआ था। श्रावण पूर्णिमा का दिन था। अभी कुछ दिन पहले ही इस गीत की रचना करके कहा था- इसे मेरे जाने के बाद गाना :

सामने शांतचित्त समुद्र विराजमान है।
हे नाविक, नाव चलाओ
एक तुम ही तो हो मेरे साथी।

....

पुस्तक-भण्डार के मालिक से मैंने कहा कि टैगोर रचनावली के दो सैट चाहिए जी। एक अंग्रेज़ी का दूसरा हिन्दी का। टैगोर के विषय में लिखित पुस्तकें नहीं चाहिए। टैगोर की मौलिक रचना भेज दीजिए। अंग्रेज़ी का वही सैट चाहिए जिसका अनुवाद उसने स्वयं किया है। अन्य अनुवादकों की पुस्तकें नहीं चाहिए।

एक सप्ताह के पश्चात् मेरे पास पुस्तकें पहुँच गईं, जिनमें से एक मैत्री देवी रचित- ***टैगोर बाई फायर-साईड*** भी थी। मैंने कहा- जब आपसे कहा था टैगोर के विषय में किसी अन्य द्वारा रचित पुस्तक नहीं चाहिए, फिर आपने क्यों भेज दी। उसने कहा- पढ़कर देखो। बहुत अच्छी पुस्तक है। मैंने पूछा- आपने पढ़ी है यह पुस्तक? उसने हँसते हुए कहा- पुस्तक विक्रेता तथा लाईबरेरियन, पुस्तकें नहीं पढ़ते। परन्तु उन्हें यह अवश्य पता होता है कि कौन सी पुस्तक को अधिक पढ़ा जा रहा है।

पुस्तक को पढ़ना शुरू किया। डॉ. सुरेन्द्रनाथ दास गुप्ता की पुत्री यह लेखिका अपने डॉक्टर पति के साथ हिमालय के जंगलों में बने सरकारी बंगले मुंगपुर में रहती थी। टैगोर के मित्र, दास गुप्ता शांति-निकेतन में दर्शन पढ़ाते थे। देवी तथा उसका पति अकसर कहते- गर्मियाँ हमारे शीत घर में बितायें गुरूदेव। हाँ कहते और मुस्करा देते। आयु के अंतिम चार वर्ष गर्मी के मास देवी के पास रहे। इन चारों यात्राओं के वृत्तांतों को मैत्री ने अपनी इस पुस्तक में दर्ज किया है। अन्य जीवनीकारों ने शताब्दियों पहले इस खानदान की खोज करने के पश्चात् उसका जीवन-वृत्तांत लिखा। इस लेखिका ने सामने बैठे टैगोर का नक्शा बनाया। सरसों का बीज किसने बोया, कोल्हू किसका था, मिट्टी का दीया किस कुम्हार ने बनाया आदि विवरण नहीं दिए। ज्योति सामने है, उसके बारे में लिखा।

देवी कवियत्री थी। टैगोर ने कहा- तुम्हारी कविताएँ अच्छी हैं। तुम मुझ पर कोई गीत क्यों नहीं लिखती? देवी ने कहा- आप पर लिखना कोई सरल कार्य है? लिख सकती तो अवश्य लिखती। कवि ने कहा- मुझ पर गीत लिखना कौन सा कठिन कार्य है? नाचने लगो और गाते रहो, हे रवीन्द्र... हे कविन्द्र ...(हे सूर्यो के सूर्य, हे कवियों के कवि...) बस गीत बन गया, मेरे विषय में लिखना कोई मुश्किल नहीं। तुम्हारा मन ही नहीं करता।

देवी की पुत्री खेलते खेलते भागकर आती तथा कवि की गोद में बैठ कर कहती- गीत सुनाओ बाबा। पहले लिखे हुए बाल-गीत गाकर सुनाते।

कभी-कभी इस लड़की को कवि कह देता- आज कोई गीत नहीं है मेरे पास। वह कहती- ठीक है। फिर टॉफ़ी दो। टैगोर हँस कर देवी से कहता- मेरे श्रोते ऐसे होने चाहिए जिनके लिए गीत और टॉफ़ी एक ही बात है। गीत नहीं है तो टॉफ़ी, टॉफ़ी नहीं है तो गीत।

देवी से कहा- पैन दो। कुछ लिखें। मँहगा पैन लाकर दिया। काग़ज़ों पर कुछ लिखने लगे, पैन ठीक तरह से नहीं चला। परन्तु कवि किसी तरह से लिखता रहा। देवी ने पैन को ठीक ढंग से पकड़ाते हुए कहा- टेढ़ा पकड़ रखा है गुरूदेव।

इसे ऐसे चलाओ। हँसने लगे- 75 वर्ष हो गए लिखते हुए। अभी तक पैन पकड़ना नहीं आया मुझे, अब क्या सुधारोगी। अब कहाँ कुछ सीखने योग्य रहा?

कहाँ मैं, कहाँ टैगोर, उसके विषय में कैसे पुस्तक लिखूंगी, यह सोचते हुए मैत्री देवी ने इस पुस्तक के पहले पृष्ठ पर टैगोर की ही कविता की ये पंक्तियाँ लिखीं-

लघु ओस की बूंद ने सूर्य से कहा-
तुम्हें गोद में केवल आसमान ले सकता है हे सूर्य,
मैं तुम्हारा स्वप्न ले सकती हूँ केवल।
अश्रु है मेरा लघु जीवन, तुम्हारे बिना।
सूर्य ने कहा- मैं रोशनी का दरिया हूँ,
तो भी यदि चाहो लघु बूंद,
प्यार की जंजीर से बांध सकती हो तुम मुझे।

बातें करते हुए कवि देखता, मैत्री कुछ लिख रही है। पूछा तो उसने कहा- आपकी जीवनी लिखूंगी, आपकी बातें नोट करती रहती हूँ। कवि ने कहा- यादों के ताजमहल, कुतुब मीनार बनाने का कोई लाभ नहीं लड़की। मृत्यु की वेदी पर निरन्तर बलिदान का नाम जीवन है।

कवि ने बताया- गीतांजलि तथा बाल-गीतों का अंग्रेज़ी अनुवाद कर मैं उन्हें लंदन ले गया। कवियों, दार्शनिकों, लेखकों को निमंत्रण भेजा तथा कविताएँ पढ़ी। सभी सुनकर चुपचाप वापिस चले गए। किसी ने कोई टिप्पणी नहीं दी। मैं बहुत बेचैन हुआ। अंग्रेज़ी आती नहीं, फिर मैंने यह पंगा क्यों लिया। बंगला में इतना सम्मान मिला, क्या वो बहुत नहीं था? स्वयं ही अपना निरादर करवाया। दो तीन दिन तथा रातें इसी व्याकुलता में व्यतीत हुईं। फिर अचानक फोन आने लगे। पत्र मिलने लगे। लेखक मिलने के लिए आने लगे, कहा- "उस दिन हमें ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे कोई महान् आत्मा आकाश से उतर कर हमारे मध्य आकर बैठ गई हो। हमें विश्वास ही नहीं हो रहा था।" मुझे बाद में पता चला झटपट निन्दा करना या प्रशंसा करना, अंग्रेजों का स्वभाव नहीं है। अपने अपने निवास स्थान पर पहुँच सभी एक दूसरे को बताते और पूछते रहते कि क्या मुझे ही यह एक चमत्कार प्रतीत हुआ या आप को भी इसने प्रभावित किया है? निर्णय लिया गया कि कवि की कविताएँ नोबेल सविस्स अकादमी में विचार विमर्श हेतु भेजी जायें।

टैगोर ने देवी से पूछा- तुम्हें मुक्त छन्द कविताएँ कैसी लगती हैं मैत्री? उसने कहा- बकवास। जिस कविता को गाया न जा सके, वह कोई कविता थोड़े होती है? सभी के सामने कवि ने अपनी मुक्त छन्द कविताएँ सुनाईं, अन्य श्रोताओं के साथ-साथ देवी ने भी बहुत श्लाघा की। टैगोर ने हँसते हुए कहा- तुम हार गई

मैत्री? तुम तो छन्द मुक्त कविता के विरुद्ध थी? देवी ने कहा- जब मेरी इच्छा छन्द मुक्त कविता सुनने की होगी तो मैं टैगोर के होंठ कहाँ से लेकर आऊँगी? यह मुक्त छन्द कविता नहीं गुरूदेव, विश्वात्मा की आवाज़ है। कवि हँसने लगे- तुम विजयी रहना चाहती हो तो यही सही।

देवी ने टैगोर के नौकर से पूछा- तुमने विवाह क्यों नहीं करवाया बणमाली? क्या कोई लड़की पसंद नहीं आई? बणमाली ने कहा- आई थी एक लड़की पसंद। यहीं समीप ही रहती थी। उसकी और मेरी झोपड़ी के बीच में एक गाँव आता था केवल।

टैगोर ने हँसते हुए कहा- देखा मैत्री? कोई कवि ही कर सकता है इस प्रकार की बात जैसी बणमाली ने कही है। एक गाँव आ गया दोनों के मध्य। यदि बणमाली कवि न होता तो इतने लम्बे समय तक मेरे पास नौकरी कैसे करता? मेरी कुर्सी वहाँ रखो मैत्री। सुबह उठकर वहाँ बैठा करूँगा। उदित होते सूर्य की रोशनी इस वृक्ष में से होते हुए जब मेरे पास आएगी तो मैं हज़ार नदियों में तीर्थ स्नान करूँगा।

प्रकृति के प्रकोप को देखते हए वह कहता- इसे धर्म ग्रन्थों की परवाह नहीं, कोई भय, त्रास नहीं, मालिक की पाबन्दियों को भंग करती जाती है बगावत करके। प्रकृति साधुओं की तपस्या का सत्कार नहीं करती। उसकी पायल में संगीत नहीं, ताकतवर भयंकर शोर है। कोमल नवयुवती अपने आँचल से दीये को बुझने से बचाती हुई जैसे धीरे-धीरे चलती जाती है, उस जैसी नहीं है प्रकृति। तूफ़ान इसके दुपट्टे को उड़ाकर ले गए हैं। भाग रही है नंगे सिर, बिखरे केश।

कोहरे का परदा उठायेगा मुंगपुर,
आएगा नाचेगा गायेगा रंगपुर।

(मुंगपुर से जब कोहरा मिटेगा तो नाचता गाता रंग-बिरंगा देश प्रकट होगा।)

फिर कवि ने कहा- जितना भी जीवन से मिला, मृत्यु उसमें से थोड़ा ही छीन पायेगी। ठीक है, रवी ठाकुर का तमाशा बंद हो जायेगा तो भी मुंगपुर की नीली वादियों में सम्पूर्ण वातावरण प्रसरित होगा। इसकी उपमा में मैंने समस्त आयु गीत गाये। तुम्हारी आँखों के सामने न सही, आँखों के पीछे तो रहूँगा ही। गीत लिखा- जीवन की प्रतिमा टूट जाएगी अंततः। रोशनी तथा साये की याद शेष रहेगी एक दिन। जैसे कोई दानी, मेले में मिठाई बांटता घूम रहा हो, ऐसे मैं अपने गीत संसार में बांटता हुआ घूमा। हाथ में कोड़ियाँ पकड़ कर खड़ा हूँ बच्चे के समान। रथ पर सवार मालिक मुझे लेने आएगा। तुम्हें पीछे बची हुई धूल दिखाई देगी केवल। मेरा

शरीर अब डगमगा रहा है। सुनना बंद हो गया है। जिसने कान दिए कुदरत वह वापिस ले गयी है, फिर किस बात का शिकवा? यदि आँखे रहने दे तो अच्छी बात है। उसकी सुन्दरता को मैंने जैसे देखा, लिखा, उस प्रकार कौन देखेगा मेरे बाद? कुदरत अपनी ही जेब क्यों कुतर रही है मैत्री?

यहाँ रहते हुए एक बार कवि बेहोश हो गया। तीन दिन तक होश नहीं आया। एम्बुलैंस में कलकत्ता जा रहे थे तब रास्तें में होश आ गया, कहने लगे- यह क्या हो रहा है? बंद पिंजरे में मुझे कहाँ लेकर जा रहे हो? मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा। जोती बाबू ने कहा- हमें भी यहाँ टैगोर के बिना कुछ दिखाई नहीं देता। मुस्कराते हुए कहा- आपको कुछ तो दिखाई देता है। मुझे तो कुछ भी दिखाई नहीं देता।

कलकत्ता के बिल्कुल मध्य में जोड़ासांको विशाल पारम्परिक हवेली थी। यह हवेली विश्व भारती को दान में दे दी। पिता जी ने छह एकड़ ज़मीन शहर के किनारे ख़रीदी। इच्छा थी कि बड़े परिवार के सदस्य, दामाद सभी यहीं बंगलें बनाकर रहेंगे। यह शांति-निकेतन को दान में दे दी। टालस्टाय ने अपनी सम्पत्ति का कुछ भाग सामाजिक संस्थाओं को दान में देना चाहा तो परिवार में इस बात को लेकर बहुत विवाद हुआ। टैगोर-परिवार के किसी सदस्य ने कोई आपत्ति व्यक्त नहीं की, इस परिवार का स्वभाव अजीब था।

अपने मेज़बानों को कवि बताता है- पिता जी ने एक बार मुझसे कहा- जाओ जाकर अपने फार्म की निगरानी करो। पुस्तकें वहीं ले जाओ। फ़सल पकने पर आ जाना। वहाँ खेतों में बैठकर लिखता और पढ़ता रहता। एक दिन वापिस कलकत्ता आने का फैसला किया तो तांगा आ गया। सामान रख दिया, जाने से पहले एक एक करके मज़दूर नमस्कार करने आ गए। एक मज़दूर यह कहकर- थोड़ा रूकना साहिब मैं अभी आया, भाग गया। अपनी झोपड़ी में से कुछ लेकर आया। मेरे पैरों में एक चांदी का सिक्का रखकर माथा टेका। मैंने कहा- यह नहीं हो सकता। नमस्कार ठीक है। रूपया उठा लो। मज़दूर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, कहने लगा- आपने यदि हमसे रूपये लेने बंद कर दिए तो मालिक आप खाओगे क्या? अनेक ग्रन्थ मुझे इस ढंग से बात नहीं समझा सके जिस ढंग से मज़दूर ने समझाई।

कवि ने कहा- मैत्री, याद है मेरा गीत? मैंने लिखा था- जीवन, यज्ञ की अग्नि में फेंकी आहूति के समान है। अन्य कुछ शेष नहीं रहता, राख की मुट्ठी के बिना। कोई कोई राख की मुट्ठी भी बातें करती रहती है लोगों के साथ। हो जाती है यह करामात भी।

"मैत्री, जब जलियाँवाले बाग का दिल दहलाने वाला समाचार सुना, तब सारी रात मैं सो नहीं सका। धिक्कार है ऐसे जीवन को। मैंने दिन चढ़ने से पहले

ही अपनी 'सर' की उपाधि वापिस करने का निर्णय कर पत्र टाईप कर लिया। लिफ़ाफे में बंद कर डाक में डाल दिया तथा उसकी प्रतिलिपि को समाचार पत्रों में भेज दिया, सारी दुनिया ने इस समाचार का नोटिस लिया था। उपाधि वापिस करने की बात मैंने किसी को नहीं बताई थी। मुझे पता था यदि मैं बता देता, मुझे पत्र लिखने से रोक देना था। तत्पश्चात् जब मैं इंग्लैंड गया, अंग्रेजों ने मुझसे बात तक नहीं की। मैंने पूछा- यह तो मेरा बहुत सम्मान करते थे, अब बात भी नहीं करते। क्यों? मुझे बताया गया कि अंग्रेज़ अपनी बादशाहत का अत्यधिक सम्मान करते हैं, इस दृष्टि से वह बहुत भावुक हैं। आपने उपाधि वापिस कर दी तो इन्हें ऐसा लगा जैसे आपने इनके ताज़ को ठोकर मारी है। यह सुनकर मैं बहुत खुश हुआ। मैं यही चाहता था। अंग्रेजों से तो मैं नफ़रत करता ही नहीं। मैं ताज का अपमान करने का इच्छुक था, वह हो गया, ठीक हुआ। मज़ा आ गया।

"इतिहासकार बहुत गड़बड़ कर रहे थे। मेरा इतिहास लिखने में व्यस्त थे। मेरी पहली कविताएँ ढूंढ लेते थे। अनेक बहुत कच्ची थीं। जब मुझे दिखाते, तो मैं कह देता यह मेरी कविताएँ हैं ही नहीं। मैं इतना घटिया नहीं लिखता। यह आपकी होंगी। मुझे बताओ, यदि फूल के विषय में जानना चाहते हो तो क्या पौधे को जड़ से उखाड़ कर अध्ययन शुरू करेंगे?"

कहने लगे- ईश्वर को प्रारम्भ से ही सबकुछ आता था, यह गलत है। एक धमाका करके उसने रचना तो कर दी परन्तु उसे यह पसंद नहीं आई। केवल पर्वत और समुद्र, यह क्या रचना हुई? फिर उसने लाखों वर्ष के परिश्रम के पश्चात् जीव-जन्तु बनाये। उन्हें भी वह तराशता रहा, जैसे रबड़ के साथ पहली रेखा को मिटाकर दूसरी रेखा बनाते हैं। इंसान भी पहले अतराशा हुआ था बेढंगा, धीरे-धीरे इंसान के चित्र को पूरा कर दिया ईश्वर ने। आपको नहीं पता मैत्री। हज़ारों वर्ष लम्बा ईश्वर का स्वप्न तब पूरा हुआ था जब धरती पर पहला पुष्प खिला।

मैत्री देवी लिखती है- उसकी कुर्सी के पीछे बैठी मैं छोटे-छोटे काम करती रहती। कभी कभी कोई कविता, कोई गीत, गैर-रस्मी ढंग से मेरी झोली में फेंक देते। मैं ईश्वर का धन्यवाद करती इस दिव्य मानव का ध्यान मेरी तरफ भी हो जाता है। यह सब मुझे एक चमत्कार प्रतीत होता।

कवि ने कहा- महाभारत का कोई मुकाबला नहीं। पश्चिम के महाकाव्य के नायकों के समान, विजयी होकर पाण्डव खुशी से नाचते गाते नहीं। हज़ारों जलते शवों को छोड़कर वह हिमालय में आत्मघात करने के लिए चले जाते हैं। इच्छाओं की आग प्रज्वलित होगी तो युद्ध होगा, धरती रक्त से लाल हो जाएगी। इस पाप को धोने के लिए बलिदान देना होगा। इस स्रंगाम में से सौ गज़ लम्बी गीता का जन्म तो होना ही होना था।

मैत्री ने पूछा- संगीत सुनने से मन में दर्द क्यों उत्पन्न होता है? कवि ने हँसते हुए कहा- तुमने गलत व्यक्ति से प्रश्न पूछा है। जब संगीत नहीं भी होता मेरी आँखें तो तब भी डुबडुबाई रहती हैं। मैं तुम्हें क्या उत्तर दे सकता हूँ?

मैत्री ने लिखा- क्या मैं उसे भूल सकूंगी? वह चला गया। मैं आँखों द्वारा उसे देखती हूँ। मुझे यह बताने की आवश्यकता नहीं कि मेरे पास आँखे हैं... मेरे पास आँखे हें, परन्तु अनेक बार आस-पास फूलों की क्यारियों को बिना देखे निकल जाती हूँ। अनेक बार आँखों के सामने होते हुए भी तारों की ओर नहीं देखती। तारे और फूल जहाँ हैं वहीं हैं।

... .

टैगोर रचनावली में से पाठकों के लिए ***बालक*** में से कुछ प्रस्तुत कर रहे हैं। यह रचना आयु के अंत में लिखी जिसका बंगला में नाम रखा गया ***शिशु*** तथा अंग्रेज़ी मे The Crescent Moon। छोटे-छोटे बालगीत केवल बच्चों में ही नहीं, सभी आयु के लोगों ने पसंद किए।

घर

जब कंजूस बनिए के समान सूर्य अपना सोना छिपाने में लगा हुआ था,
शाम को मैं खेत में से गुज़रा।
प्रकाश धीरे-धीरे अंधेरे आँचल में गहरा उतरता गया
काटी फ़सल के नीचे की विधवा धरती खामोश रही।
अचानक एक प्रसन्न बच्चे की किलकारी आकाश की ओर जाती हुई गूंजी।
अनंत अंधेरें में, उदास शाम के समय यह रोशनी की लकीर थी एक।

सागर किनारे

अनन्त संसारों के बच्चे समुद्र किनारे मिलते हैं। ऊपर शांत निम्रल आकाश, नीचे बेचैन ताकतवर गर्जता हुआ सागर। अनन्त संसारों के बच्चे सागर किनारे मिलकर नाचते हैं, किलकारियाँ मारते हैं।
रेत के घरों का निर्माण कर सीपियों से खेलते हैं।
बिखरे पत्ते एकत्रित कर नावें बनाकर समुद्र में छोडते़।
सागर किनारे खेलने के लिए बच्चों की अपनी खेलें हैं।
उन्हें तैरना नहीं आता। जाल फेंकने नहीं आते। मोतियों की तलाश में गोताखोर गहराई तक जाते हैं। सौदागर जहाज़ों को ठेल देते हैं परन्तु बच्चे कंकड़ एकत्रित करते रहते हैं तथा एकत्रित कंकड़ों को फिर से रेत में फेंक देते हैं। उन्हें खज़ानों की तलाश नहीं। उन्हें जाल फेंकना नहीं आता।

हँसते हँसते सागर ऊपर उठता है। उसकी हँसी किनारों को छूती है। माँ जैसे बच्चे के झूले के नज़दीक लोरियाँ गाती है, खूनी लहरें बच्चों को निरर्थक गीत सुनाती हैं।
अनन्त संसारों के बच्चे सागर किनारे मिलते है। तूफ़ान अलगाम है, जहाज़ डूब रहे हैं। मौत झूम रही है तथा बच्चे खेलते हें। अनन्त संसार सागरों के किनारे बच्चों की बहुत बड़ी सभा बनी हुई है।

बच्चे का मार्ग

यदि चाहे तो आँख झपकते ही बच्चा उड़कर आकाश तक पहुँच सकता है। कोई बात है जिस कारण हमसे दूर नहीं जाता। माँ की छाती पर सिर रखकर सोना उसे अच्छा लगता है, माँ आँखों से ओझल हो, ये वो सहन नहीं करता।
बच्चे को सबसे सुन्दर तथा समझवाले शब्दों का पता है परन्तु कम हैं इस धरती पर जो उसकी वाणी के अर्थों को जानते हैं। कोई बात है जिस कारण वह कम बोलता है।
माँ की भाषा वह माँ के होठों से सीखना चाहता है। इसी कारण वह इतना मासूम है। बच्चे के पास सोने तथा मोतियों के भण्डार हैं परन्तु धरती पर वह भिखारी के समान नंगा आया है।
कोई बात तो है जिस कारण उसने वेश बदला। छोटा, नंगा यह योगी पूर्णतः विवश होने का दिखावा करता है ताकि माँ के प्यार की दौलत को हासिल कर सके।
चाँद के देश में बच्चा प्रत्येक बन्धन से मुक्त था परन्तु कोई बात है जिसके कारण उसने स्वतन्त्रता छोड़ दी।
उसे पता है माँ के दिल में उसके लिए अनन्त खुशियाँ है, आज़ादी से तो अच्छा है माँ भागकर उसे पकड़ ले तथा अपनी भुजाओं में ले ले।
बच्चे को नहीं पता रोना क्या होता है। वह अनन्त खुशियों की वादियों में रहता है। कोई बात है फिर भी जिस कारण वह आँसू बहाता है। उसके प्यारे होठों की मुस्कान की ओर माँ खींची आती है तो भी बिना बात के जब वह रोता है तब वह चाहता है कि माँ का स्नेह तथा सहानुभूति का ताना उसके आस-पास लिपटा रहे।
हे भिखारी! माँ की गर्दन के आस-पास भुजाओं डाले, तू दोनों हाथों से क्या मांग रहा है?

अरे लोभी मन! आकाश में से संसार नामक फल तोड़कर तुम्हारी छोटी सी हथेली पर रख दूँ?

आरम्भ

मैं कहाँ से आया? माँ तुमने मुझे कहाँ से उठाया था?
हँसती, छाती से लगाकर वह कहती-
इच्छाओं के समान तुम मन में दबे हुए थे मेरे बेटे।
जब मैं बालिका थी, तुम मेरी गुड़ियों पटोलों मे होता था।
जब मिट्टी का देवता बनाती, उस समय बार-बार मैं तुम्हारे नक्श ही बनाती थी।
जब घर में देवता की पूजा होती, उस समय तू ही मेरा देवता होता।
मेरे प्यारे, मेरी आशाओं तथा तुम्हारी नानी की आशाओं में तुम ही तो होते थे।
जो अमर रूह हमारे घरों पर शासन करती है, युगों तक पालती रही तुझे।
जवानी में जब मेरे मन की पंखुड़ियाँ खुलने लगीं, सुगन्ध बनकर तुम इसके इर्द-गिर्द चक्कर काटता होता था।
मैं जवान हुई, तुम्हारी कोमलता मेरे अंगों में ऐसे मचली जैसे प्रातःकाल से पहले पूर्व में सूर्य मचलता है।
तुम तथा सूर्य दोनों जुड़वा भाई हो मेरे बेटे, तुम दोनों का एक साथ जन्म हुआ।
मैं तेरा मुख देखकर मैं आनंदित हो जाती हूँ, तू जो सारे संसार का खज़ाना था, मुझे अकेली को कैसे मिल गया?
कहीं गुम न हो जाओ, इसलिए छाती से लगाकर रखती हूँ।
किस प्रकार का जादू था यह जिसने संसार के खज़ाने को रस्सी में लपेट कर मेरी कोमल भुजाओं में रख दिया?
मेरी इच्छा है कि मैं उन रास्तों पर चलूं जो मेरे बेटे के मन में से गुज़रते हैं।
इतिहास में जो राजे कभी नहीं हुए,
उनकी राजधानियों में से राजदूत भागे आ रहे हैं, जा रहे है, तुम्हारे संदेश लेकर आने, लेकर जाने के लिए।
तर्क अपने ढंग से अपने रंगों की पतंगें उड़ाते हैं,
जहाँ पिंजरे में बंद तर्कों को सच आज़ाद कर देता है,
तुम वहाँ से आए हो मेरे बेटे।

बदनामी

तुम्हारी आँखों में आँसू क्यों हैं मेरे बेटे?
बिना बात तुम्हें किसने झिड़का?
तुम्हारा मुख और हाथों पर स्याही लग गई तो उन्होंने तुम्हें गंदा कहा?
चाँद ने अपने सारे मुख पर स्याही लगा रखी है?
फिर वो अच्छा नहीं लगता?
बिना कारण से झिड़कते हैं मेरे बेटे को मूर्ख।
खेलते हुए यदि कमीज़ फट गई, तो क्या हुआ?
तब वह उस पतझड़ की ऋतु को क्या कहेंगे जो चीथडों में से हँसती है।
तुम्हें क्या क्या कहते हैं लोग, ध्यान मत दो उनकी तरफ।
सभी को पता है तुम्हें मीठे पदार्थ पसंद है, क्या इसलिए तुम्हें लोभी कहते हैं वह?
फिर हमें क्या कहेंगे वो? हम कौन से अपने मीठे बेटे को प्रेम करने से रूकते हैं।

खेलें

रेत में बैठा, टूटी शाखाओं से खेलता
इस प्रभात तू कितना खुश है।
मैं अपने लेखे-जोखों में उलझी हुई हूँ।
कभी-कभी तू मेरी तरफ देखता है तो मैं समझ जाती हूँ
कि मेरा लेखा तुम्हें निरर्थक लगता है।
शाखाओं तथा ठीकरियों से खेलना मैं भूल गई मेरे बेटे।
मुझे मँहगी खेलें, सोने चांदी के खिलौने अच्छे लगते हैं।
तुम्हें जो मिल जाए, उससे खेलना।
मैंने सारा समय, समस्त ताकत उन पर लगाई जो पहुँच से बाहर थे।
अनन्त सागर में मेरी कमज़ोर किश्ती डगमगा रही है
मैं भूल गई कि मैं भी खेलती थी कभी।

दादा

मैंने कहा- शाम को चाँद जब कदम्ब के वृक्ष की शाखाओं में आकर उलझ जाता है, कोई पकड़ नहीं सकता इसे दादा?
दादा हँसा, कहा- तुम मूर्ख हो! इतनी दूर चाँद को कौन पकड़ेगा?

मैंने कहा- हमें खेलते हुए को चौबारे की खिड़की में से जब माँ देख कर मुस्कराती है, उसे आप दूर कहोगे दादा?
दादा बोले- तुम मूर्ख ही रहोगे। चाँद को पकड़ने के लिए इतना बड़ा जाल कौन बुनेगा?
मैंने कहा- जाल की क्या आवश्यकता? हाथों में पकड़ लेंगे।
दादा हँसे- तुम मूर्ख हो। जब चाँद समीप आएगा तब तुम्हें पता लगेगा वह कितना बड़ा है।
मैंने कहा- आपको क्या पढ़ा दिया मास्टरों ने दादा? नीचे झुक कर जब माँ चुम्बन लेती है, तब कहीं उसका मुख बड़ा हो जाता है?
दादा फिर हँसा- तुम मूर्ख के मूर्ख ही रहोगे बच्चे।

बादल तथा लहरें

बादलों ने मुझसे कहा माँ- हम दिन-रात खेलते रहते हैं।
दिन को सूर्य के साथ रात को चन्द्रमा के साथ।
मैंने पूछा- मैं आपके साथ खेलने कैसे आऊँ?
वह बोले- धरती के समीप खड़ा हो, आकाश की तरफ हाथ फैलाओ,
हम तुम्हें उठाकर उड़ जायेंगे।
मैंने कहा- परन्तु माँ घर पर प्रतीक्षा कर रही है। मैं उसे छोड़कर कैसे आऊँ?
वह हँसते हुए उड़ जाते हैं।
परन्तु मेरे पास इससे अच्छी खेल है माँ।
तुम चाँद हो, मैं बादल।
मैं तुम्हारा मुख अपने हाथों से ढक दूंगा,
हमारी छत्त हमारा आकाश है।
समुद्र की लहरों ने मुझसे कहा- दिन-रात हम चलती रहती हैं,
अनजान रास्तों को पार करती हुईं, गीत गाती हुई।
मैंने पूछा- मैं आपके साथ कैसे चलूँ?
उन्होंने कहा- धरती के किनारे आकर खड़े हो जाओ, आँखें बंद कर लो,
हम अपने साथ तुझे बहा कर ले जायेंगी।
मैंने कहा- परन्तु माँ की इच्छा है मैं शाम तक घर पहुँच जाऊँ।
मैं उसे छोड़कर कैसे जाऊँ?
वह हँसती हुई, नाचती हुई चली जाती हैं।
परन्तु मुझे इससे अच्छा खेल खेलना आता है।

मैं लहर बन जाऊँगा, तुम किनारा माँ।
तुम्हारी गोद में मैं बह जाऊँगा।
दुनिया को पता ही नहीं चलेगा हम दोनों कहाँ हैं।

चमेली

मान लो मैं चमेली का पुष्प होता, उस शाखा पर लगा हुआ,
हवा चलती तो मैं झूमता हुआ बहुत हँसता।
क्या तुम मुझे पहचान लेती माँ?
तुम आवाज़ देती- कहाँ हो मेरे बेटे? मैं मन के भीतर हँसता,
बाहर से खामोश रहता, पंखुड़ियाँ खोल खोल कर तुम्हें देखता।
स्नान कर भीगे केशों से जब तुम चमेली के पौधे के समीप प्रार्थना करने आती तो मेरी सुगन्ध तो तुम तक पहुँचती परन्तु तुम जान न पाती मैं कहाँ हूँ।
दिन बीतने पर जब तुम खिड़की में बैठकर रामायण का पाठ करती, चमेली की छाया तुम्हारी गोद में बैठती तो मेरी छोटी सी छाया रामायण की उस पंक्ति पर पड़ती जिसे तुम पढ़ रही होती। क्या तुम्हें पता चलता कि यह मेरे बेटे की छाया है?
शाम को जब तुम लालटेन लेकर अस्तबल की ओर जाती तो चमेली की शाखा से टूटकर मैं धरती पर आ जाता और तेरी कलाई पकड़कर कहता- माँ कहानी सुनाओ।
तुम कहती- अरे नटखट बच्चे, कहाँ रहे तुम सारा दिन?
मैं कहता- मैंने नहीं तुम्हें बताना माँ, बिल्कुल नहीं।
हम दोनों ने फिर यही बात करनी थी।

बरसाती दिन

जंगल के ऊपर काले बादल घिर आए हैं।
बाहर न जाना मेरे लाल।
वृक्ष आकाश के साथ टकरा रहे हैं।
खामोश कौवे शाखाओं से लिपटे झूल रहे हैं।
दरिया टूटने को है।
खूंटे से बांधी हुई गाय रांभ रही है।
रूक मेरे लाल, गाय को भीतर की खूंटी से बांध दूं।

तालाब उछल गए तो खेतों में आ गई मछलियों को लोग पकड़ रहे हैं। गलियों में से पानी इस वेग से बह रहा है जैसे चिढ़ाने के लिए माँ की पकड़ में से छूट कर बच्चा हँसता हँसता भाग जाता है।
सुनो, घाट पर कोई नाविक को आवाज़ दे रहा है।
दिन छिप गया है मेरे बेटे, नाव बांधकर नाविक चला गया है।
बाहर न जाना मेरे लाल। सड़क पर कोई नहीं, रास्ते में फिसलन है। बांसों से टकराती हुई हवा ऐसे गूंज रही है जैसे जंगली जानवर जाल में फंस गया हो। घर से मत बाहर जाना मेरे लाल।

कागज़ की किश्तियाँ

हर रोज़ बहती नदी में कागज़ की नावें बहाता। ऊपर अपना नाम और अपने गाँव का नाम लिखता। मुझे पता है, जब किसी अनजान देश में मेरी नाव पहुँचेगी, कोई न कोई मुझे जान जायेगा मैं कौन हूँ। बगीचे में से तोड़कर कली रख देता हूँ, जब नाव दूसरे देश में पहुँचेगी, फूल खिल गया होगा।
इधर मैंने नाव छोड़ी, उधर आकाश में छाए बादल भी उधर जा रहे हैं, जिधर नाव जा रही है। मैं आकाश में बैठे अपने मित्र को जानता हूँ जो मेरी नावों के बराबर बादलों को दौड़ाता है। रात को जब मैं सो जाता हूँ, तारों के नीचे मुझे मेरी नावें दिखाई देती रहती हैं, नींद की परियाँ मेरी नावों में सोते हुए सफ़र कर रही हैं, उनकी टोकरियाँ स्वप्नों से भरी हुई हैं।

मल्लाह

मधु मल्लाह ने राजगंज घाट पर अपनी किश्ती बांध रखी है।
मोटी रस्सी से बंधी हुई यह किश्ती मुद्दतों से ऐसे ही निरर्थक बंधी है। यदि वह मुझे यह किश्ती दे दे, मैं इसे सौ पतवारों से चलाऊँ, पाँच, छह या सात बादबान बांध दूँ। बेकार बाज़ारों की ओर बिल्कुल न लेकर जाऊँ।परियों के सात समुद्र तथा तेरह दरियाओं को पार करूँ।
मुझे याद कर, कोने में बैठकर मत रोना माँ।
रामचन्द्र के समान मैं कोई चौदह वर्ष का वनवास काटने के लिए थोड़ा जा रहा हूँ। मैं तो कहानी का राजकुमार हूँ। जो चाहा किश्ती में भरता जाऊँगा। अपने मित्र अशू को भी लेकर जाऊँगा। मस्ती से हम सात समुद्र और तेरह दरिया पार करेंगे। सुबह थोड़ा जल्दी किश्ती ठेलेंगे।

जब दोपहर के समय तुम झील के समीप स्नान कर रही होगी, उस समय तो हम अनजान राजा के देश में पहुँच जायेंगे। त्रिपुरी का घाट पार करके तेपंत्र देश पार कर जायेंगे।
वापसी के समय अंधेरा हो सकता है, मैं तुम्हें सफ़र की सभी बातें सुनाऊँगा माँ। सात समुद्र और तेरह दरियाओं की बातें।

फूलों का स्कूल

जब आँधियाँ आकाश को छूएं तथा जून मास में बादल छिड़काव कर जायें पूर्व की ओर से भीगी हवा बांसों के जंगल में से बांसुरी बजाती हुई आती है। अचानक फूलों की भीड़ एकत्रित हो जाती है, पता नहीं कहाँ से आते हैं, आते ही नाचने लगते हैं। माँ मुझे प्रतीत होता है धरती के नीचे फूलों का स्कूल है। दरवाज़े बंद कर वह अपने पाठ याद करते रहते हैं तथा यदि कोई फूल छुट्टी से पहले भाग जाये, मास्टर उसे कोने में खड़ा होने की सज़ा देता है।
वर्षा के दिनों में फूलों को छुट्टियाँ होती हैं।
जंगली शाखायें आपस में टकराती हैं, पत्ते झूमते हैं, बादल तालियाँ बजाते हैं, गुलाबी, पीली, सफेद वर्दी पहने फूल-बच्चे भागे आते हैं।
तुम्हें पता है माँ, उनका घर आकाश में वहाँ हैं जहाँ नक्षत्र हैं, तुमने देखा नहीं अपने घर जाने के लिए वह कितने उतावले हैं? तुम्हें नहीं पता इतना उतावलापन क्यों है उनमें?
अपनी भुजाएँ वह ऊपर आकाश की ओर वह क्यों फैलाते हैं, पता है तुम्हें? जैसे मेरी माँ है, उनकी भी तो माँ है एक।

सौदागर

यह सोचो माँ कि तुम्हें घर पर रूकना पड़े और मुझे अजबनी देशों में सफ़र करना पड़े।
सोचो कि सामान से भरी मेरी किश्ती किनारे से चलने वाली है।
सोच कर बताओ, माँ मैं तुम्हारे लिए क्या लेकर आऊँगा।
तुम्हें सोने के ढेर चाहिएं न माँ?
सुनहरी नदियों के किनारे, सोने से खेत भरे हुए हैं सारे। जंगली डंडियों पर फूल खिले हुए हैं
अनेक सौ टोकरियाँ फूलों की भरकर मैं किश्ती में रख लूंगा।
माँ तुम्हें बड़े-बड़े मोती भी चाहिएं?

पतझड़ ऋतु की कणिकाओं जितने मोटे?
मैं मोतियों के टापू पर उतरूँगा। सुबह चरगाहों में वहाँ फूलों के ऊपर मोती नाचते हैं, फिर मोती घास के ऊपर गिर जाते हैं, समुद्र के किनारे रेत के ऊपर तो असंख्य मोती गिरे हुए हैं।
अपने भाई के लिए लेकर आऊँगा पंखों वाला घोड़ा जिस पर बैठकर वह बादलों के ऊपर से उड़ेगा। पिता जी के लिए लेकर आऊँगा जादू का पैन, पिता जी को पता भी नहीं चलेगा, पैन अपने आप ही लिखता रहेगा वह सब कुछ जो पिता जी ने लिखना था।
तुम्हारे लिए लेकर आऊँगा जवाहरातों से भरा संदूक, कीमती इतना कि सात राजाओं की राजधानियों के बराबर।

दया

तुम्हारा पुत्र होने की बजाय अगर मैं छोटा कतूरा होता और थाली में बची हुई तुम्हारी जूठी रोटी खाने लगता, क्या तुम तब झिड़क देती मुझे? "दफा हो जाओ कतूरे," यह कहकर क्या भगा देती मुझे?
तो फिर जाओ माँ, मैं भी जब तुम बुलाओगी, नहीं आऊँगा। मुझे कुछ खाने को दोगी, नहीं खाऊँगा।
तुम्हारा बच्चा न होकर मैं छोटा सा तोता होता, तब माँ तुम मुझे बंद करके रखती कि कहीं मैं उड़ न जाऊँ दूर?
अपनी अंगुलि मेरी तरफ करके तुम क्या यह कहती, "कैसा कृतघ्न हठी तोता है, सारा दिन चोच से पिंजरे की सलाखें काटने का यत्न करता रहता है।"
ठीक है फिर माँ। मैं जंगल में उड़ जाऊँगा। तेरी बांहों में दोबारा आऊँगा ही नहीं।

बड़ा छोटा

माँ तेरी छोटी बेटी बिल्कुल मूर्ख है। उसे नहीं पता कि गलियों की रोशनी तारों की रोशनी जैसी नहीं होती। जब हम यह खेल खेलते है जब कंकड़ हमारी रेवड़ियाँ होते हैं, वह इन्हें असली रेवड़ियाँ समझकर खाने लगती है। जब पुस्तक खोलकर मैं उसे अ, आ पढ़ाने लगता हूँ, बिना बात के झपट कर वह पृष्ठ फाड़ देती है फिर हँसती है। पाठ याद करने का यही ढंग है उसका।

जब मैं गुस्से से सिर हिलाता हूँ, उसे झिड़कता हूँ, उसे कहता हूँ कि शरारत बंद करो, वह हँसती है तथा यह उसके लिए एक खेल है केवल। सभी को पता है पिता जी दूर हैं, परन्तु जब मैं अचानक ऊँची आवाज़ में कहता हूँ "पिता जी।" वह इधर-उधर देखने लगती है जैसे पिता जी यहीं हैं। धोबी कपड़े लेने आता है तो अपने साथ दो बंदर लेकर आता है। मैं बंदरों की कक्षा लेता हूँ। मैं इसे बार-बार बताता हूँ कि मैं स्कूल का मास्टर हूँ, परन्तु यह मूर्खों के समान मुझे कहती है - भाई।
तुम्हारी बेटी चांद पकड़ना चाहती है। गणेश गणेशू वह कहती है। ऐसी मूर्ख लड़की ओर कौन होगी, कहाँ होगी माँ?

बड़ा व्यक्ति

अभी मैं छोटा हूँ क्योंकि अभी मैं बच्चा हूँ। जब पिता जी जितना हो जाऊँगा, तब मैं बड़ा हो जाऊँगा।
मास्टर आकर कहेगा- लाओ, स्लेट और पुस्तकें लेकर आओ। पहले ही देर हो चुकी है।
मैं उसे बताऊँगा- तुम्हें दिखाई नहीं देता अब मैं पिता जी जितना बड़ा हो गया हूँ? अब मुझे पढ़ने की आवश्यकता नहीं।
हैरान होकर मास्टर बड़बड़ाएगा- हाँ, अब तो यदि यह पुस्तकें एक तरफ रख दे तो भी ठीक है। अब यह बड़ा हो गया है।
खुद ही कपड़े पहनकर भीड़ वाले मेले में चला जाऊँगा।
भागता हुआ चाचा आयेगा और कहेगा- अरे यह क्या कर रहे हो तुम? गुम हो जाओगे भीड़ में कहीं। मैं तुम्हारे साथ जाऊँगा।
मैं कहूँगा- आपको दिखाई नहीं देता चाचा? मैं पिता जी जितना बड़ा हो गया हूँ, अब मैं अकेला मेले में जाऊँगा।
चाचा कहेगा- हाँ भाई बात तो ठीक है। बड़ा हो गया है अब यह, अकेला भी जा सकता है जहाँ मन करे।
गुसलखाने में से आती हुई माँ देखेगी कि पर्स खोलकर मैं नौकरानी को पैसे पकड़ा रहा हूँ।
माँ कहेगी- अरे यह क्या शरारती लड़के?
मैं कहूँगा- मैं बड़ा हो गया हूँ, दिखाई नहीं देता माँ? अब मैं जिसे चाहे जितने चाहूँ चांदी के रूपये दे सकता हूँ।

माँ कहेगी- बात तो ठीक है। जब हो ही गया बड़ा, तब अपनी इच्छा से पैसे तो इसने देने ही हैं।
अक्तूबर की छुट्टियों में जब पिता ही मिलने आयेंगे, मेरे लिए छोटे-छोटे खिलौने, छोटे से जूते तथा छोटी-छोटी रेशमी फ्राकें भी लेकर आयेंगे। मैं कहूँगा- पिता जी यह किसी दूसरे को दे दीजिए, मैं आपके जितना बड़ा हो गया हूँ।
पिता जी कहेंगे- यह चाहे तो अपने कपड़े अब स्वयं खरीद सकता है। बड़ा जो हो गया है अब।

अंत

जाने का समय हो गया है। अब मुझे जाना है माँ। चारपाई से मुझे उठाने के लिए जब तुम भुजाएँ फैलाओगी, मैं कहूँगा- तुम्हारा बेटा है ही नहीं माँ यहाँ, मैं जा रहा हूँ। मैं हवा का एक झोंका बनकर तुम्हें छू लूंगा। नदी पर स्नान करने जाओगी तो मैं लहरे बनकर बार-बार तुम्हें चूम लूंगा। रात को जब पत्तों पर तड़ तड़ करती हुई कणियाँ गिरेगीं, हँसता हुआ बिजली के साथमैं तुम्हारे पास खिड़की से आ जाऊँगा।
अपने बेटे की प्रतीक्षा करते हुए यदि तुम्हें नींद न आई, तो मैं तारों में बैठकर गीत गाऊँगा- सो जा माँ सो जा। प्यारी माँ सो जाओ। चन्द्रमा की किरणों के माध्यम से नीचे उत्तर कर तुम्हारी छाती पर लेट जाऊँगा। सो रही तुम्हें पता भी नहीं लगेगा। स्वप्न बनकर मैं धीरे से तुम्हारी पलकों में से होता हुआ तुम्हारे भीतर चला जाऊँगा माँ। नींद खुलते ही जब तुम इधर-उधर नज़रों से मेरी तलाश करोगी तब तक मैं जुगनू बनकर उड़ जाऊँगा, पड़ोसियों के बच्चे नाचेंगे, गायेंगे, मैं संगीत बनकर तुम्हारे मन में उतर जाऊँगा। पूजा सामग्री लेकर जब चाची आयेगी तब पूछेगी- कहाँ है तुम्हारा बेटा? धीमी आवाज़ में तुम कहोगी- मेरी आँखों की पुतलियों में। मेरे जिस्म और मेरी रूह में।

खानाबदोश पक्षी

गर्मियों की ऋतु में खानाबदोश पक्षी मेरी खिड़कियों में बैठकर गीत गाते हैं, फिर उड़ जाते हैं। पतझड़ के पीले पत्तों के पास गीत नहीं होते, वह आह भरकर झड़ जाते हैं।

... ...

हे खानाबदोश संसार, मेरे शब्दों पर अपने कदमों के निशान छोड़ जा।

... ...

संसार अपने प्रिय के सामने जब अपना नकाब उतार देता है तो वह गीत जितना छोटा और चुम्बन जितना अनंत हो जाता है।

... ...

धरती के आँसूओं के कारण फूलों की मुस्कान कायम है।

... .

विशाल रेगिस्तान, घास की एक पत्ती के प्रेम में जल रहा है। पत्ती इंकार में सिर हिलाकर हँसती है और उड़ जाती है।

... ...

सूर्यास्त के समय यदि आँसू बहाने लगे तो फिर तुम्हें तारे भी दिखाई नहीं देंगे।

... ...

आपके रास्तों की रेत आपसे गीत मांगती है, नाचता हुआ पानी आपसे तेज चाल मांगता है। क्या आप इन विकलांगों का भार उठा लोगे?

... ...

उसका उत्सुक चेहरा रात की वर्षा के समान मेरे स्वप्नों का पीछा करता है।

... ...

एक रात स्वप्न देखा जैसे हम अजनबी हैं।
जागने पर पता चला हम तो एक-दूसरे से प्रेम करने वाले हैं।

... ...

जैसे वृक्षों की खामोशी में शाम छिप जाती है,
उदासी उसी प्रकार मेरे मन की शांति में छिपी बैठी है।

... ...

दैवी अंगुलियाँ मेरे मन की तारें हिला रही हैं जैसे हवायें लहरों को आगे धकेलती हैं।

... ...

- तुम्हारा शोर क्या कहता है हे सागर?
- अनंत प्रश्न।
- तुम्हारा क्या उत्तर है हे आसमान?
- अनंत खामोशी।

... ...

उत्पत्ति का रहस्य रात के जैसा महान् है।

ज्ञान के भ्रम प्रातः के कोहरे जैसे उलझे हुए हैं।

... ...

इस सुबह अपनी खिड़की में से बाहर देख रहा हूँ। यात्री के समान संसार मेरे पास कुछ समय रूक कर सिर झुकाता है और चला जाता है।

... ...

मेरी पागल इच्छाएँ मेरे गीतों में भी चीखती रहती हैं मालिक!
तो भी मुझे इनको सुनना तो पड़ेगा ही।

... ...

मैं श्रेष्ठ का चयन नहीं करता। श्रेष्ठ से मुझे चुन लिया है।

... ...

हम खड़खड़ करते पत्ते हैं जो आंधियों के प्रश्नों का उत्तर हैं।
आप कौन हो जो बात हीं नहीं करते?
... हम तो तुच्छ फूल है जी केवल।"

... ...

प्रतिदिन ताज़े फूल भेजकर परमात्मा उम्मीद करता है कि हम धन्यवाद करें। सूर्य चन्द्रमा भेजकर वह हमसे कोई उम्मीद नहीं रखता।

... ...

पत्तों के मध्य नंगे बच्चे के समान प्रसन्न खेलती हुई रोशनी सोच नहीं सकती कि व्यक्ति झूठ बोल सकता है।

... ...

हे सुन्दरता। स्वयं की तलाश प्रेम में करो, शीशे की खुशामद से बचकर रहो।

... ...

तुम किसकी प्रतीक्षा कर रहे हो चन्द्रमा?
सूर्य को नमस्कार करके उसके लिए रास्ता छोड़ना है मैंने।

... ...

वृक्ष मेरे चौबारे की खिड़की तक इस प्रकार ऊँचे हो रहे हैं
जैसे गूंगी धरती की दबी हुई इच्छाएँ।

... ...

ईश्वर अपनी नयी सुबह देखकर हैरान हो जाता है प्रतिदिन।

... ...

सूखा दरिया अपने भूतकाल का धन्यवाद नहीं किया करता।

... ...

पक्षी का मन करता है मैं बादल बनूँ। बादल चाहता है मैं पक्षी बनूं।

... ...

झरना गाता है- जब मुझे आज़ादी मिली, तभी मुझे गीत मिल गया।

... ...

काम-काज करती हुई स्त्री जब घर में घूमती है, ऐसा लगता है जैसे कंकड़ पत्थरों में से नदी बह रही हो।

... ...

पश्चिम में अस्त होने से पहले सूर्य, पूर्व को सलाम करना नहीं भूलता।

... ...

तुमने बात तो कोई की नहीं, केवल थोड़ा सा मुस्करायी थी।
इसी का मुझे मुद्दत से इंतजार था।

... ...

मछली समुद्र में शांत है। पशु धरती पर अठखेलियाँ कर रहे हैं। पक्षी आकाश में उड़ते हुए गीत गा रहे हैं।
मनुष्य में सागर की शांति, धरती की चंचलता और आकाश का संगीत है।

... ...

तारे यदि आपको जुगनूओं के समान प्रतीत होते हैं तो तारों को इस बात की कोई चिंता नहीं।

... ...

धन्यवाद तेरा परमात्मा कि मैं शक्ति के पहियों में से नहीं हूँ,
उनमें से हूँ जो पहियों के नीचे कुचले गये हैं।

... ...

मन तीखा है परन्तु बड़ा नहीं, इसी कारण स्थान स्थान पर चुभ जाता है, चलता ही नहीं आगे।

... ...

तुम्हारी मूर्ति टूटकर रेत में बिखरी तो सिद्ध हुआ कि परमात्मा की रेत तेरी मूर्ति से महान् है।

... ...

शीशे के लैम्प को जब मोमबत्ती ने भाई कहा तो लैम्प गुस्से हो गया। परन्तु जब चन्द्रमा निकला तो लैम्प उसे कहने लगा- बहन, मेरी प्यारी बहन।

...   .

समुद्रीय पक्षी लहरों को छूकर ऊपर उड़ जाते हैं तथा लहरें पीछे हट जाती हैं, इसी प्रकार हम मिले बिछुड़े।

...   .

मेरा दिन बीत गया। घाट के किनारे बंधी किश्ती के समान लहरों का नृत्य देख रहा हूँ।

...   .

जीवन मुझे मिल गया। कमाई उसे कहेंगे जब त्याग दिया।

...   .

तूफान शीघ्र से शीघ्र छोटे से छोटे रास्तों की तलाश करता भाग रहा है। जहाँ पहुँचता है वहाँ जाकर सोचता है- यहाँ तो मुझे आना नहीं था।

...   .

मेरी शराब मेरे गिलास से पी मित्र।
जब इसे किसी दूसरे गिलास में उलटा देते हो तो झाग का कंगन टूट जाता है।

...   .

स्वयं का पूर्णतः श्रृंगार कर, सम्पूर्णता-अपूर्णता से प्रेम करती है।

...   .

परमात्मा मानव से कहता है- तुम्हारा इलाज करना था, इसलिए दुःख दिया। मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ, इस कारण दण्ड दिया।

...   .

घास के छोटे पौधे, तुम्हारे पैर तो छोटे-छोटे हैं परन्तु तुमने सारी धरती अपने कदमों के नीचे छिपा ली है।

...   .

खिलते ही कली ने खुशी में किलकारी मार कर कहा- मुरझाना नहीं प्यारे संसार।

...   .

बड़ी-बड़ी सल्तनतें स्थापित करते करते परमात्मा थक जाता है। प्रतिदिन नये-नये छोटे-छोटे फूल भेजता हुआ बिल्कुल नहीं थकता।

...   .

झरना गाता है- प्यासे को बेशक थोड़े से पानी की आवश्यकता है परन्तु खुशी से में सारा पानी दूंगा।

...		...		...

अनंत आनन्द का वह फौव्वारा कहाँ है जहाँ से फूलों के दरिया बह आए?

...		...		...

लकड़हारे ने अपनी कुल्हाड़ी के दस्ते हेतु वृक्ष से लकड़ी मांगी। वृक्ष ने प्रसन्नता से लकड़ी दे दी।

...		...		...

धुंध का घूंघट निकाले, वर्षा में जाती हुई विधवा शाम की आह को मैंने अपने मन के एकांत में स्पष्ट सुना।

...		...		...

संसार को गलत पढ़ने के पश्चात् हम कहते हैं, यह धोखेबाज है।

...		...		...

समुद्र किनारे, कभी जंगलों में, कवि अपनी आवाज़ को ढूंढ रहा है।

...		...		...

प्रत्येक बच्चे का जन्म यह सिद्ध करता है कि ईश्वर मानव से अभी निराश नहीं हुआ।

...		...		...

घास धरती पर अपनी भीड़ ढूंढता है। वृक्ष आकाश में अपना एकांत ढूंढता है।

...		...		...

दैवी आग कहाँ जल रही है जिसमें से तारों की चिंगारियाँ निकलीं?

...		...		...

नेकी करने का इच्छुक दरवाज़े पर दस्तक देता है। प्रेम करने वालों के लिए दरवाज़े खुले हैं।

...		...		...

तुम कहाँ हो फल?
मैं तुम्हारे मन में हूँ फूल।

...		...		...

ओस की बूंद ने झील से कहा- तुम मुझसे बड़ी ओस की बूंद हो बहन। मैं कमल के पत्ते पर झूल रही हूँ, तुम पत्ते के नीचे लटक रही हो।

...		...		...

कलाकार कुदरत का आशिक है, इस कारण वह कुदरत का मालिक भी है, गुलाम भी।

...		...		...

म्यान तीखी नहीं है, इस कारण तलवार की तेज़ धार बची रहती है।

... ...

पत्तों का जन्म तथा मृत्यु का तेज़ घेरा उसी विशाल चक्कर का भाग हैं, जो धीरे-धीरे तारों के साथ घूमता है।

... ...

पल का शोर अनंत संगीत की ओर नाक सिकोड़ता है।

... ...

काले रंग का बादल शर्मिंदा होकर आकाश के एक कोने में जाकर खड़ा हो गया। उदित होते सूर्य ने सुनहरी ताज उसी सिर पर रखा।

... ...

चलते जाओ, फल चुगने के लिए रूको मत, जिधर जाओगे ताज़े फूल रास्तें में खिलते जायेंगे।

... ...

जड़ें धरती में फैली शाखायें हैं। शाखायें हवा में लहराती जड़ें हैं।

... ...

पतझड़ के आस-पास बसंत का संगीत अपना पुराना घोंसला ढूंढता घूम रहा है।

... ...

भूले दिनों की यादें मेरे आस-पास ऐसे लिपटी हुई हैं जैसे पुराने वृक्षों के आस-पास लतायें।

... ...

गूंज आवाज़ को चिढ़ाकर कहती है- मैं असली हूँ।

... ...

कुछ व्यक्ति ईश्वर की ऐसी मेहरबानियों का वर्णन करते हैं कि ईश्वर शर्मिंदा हो जाता है।

... ...

सूर्य के पास रोशनी की साधारण पोशाक है। बादल स्वयं को शाही पोशाक में लपेटते रहते हैं।

... ...

पर्वत बच्चों की किलकारियों के समान है, जो तारों को पकड़ने के लिए ऊपर की ओर भुजाएँ फैलाते हैं।

... ...

स्वप्न पत्नी के समान है जो बातें करेगा।
नींद पति के समान खामोश दुःख उठायेगी।

... ...

डूबते दिन को चूम कर रात उसके कान में कहती है-
मैं मौत हूँ, तुम्हारी माँ। तुम्हें नया जन्म दूंगी।

... ...

बाज़ सोचता है यदि मछली को पानी से बाहर निकाल कर दिखाऊँ कि मैदान कितने सुन्दर है तो वह बहुत खुश होगी।

... ...

रात ने सूर्य को कहा- चन्द्रमा द्वारा तुम मेरे पास प्रेम-पत्र भेजते हो।
घास पर बिछे आँसूओं द्वारा मैं उन पत्रों का जवाब देती हूँ।

... ...

हथौड़ों की चोट नहीं, नाचते पानी का संगीत पत्थर-गीटों को गोल तथा मुलायम बनाता है।

... ...

शहद की मक्खी फूल का रस चूस कर धन्यवाद करने के लिए उसके आस-पास परिक्रमा करती है। अहंकारी तितली चाहती है कि फूल मेरा धन्यवाद करे।

... ...

पत्ता जब प्रेम करने लगे, तो फूल बन जाता है।
फूल जब बंदगी करने लगे, फल बन जाता है।

... ...

जड़ें वृक्ष की शाखाओं को फूलों से भर देती हैं
परन्तु शाखायों से यह नहीं कहती कि हमारा धन्यवाद करो।

... ...

आधी रात के समय तूफान ऐसा लगता है जैसे किसी दैत्य का बच्चा असमय में जागकर खेलने लगे।

... ...

शब्द ने काम से कहा- तुम्हें देखकर मैं अपनी सूक्ष्मता से शर्मिंदा हो जाता हूँ।
काम ने शब्द से कहा- तुम्हारे बिना मैं बहुत निर्धन हूँ।

... ...

सच्चाई के लिबास में कोई दोष नहीं होता परन्तु कल्पना अपने लिबास में सरलता से चलती रहती है।

... ...

मुझे इस बात पर विश्वास है कि आकाश के तारों में से कोई ऐसा है जो मेरा भाग्य निश्चित करता है, मेरी अगवाई करता है।

... ...

सदियों से उदास खण्डहरों में से एक आवाज़, शांत रात में मुझे अकसर सुनाई देती है- "मैंने तुम्हें प्रेम किया था।"

... ...

आग की लपटों के अंगारे मुझे बचने के लिए डांटते भी हैं और आग मेरे समक्ष मिन्नते भी करती हैं- राख में दबे अंगार मर रहे है, बुझ रहे हैं, बचा लोगे मुझे?

... ...

हल्की सुगन्ध, भीगी पवन से ईश्वर की ताकत का पता चलता है, आँधियों से, तूफानों से नहीं।

... ...

स्वप्न में वस्तुएँ इधर उधर बिखरी हुई हैं।
जब जाग गया तो उन्हें इक्ट्ठी करके सुरबद्ध कर दूंगा।

... ...

खामोशी में आपकी आवाज़ सुरक्षित है जैसे घोंसले में सोए हुए पक्षियों के गीत सुरक्षित हैं।

... ...

रात चुपचाप फूल को विकसित कर देती है और सवेरा, बधाइयाँ कबूल करता है।

... ...

कुचले लोगों की रचनाएँ पढ़कर हुकूमत कहती है- कितने नाशुकरे हैं।

... ...

वर्षा की बूंदों ने धरती को चूमा और धीरे से कहा- हम तुझसे बिछुड़ी तेरी बच्चियाँ हैं और स्वर्ग से वापिस आई हैं।
हमें अपनी गोद में समा लो माँ।

... ...

टिटिहरी ने सितारों से कहा- विद्वान् बताते हैं कि एक दिन आपकी रोशनी खत्म हो जायेगी। सितारों ने कोई उत्तर नहीं दिया।

... ...

जो मुझे मजबूर कर रही है, क्या यह मेरी आत्मा है जो बाहर आना चाहती है या यह विश्वात्मा है जो भीतर आने के लिए दरवाज़े पर दस्तक दे रही है।

... ...

छोटे बर्तन में रखा पानी चमकता है परन्तु समुद्र का पानी अंधेरा है। छोटे-छोटे सत्य स्पष्ट दिखाई देते हैं, बड़ा सत्य अनंत खामोशी है।

... ...

अपने प्रियों को बांटने के लिए हमारे पास छोटी-छोटी वस्तुएँ हैं। बड़ी वस्तुएँ तो सारे संसार के लिए हैं।

... ...

जैसे समुद्र ने धरती को घेर रखा है, स्त्री के आँसूओं ने संसार को घेर रखा है।

... ...

हँस कर धूप मेरा स्वागत करती है।
उसकी उदास बहन वर्षा मेरे साथ दिल की बातें करती हैं।

... ...

जो व्यक्ति नेकी करने में सारा दिन व्यस्त रहता है,
नेक बनने के लिए उसके पास समय नहीं होता।

... ...

पालतू कुत्ता समझता है कि सारा संसार उससे उसका घर छीनने की योजनाएँ बनाता रहता है।

... ...

खींचे हुए धनुष से बाण ने कहा- मुझे स्वतन्त्र कर दो हजूर।
मेरी स्वतन्त्रता में आपकी स्वतन्त्रता भी है।

... ...

अधिक तर्क दो-धारी चाकू के समान है जिसका दस्ता न हो।
इसको प्रयोग करने वाला हाथ लहूलुहान होगा।

... ...

संसार, सुन्दरता के संगीत से साधित तूफान है।

...　　　　...　　　　...

छू कर हो सकता है आप मार दो। दूर रहने से हो सकता है आप प्राप्त कर लो।

...　　　　...　　　　...

जिस आकाश ने सुबह होते ही समस्त तारे खो दिए, फूल उसे रो रो कर बताता है कि मेरी ओस बूंद गुम हो गई।

...　　　　...　　　　...

सूर्य शाम को जब पश्चिम में अस्त हो रहा होता है, पूर्व की सुबह संतोषपूर्वक देखती रहती है।

...　　　　...　　　　...

प्रशंसा मुझे शर्मिंदा कर देती है, क्योंकि उसके आगे मैं भिखारी हूँ।

...　　　　...　　　　...

सर्वोत्तम अकेला नहीं होता। सभी उसके साथ आते हैं।

...　　　　...　　　　...

ईश्वर का दायां हाथ दयालु है, बायाँ खतरनाक।

...　　　　...　　　　...

मेरे उदास ख्याल मुझसे अपने नाम पूछ पूछ कर तंग करते हैं।

...　　　　...　　　　...

आँधी उस दुःखी देवता का रुदन है जिसके प्रेम को धरती ने स्वीकार नहीं किया।

...　　　　...　　　　...

चाँद अपना प्रकाश सारे संसार में बांटता है परन्तु अपने दाग अपने सीने से लगाकर रखता है।

...　　　　...　　　　...

धुआँ आकाश पर चढ़कर, राख धरती पर गिर कर शेखी बघारते हैं- हम आग के बहन भाई हैं।

...　　　　...　　　　...

लड़खड़ाते कमज़ोर विचारो, मुझसे डरो मत। मैं शाइर हूँ।

...　　　　...　　　　...

यह पर्वत क्या फूल जैसा नहीं? आस-पास पहाड़ियों की पंखुड़ियाँ धूप का पान करती दिखाई दे रही हैं।

...　　　　...　　　　...

छोटा फूल मिट्टी में मिला हुआ है।
तितली के पीछे-पीछे उड़ना चाहा था।
चलने के लिए पहले कदम ऊपर उठाना है, फिर नीचे रखना है।

... ...

धूप और फूलों की भाषा तो मैं समझ जाता हूँ।
मुझे दुःख तथा मृत्यु की भाषा समझने की शक्ति भी तो मिले।

... ...

जो फूल रात को पहले खिल गया था, प्रभात ने जब उसका चुम्बन लिया, फूल ने आह भरी, कांपा, धरती पर गिर गया।

... ...

तुम्हारे किनारे पर मैं अजनबी की तरह उतरा, तुम्हारे घर मेहमान की तरह ठहरा, तुम्हारा दर अब मित्र के समान छोड़कर जा रहा हूँ मेरी धरती।

... ...

दिन का काम समाप्त कर लिया है। अपनी भुजाओं से मेरा चेहरा ढको माँ। मुझे स्वप्न देखने दो।

... ...

हम इस संसार के उस समय तक निवासी हैं जब तक हम इसे प्रेम करते हैं।

... ...

मैंने तुझे ऐसे देखा जैसे अर्धनिद्रा में बच्चा सुबह पल भर के लिए माँ की तरफ देखे, ओर सो जाये।

... ...

जीवन कभी नहीं थकता, यह जानने के लिए मुझे बार-बार मरना होगा।

... ...

सुबह होते ही चहकते पक्षी जैसे आनन्दमग्न हो तुम्हारा नाम लेते हैं, पुजारी उस तरह तुम्हारा नाम नहीं ले सकता।

... ...

घाव मिले, घाव ठीक हुए, दिन बीतने पर तुम्हें अपने जिस्म के दाग दिखाऊँगा।

... ...

सत्य, अपने विरुद्ध इस कारण तूफान खड़ा कर लेता है, क्योंकि अपने बीज उसने दूर-दूर तक बिखेरने होते है।

... ...

सत्य अंतिम शब्द बोलकर खामोश हो गया। अब यह शब्द अगले शब्दों को जन्म देगा।

... ...

भाग्यशाली है वह, जिसकी प्रसिद्धि सत्य से अधिक नहीं चमकती।
खामोश रात माँ जैसी सुन्दर है, दिन बच्चे जैसा चंचल है।

... ...

ईश्वर प्रतीक्षा में है कि व्यक्ति अपने बचपन जितना समझदार कब होगा।

... ...

प्रेम करते समय ईश्वर नाशवान् को चूमता है, व्यक्ति अविनाशी को।

... ...

दिन उदास है, बादल ऐसे जा रहे हैं, जैसे डांट खाकर गालों पर आँसू लटकाए बच्चे जाते हैं।
हवा घायल संसार के समान कराह रही है। परन्तु अपने मित्र से मिलने के लिए तो जाना ही होगा।

... ...

प्रेम में कभी किसी को हानि हुई है, मैं नहीं मानता यह बात।
अपमानित व्यक्ति विजयी होगा, संतोष की इस प्रतीक्षा का नाम सभ्यताओं का इतिहास है।

... ...

दुःख देखे, मृत्यु का पता चला, खुश हूँ कि मैं महान् संसार में रहा हूँ।

... ...

"मैंने तुम्हारे प्रेम पर विश्वास किया", मेरा अंतिम कथन यही हो।

फरांज़ काफ़का

काफ़का के विषय में लिखने का निर्णय किया तो स्वाभाविक था कि उससे सम्बन्धित सामग्री प्रमाणिक हो। सोचता- क्या उसके बारे में लिख सकूंगा कुछ, जिसे पाठक सही मान ले? जर्मन साहित्य में सात दर्जन पुस्तकें लिखकर प्रसिद्धि प्राप्त करने वाला लेखक मैक्स ब्रोद लिखता है, "उसके बारे में आंशिक रूप से जान सका हूँ। संसार उसकी सम्पूर्णता को कभी समझ नहीं सकेगा।" काफ़का की प्रथम जीवनी ब्रोद द्वारा रचित है। काफ़का पर अब तक बीस हज़ार से ऊपर पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं।

शेख साअदी गुलिस्तां के प्रारम्भ में लिखते हैं, "लिखने की इच्छा थी परन्तु वर्षो तक एक शब्द भी नहीं लिखा गया। मेरी बुद्धि की शहज़ादी नज़रें झुकाकर बैठी रही, क्यों कि वह सुन्दर नहीं थी। एक दिन उठकर कहने लगी- साअदी, लिखना शुरू कर। मैंने पूछा- लिख सकूंगा कुछ? मुझे कोई पढ़ेगा भी? शहज़ादी ने कहा- देर मत करो। कलम दवात उठा। बिस्मिल्लाह कहो और लिख। सरकण्डे का बीज लोग गन्ने के समान खायेंगे। साधारण कागज़ों पर कलम चला, संसार में हुण्डियों के समान चलेगा। बिस्मिल्लाह कह, और लिख।"

ईश्वर का नाम लेकर लिखने तो लगा हूँ मैं परन्तु इस हुण्डी का मूल्य लगेगा भी या नहीं। वारिश शाह जैसी हीर अन्य कोई नहीं लिख सका, तो भी हीर के किस्से कवि लिखते तो रहे। उस समय मैं फंस जाऊँगा जब मैंने काफ़का दर्शन का वर्णन शुरू कर दिया। इस ओर जायेंगे ही नहीं। उसकी जीवन कथा लिखता हूँ। मुझे जैसे भी वह समझ में आया, प्रयास करूँगा, उसी प्रकार समझा सकूं। फिर भी यह प्रोजैक्ट सरल नहीं है। फरांज़ काफ़का मस्तिष्क को बौखला देने वाला साहित्यकार तथा चिंतक है।

उस सम्बन्धी विवरण तो क्रमशः प्रस्तुत करने ही हैं, अध्ययन के पश्चात् जिस बात ने मन को पूर्णतः प्रभावित किया, वह यह है कि जब ताकतवर कोई मानव सत्य को साक्षात् देखता है तो उसका नाम गुरू नानक देव हो जाता है तथा समस्त आयु संसार को बताता फिरता है कि यह कितना सुन्दर, कितना आश्चर्यजनक तथा अनंत है। यदि कहीं कमज़ोर व्यक्ति के सामने यह अनंत सत्य प्रकट हो जाये तो पागल हो जायेगा। छिपाने का प्रयास करेगा, स्वयं को भी, सत्य को भी। काफका यही करता रहा। सारी उम्र काफ़का बीमार रहा तथा 40 वर्ष की आयु में मर गया।

उसके भीतर का भय, व्याकुलता, उत्सुकता, साधारण नहीं थे। प्रत्येक वस्तु उसके लिए करामात थी, प्रत्येक वस्तु मिथ्या। अंतिम श्वास तक उसकी हालत

आस-पास के विषय में ऐसी रही जैसे कोई तीन वर्ष का बच्चा पहली बार रेलगाड़ी के इंजन को चलता देखे। स्वयं पर उसे कभी विश्वास नहीं हुआ। वह प्रकाशित होना नहीं चाहता था। चर्चा के खिलाफ था। उसकी पत्नी दोरा लिखती है- वह खुश नहीं रहा कभी। उसकी मुस्कान तथा उसके व्यंग्य खतरनाक होते, परन्तु लियाकत इतनी थी कि बातचीत शंहशाह जैसी होती। परिचित आते या अपरिचित, बड़े आते या छोटे, उससे बातें करते हुए ऐसा प्रतीत होता जैसे मखमल के विशाल गलीचे पर नंगे पैर चल रहे हों। बिल्कुल भी आवाज़ नहीं आती। अनंत शांति, तस्सली तथा निश्चिन्तता का आलम।

वह शब्दों को शाण पर लगाता, इतना तेज़ घुमाता कि सर्कस के कलाकार भी मात खा जायें। अपने बारे में कहा- या तो तेज़ धार वाले चाकू छूरी को छिपा दो या फिर पागल व्यक्ति के हाथ बांध दो। आपने मुझे बोलना क्यों सिखाया, लिखना क्यों सिखाया? यदि गलती हो गई तो फिर मेरे हाथ क्यों नहीं काटते? जुबां क्यों नहीं काटते? स्वयं घायल हो चुका हूँ, संसार को घायल करने के लिए निकल पड़ा हूँ।

काफ़्का में मुझे कभी-कभी मनसूर दिखाई देता। जर्मन भाषा को उसने वह नया रंग रूप दिया कि जर्मन साहित्य पूर्व काफ़्का तथा उत्तर काफ़्का इन दो भागों मे विभाजित हो गया। वह बीसवीं शताब्दी की उपज नहीं था। उसमें से बीसवीं शताब्दी जन्म लेती है। आईनस्टाईन के पश्चात् विज्ञान बदला तो काफ़्का के बाद कोमल कलायों ने रूप बदला। दोनों जर्मन, दोनों यहूदी, दोनों समकालीन, दोनों पराग में। दोनों ही धर्म बन्धनों से पूर्णतः स्वतन्त्र थे परन्तु दोनों को यहूदी होने का संताप भोगना पड़ा। काफ़्का समस्त आयु यहूदी मंदिर (सिनेनाग) में नहीं गया। उसके एक एक वाक्य में धर्म, रहस्य तथा सौन्दर्य के दर्शन होते हैं। वह भाषा को सजाता नहीं, अलंकार गायब हैं। पाठक स्वयं ही अलंकारों का प्रयोग कर उसकी रचनाओं को निहारने लगते हैं।

एक बार जो भी उसके सम्पर्क में आया, समस्त आयु उससे प्रभावित रहा। तपदिक रोग से जिस अस्पताल में उसकी मृत्यु हुई, चालीस वर्ष के बाद कैथी डायमंट उसका उपचार करने वाली नर्स से मिली और पूछा- कुछ याद है आपके अस्पताल में एक काफ़्का नामक रोगी आया था? 83 वर्षीय वृद्धा ने आह भरते हुए कहा- उसे कोई कैसे भूल सकता है? मैंने अनगिनत रोगियों की सेवा की। उस जैसा अन्य कोई नहीं देखा। लोग बताते थे कि वह एक महान् लेखक था। मैंने उसका एक शब्द भी नहीं पढ़ा। एक रोगी मृत्यु को साक्षात् देख रहा है, परन्तु उसकी आत्मा भयभीत नहीं होती। वह सबसे अलग था।

उससे प्रेरित होकर चौदह परिवार पराग छोड़कर फलस्तीन में जाकर रहने लगे। फ़लस्तीन जाते समय एक युवा लड़की को अपने हस्ताक्षर कर पुस्तक देते हुए कहा- मैं तो जा नहीं सकता अपने पूर्वजों के देश, मेरी पुस्तक तो जाये। इसे तुम ले जाओ। अभी तुम्हें यह समझ में नहीं आयेगी क्योंकि अभी तुम स्वस्थ हो, प्रसन्न हो, जवान हो। मेरी पुस्तकें बीमार एवं कमज़ोर लोगों को समझ आती हैं। मेहमानों को यह पुस्तक गर्व से दिखाती हुई वह 87 वर्ष की स्त्री हँसते हुए कहती है- बूढ़ी हूँ, कमज़ोर हूँ, बीमार हूँ। अब समझ में आई है मुझे उसकी यह पुस्तक। बुज़दिल, बीमार तथा कमज़ोर लोगों का पैगम्बर है फरांज़ काफ़का।

सर्वाधिक विश्वसनीय जीवनीकार अर्नसट पावल ने उसकी जीवनकथा 'दर्शन का डरावना स्वप्न' शीर्षक से लिखी है। काफ़का ने कहा- साधुओं ने सत्य के दर्शन किस विधि, किस रूप में किये, पता नही। प्रेम तथा मृत्यु को अपने सामने देखकर मुझे उसकी झलक दिखाई दी। प्रेम तथा मृत्यु में कोई अन्तर नहीं। लिखा- बीत चुकी किसी पुरानी याद पुनः जीवित हो उठे तो फिर वह कभी सोयेगी नहीं।

जिसमें जान पड़ गई, आदिकालिक सनातनी याद का नाम फ़रांज़ काफ़का है। उसका जन्म पराग में हुआ, थोड़ा बहुत इधर-उधर, अन्य स्थानों पर घूमने के पश्चात् अंतिम सांस भी यहीं ली। कहा करता था- तीखे मजबूत पंजों वाली चुड़ैल है पराग, इसकी पकड़ में ठीक ढंग से सांस भी नहीं लिया जाता। इसके विपरीत, काफ़का की सखी मिलेना को कोई अजनबी नाम पूछता तो वह कहती- पराग की मिलेना। उसने कभी भी अपना मिलेना नाम अकेला नहीं बताया, कहती- मिलेना ऑफ़ पराग। पराग मेरी जेब में है, पराग समझता है मैं उसकी जेब में हूँ। इस लड़की की सुबह, दोपहर तो हुई, परन्तु कभी शाम नहीं आई। इतनी साहसी लड़की नाज़ियों के कैम्प में संघर्ष करते हुए मरी परन्तु वह सभी कैदियों के लिए सांत्वना का स्रोत बनी रही। जेल का सुपरडैंट, इस कैदी लड़की के सामने आँख नहीं उठा सकता था। मिलेना यूरोप की जीनियस थी जिसने केवल चार दिन फ़रांज काफ़का के साथ व्यतीत किए। पोलैंड की रहने वाली दोरा एक कम पढ़ी-लिखी लड़की थी जो काफ़का के पास यह निवेदन लेकर गई थी कि वह आगे पढ़ना चाहती है परन्तु हुआ इसके विपरीत। इस ग्रामीण लड़की के पास प्राचीन अंजील, लोक-कथाओं, साखियों तथा हिब्रू का सीना बसीना परम्परा का वह अनमोल ख़ज़ाना था कि काफ़का उसका विद्यार्थी बन गया। कहा- यह कैसा विचित्र संसार है, जिसमें तुम मुझे ले आई? मैंने कानून में डॉक्टरेट की है दोरा, परन्तु मुझे पता नहीं चला कि कानून क्या होता है। तुम्हारी बातें सुनकर मैं देख रहा हूँ, हमारे पूर्वजों ने जो कानून दिया है, वह हिसाब-किताब लगाकर नहीं दिया। साधारण से दस-पन्द्रह वाक्य देते हुए कहा-

यदि इन्हें मानोगे बच्चों तो ईश्वर प्रसन्न रहेगा। संतान ने इतना विश्वास किया कि एक वाक्य की उल्लंघना हो गई तो डरते थे कि लाखों वर्ष तक नरक की आग में जलना होगा। संतोष रखने वाली सभ्यता सुखी रही। आधुनिक कानून मानवता का नाश कर देगा। खण्डहर मुझे साफ़ दिखाई दे रहे हैं। व्यापक मृत्यु। अनंत शोक तथा रुदन। हारने वाला तो होगा ही जीतने वाला भी बर्बाद होगा।

मिलेना तथा दोरा कितनी महान् शख्सीयतें हैं, यह बताने के लिए इनका पृथक् वर्णन किया जायेगा। पहले मिलेना पर फिर दोरा के बारे में लिखा जायेगा। इस समय इस लेख में कहीं कहीं इनका वर्णन तो होगा परन्तु अधिक नहीं।

फ़रांज काफ़का का बाबा याकूब काफ़का दैत्याकार का शक्तिशाली मनुष्य था, जो आलूओं से भरी बोरी को दांतों से उठा लेता था। झटकई था। पिता हरमन काफ़का अपने बच्चों को बताते- भाग्यशाली हो कि अच्छी रोटी मिल रही है। हम जब सात वर्ष के हो जाते तो तुम्हारा बाबा कह देता- अब रेहड़ी चलाने के योग्य हो गये हो- जाओ जाकर गलियों में मीट बेच कर आओ। बहुत कठिन जीवन व्यतीत किया है हमने। किर किर करती इस निर्धनता से बाहर निकलने के लिए पिता हरमन को इतना कठिन परिश्रम करना पड़ा कि वह मध्यवर्गीय पारिवारिक सभ्यता भूल गये। परिवार के साथ कड़वा बोलता। बाहरी लोगों से मिलने के समय भी वह अलग ही रहता। केवल काम, केवल व्यापार। कहा करता- बाईबल में लिखा है, इन्सान केवल रोटी के सहारे पर जीवित नहीं रहता, परन्तु यह भी सत्य है कि रोटी के बिना भी जीवित नहीं रहता। बाबा जैकब के समय यहूदियों की जनसंख्या कम करने के लिए चैक्क सरकार का यह कानून लागू था कि केवल ज्येष्ठ बेटा ही विवाह करवा सकता है, अन्य कोई नहीं। 1848 के विद्रोह ने जब कानून बदला तब जैकब का विवाह हुआ। वर्ष 1850 से 1859 तक छह बच्चों का जन्म एक छोटे से कमरे में ही हुआ और भूख मिटाने के लिए अनेक बार केवल आलू होते। जैसे बहादुर जरनैल अपने शारीरिक घावों के निशानों की संख्या बताता है, पिता हरमन अपने हाथों पैरों के घाव तथा अट्टन अपने बच्चों को गर्व से दिखाता हुआ कहता- यह मेरी निर्धनता के तमगे है मेरे बच्चो।

फ़रांज अपने पिता के साथ समस्त आयु समझौता न कर सका। उसे इस बात की आपत्ति थी- परिवार में काफका पहला बच्चा एक वर्ष का था जब दूसरे का जन्म हुआ। पहले को उसी समय बड़े होने की उपाधि मिल गई तथा एक वर्ष की आयु में ही उसका बचपन छीन लिया गया। "मुझे मेरा बचपन कभी नहीं मिला। इस बात से मुझे इतना गहरा आघात पहुँचा कि वास्तव में सारी उम्र मैं बड़ा हुआ ही नहीं।

उसने अपने क्रोधित पिता को 25 वर्ष की आयु में एक लम्बा पत्र लिखा जो इस समय प्रकाशित हो चुका है, 'पुत्र का पिता को पत्र', माँ को दे दिया। माँ ने कभी पिता को वह पत्र पढ़ने के लिए नहीं दिया। अब आप यह पत्र पढ़ो तो आपको प्रतीत होगा कि वास्तव में एक व्यक्ति द्वारा ईश्वर को लिखा गया पत्र है यह। यह फ़रांज का पिता हरमन नहीं, प्राचीन अंजील का क्रोधित तथा ईर्ष्यालु ईश्वर है जो आकाश से गर्जता हुआ कहता है- मेरी बात नहीं मानोगे तो सभ्यताओं को नष्ट कर दूंगा।

काफ़कों की मातृ-भाषा चैक्क थी। स्कूलों में शिक्षा जर्मन माध्यम से दी जाती थी। यद्यपि बचपन में ही पिता हरमन अच्छी तरह जर्मन बोलना सीख गया था परन्त वह कहा करता- इसकी बारीकियों का पता नहीं चलता। दुःख-सुख चैक्क में ठीक ढंग से कर सकता हूँ। चौदह वर्ष की आयु में ही वह व्यापार करने लगा। व्यापार क्या था, दैनिक प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं को बेचने हेतु गलियों में आवाज़ देता घूमता रहता। सिगमंड फ्रायड तीन वर्ष का था जब उसका पिता दिवालिया हो गया था। यहूदियों के लिए दिन बहुत ही बुरे थे।

फ़रांज़ का नाना हिब्रू जानता था, कट्टड़ धार्मिक यहूदी था। सुबह जल्दी उठकर स्नान करना उसका नित्यकर्म था। सर्दियों में दरिया की बर्फ में गड्ढा कर स्नान करता। घर पंक्तिबद्ध पुस्तकों से सजा होता था। जूली माँ अपने पति को पसंद करती हो, ऐसी कोई बात नहीं थी। कहा करती- घर तो तभी बसते हैं जब औरत संतोष धारण करने वाली होगी। कभी कभी अकेले में बहुत रोती। अत्यधिक कठिन परिश्रम करती। 3 जुलाई 1883 को उसने एक स्वस्थ बच्चे को जन्म दिया। बादशाह फ़रांज जोसफ़ का शासन था, इसलिए फ़रांज़ काफ़का नामकरण किया गया। 10 जुलाई को सुन्नत की गई। अंधेरे तंग कमरे, कोयले के धुएँ की गंध, बंद कमरों की दुर्गन्ध, मोमबत्ती की रोशनी से दूर भूत शोर मचा रहे हैं कि चूहे, पता नहीं। "यहूदियों का कत्ल करो," नारे यदि न भी लग रहे होते तो भी भयभीत यहूदियों के कानों में यह नारे गूंजते रहते।

पिता का मन तथा शरीर घर की अपेक्षा दुकान में ही रहता। कठिन परिश्रम सफल हुआ। परचून के स्थान पर एक थोक व्यापारी बन गया। बचपन में ही पिता जी सीख गए थे कि 'जिसकी कोठी दाने, उसके पागल भी समझदार', परन्तु यह बात अपने चारों बच्चों, तीन पुत्रियों तथा पुत्र फ़रांज काफ़का को कभी नहीं सिखा सका। कहा करता- पैसा यदि खुशियाँ नहीं लाता तो क्या हुआ? अरे मूर्खो दाल-रोटी, माखन, सुन्दर वस्त्र, घर तथा पुस्तकें तो लाता ही है। पैसा और क्या कर सकता है? एक

पशु को मानव तो बना ही देता है, फिर व्यक्ति को ताकत देता है, शान देता है, सभी सलाम करते हैं। ओर क्या चाहिए बताओ?

32 वर्ष की आयु में काफ़्का लिखता है, "बचपन में पिता जी ने मेरे विरुद्ध युद्ध किया और मुझे हरा दिया। अब तक युद्धक्षेत्र में पिता जी से बार-बार अब तक हार रहा हूँ।"

काफ़्का के पश्चात् दो बेटों का जन्म हुआ, परन्तु दोनों ही मर गये। पहले की मृत्यु के समय फ़रांज चार वर्ष का था तथा दूसरे की मृत्यु के समय पाँच वर्ष का। आसाधारण प्रतिभा का धारणी तो यह बच्चा था ही, तीन में से दो पुत्रों की मृत्यु के समय माता-पिता की शोकग्रस्त अवस्था ने इसके मन-मस्तिष्क पर गहरा आघात किया। यहाँ उसका वजूद रूक गया जो फिर समस्त आयु विकसित न हो सका। दस वर्ष की आयु में एक के बाद एक, उसकी तीन बहनों का जन्म हुआ। माता-पिता दुकान पर काम करते, बच्चे नौकर या नौकरानी के पास रहते। इन दस वर्षों में भोगी हुई उदासीनता उसके शब्द शब्द में दृष्टिगत होती है। पाठको, यहाँ यह कहना उचित नहीं कि गोरकी भी तो अनाथ था, वह बच्चा भी तो अकेला ही रहा था परन्तु कोई असर नहीं हुआ। किसी व्यक्ति को कोई बात कितना प्रभावित करती है, निश्चित करने के लिए कोई पैमाना नहीं। बूढ़े, अर्थी तथा साधुओं को सभी ने देखा है, कोई असर नहीं होता। कपिलवस्तु का सिद्धार्थ प्रभाव को स्वीकार करता है तथा नवीन धर्म का निर्माण करता है। बहुत बार कायदे कानून नहीं चलते।

बादशाह जोज़फ़ ने 1782 में यह कानून पास कर दिया कि धर्म आधारित भेदभाव समाप्त। यहूदी अन्य धर्मों के समान सभी वस्तुओं के अधिकारी हैं। इसी वर्ष यह घोषणा की गई कि सैकुलर विद्यालय खोले जायेंगे तथा उनमें शिक्षा का माध्यम जर्मन होगा। जो विद्यालयों में शिक्षा नहीं लेंगे, विवाह हेतु उनका रजिस्ट्रेशन नहीं किया जायेगा। यहूदी संकट-ग्रस्त हो गये। एक तरफ प्रसन्न थे कि भेदभाव समाप्त। दूसरी तरफ यह सोचकर विषादग्रस्त थे कि हमारी भाषा, धर्म, सभ्याचार नष्ट हो जायेगा। यहूदियों का रोष देखकर सरकार ने फैसला किया कि यहूदी बहु-संख्या वाले विद्यालयों में 4 घंटे सैकुलर शिक्षा के होंगे, बाकी की समय सूची में वह अपना धर्म पढ़ सकेंगे। 15 सितम्बर, 1889 ई. को नौकरानी फ़रांज़ को एक घटिया विद्यालय में दाखिल करवा आई। एक मास पश्चात् बड़ी बहन ऐली का जन्म हुआ तथा इसी वर्ष हिटलर, बहुत बीमार बच्चे का जन्म हुआ जिसके बारे में डॉक्टरों की राय थी कि यह बचेगा नहीं परन्तु वह बच गया।

विद्यालय से उसको सामान्य बच्चों की अपेक्षा अधिक नफ़रत थी। उन दिनों को जब वह छह वर्ष का था याद करते हुए लिखता है, "मुझे कभी विश्वास

नहीं हो सका कि मैं पहली कक्षा में से पास हो जाऊँगा। प्रत्येक क्षण मन डरा रहता। पास तो हुआ ही, पुरस्कार भी मिल गया बिना मतलब। विश्वास नहीं था कि दसवीं कर जाऊँगा, प्रथम आया। तब सोचता 12 वीं कक्षा कौन पास करवायेगा? फेल होने की चिंता कभी नहीं हुई। मुझे लगता यह कक्षायें तो किसी तरह पास कर ही लूंगा, परन्तु शिखर पर पहुँच कर नीचे गिर जाऊँगा। मुझे भयंकर स्वप्न आते।"

"प्रतिदिन नौकरानी सुबह विद्यालय छोड़ने जाती। पीला रंग, पतली, आँखें अन्दर को धंसी हुई। मुझे वह अलग ढंग से डराती, कहा करती- तुम्हारे शिक्षक को बताऊँगी कि घर में तुम कैसी-कैसी शरारतें करते हो, तब देखना क्या होता है। मैं शरारती तो नहीं, हठी हूँ, आलसी हूँ, कटु स्वभाव वाला हूँ भाव वह तंग आ जाती और मास्टर की मार के लिए यह मसाला बहुत होता। बहुत डरता। परन्तु एक दिन मैंने उसे कह ही दिया- तुम्हें अच्छी तरह पता है कि मास्टर कितने महान् होते हैं। तुम्हारे जैसी अशिक्षित तथा असभ्यक लड़की उनसे बात कर ही नहीं सकती। मास्टर से तो सारा संसार डरता है। फरिश्ते भी। साहस है तो बात करके दिखाओ। गुस्से में उसने कहा- मैं तुम्हारी यह बात भी मास्टर को बताऊँगी। मैं और भी डर जाता। विद्यालय तो पहले से ही बुरा था यह नौकरानी उसे और भी बड़ा नरक बनाकर छोड़ती। तब मैं उससे माफ़ी मांगने लगता। मिन्नते करता। वह और भी डराती। मैं अंतिम दाव खेलते हुए कहता- ठीक है तुम मुझे मास्टर से पिटवाओ। मैं तुम्हें पिता जी से पिटवाऊँगा। वह ऊँची ऊँची हँसती। उसे पता था कि पिता जी फ़रांज को तो पीट सकते हैं, नौकरानी को नहीं। भयभीत होता हुआ मैं लोगों के घरों की खिड़कियों, मार्ग में आने वाले वृक्षों से चिपट जाता। उसका कमीज़ खींच लेता, बैठ जाता, वह भुजाओं से पकड़कर खींचती जाती। विद्यालय अभी दूर ही होता कि उसकी घण्टी बजने लगती। फिर हम दोनों विद्यालय की ओर तेज़ी से भागते। भागते हुए वह कहती- चलो कोई बात नहीं, आज न सही, कल अवश्य शिकायत करूँगी। उसने कभी शिकायत नहीं की परन्तु मैं हमेशा भयभीत रहता- शिकायत लगा सकती है यह।"

जुलाई 1910 में जब वह कानून में पीएच.डी. कर चुका था, तब लिखता है- सारा संसार मुझे डराने के लिए ही बना है। मामूली नौकरानी से लेकर, माता-पिता, मास्टर, रिश्तेदार, अनेक लेखक, मेरी नौकरी के समय कम्पनी के मालिक हमेशा दहलाकर रखते। मेरा कोई हमदर्द नहीं था। उसके बचपन की तस्वीरें देखो। उसकी आँखों में बेचैनी है तथा यह बेचैनी दर्शक को बेचैन कर देती है। उसे पता नहीं था कि कौन कैसे उसके साथ दुर्व्यवहार कर सकता है। काफ़्का जो चाहे कहे, वह पढ़ने में होशियार था, रट्टा लगाने में भी कुशल, बड़ी रकमें, पहाड़े, इतिहास की तिथियों का रट्टा लगाता, जब चाहो जो भी पूछ लो, बता देगा, परन्तु ऐसे जैसे मन-मस्तिष्क

से बाईपास हो उसकी स्मरणशक्ति, बिल्कुल तकनीकी। विद्यार्थी उसका सम्मान करते, मास्टरों को वह अच्छा लगता। हिऊगो बर्गमान तथा मैक्स ब्रोद की काफ़्का के साथ मित्रता विश्व की स्मरणीय मैत्रियों में से है।

विद्यालय से कॉलेज भेजने के लिए कठिन परीक्षायें ली गईं। काफ़्का पास होने वाले 24 लड़कों में से एक था, 83 बच्चे परीक्षा में बैठे थे। उसे अच्छे कॉलेज में दाखिला मिल गया परन्तु टैस्ट उसके लिए ऐसा होता जैसे प्रलय के दिन ईश्वर एक एक को खड़ा करके जीवन का हिसाब मांग रहा हो। जब वह टैस्ट पास कर लेता तो सोचता- एक बार फिर से वह जजों को धोखा देने में सफल हो गया है। परन्तु जब सभी धोखे पकड़े जायेंगे उस समय कितना दण्ड इक्ट्ठा हो जायेगा, क्या होगा तब? इस भूकम्प की ओर से मैं कैसे आँखे बंद कर सकता हूँ?

जर्मन, चैक्क भाषा तथा यहूदियों से उसी प्रकार नफ़रत करते हैं जैसे मध्य-कालीन मुगल, हिन्दुओं को। अदन के बाग का वर्जित फल इतना बड़ा अपराध नहीं था जितना यहूदियों के हाथों यीसू का कत्ल। प्रत्येक प्राकृतिक विपत्ति को यहूदियों का कुकर्म माना जाता तथा भीड़ें यहूदी बस्तियों पर हथियार लेकर टूट पड़तीं। उनकी दुकानों का केवल बाईकॉट नहीं, अपितु सामान लूट लिया जाता, **अगज़नी** होती। पलेग रोग फैल गया तो इसके जिम्मेवार भी यहूदी, कोई लड़की भाग गई, इसका कारण भी यहूदी। ऐसे वातावरण में सामान्य व्यक्ति भी एक घुटन का शिकार था, काफ़्का तो फिर काफ़्का था आखिर। मिलेना को पत्र में लिखता है- कक्षा-कमरे में मास्टर के समक्ष कोई बहाना बनाकर बचना, जीवन में अन्याय देखकर आँखें बंद कर लेना, सुखी रहने के लिए अच्छा सामान है। इसी प्रकार, जीवन यदि सुखदायी नहीं तो मृत्यु तो अपने हाथ में है, जब चाहो अनन्त अंधेरे में कूद जाओ और शांत हो जाओ। इन सबके बावजूद मैं लगातार व्याकुलता का शिकार क्यों हूँ?

माता-पिता के साथ यहूदी मन्दिर जाता। वही पुराना राग, रागिनी, वही अरदास। "पाठ नहीं, मैं पाठ करने का अभिनय करता, ऊँघता रहता। जम्हाइयाँ लेता रहता। ध्यान कहीं का कहीं होता। सारी उम्र तो नहीं मगर अब मुझे ज्ञात होता है कि मन्दिरों एवं विद्यालयों में बच्चों को इस कारण सारा दिन बिठाया जाता है ताकि वह सीख जायें कि जीवन कठोर और उदासीन है। सारी उम्र इसी तरह खामोश अनुशासन में रहना है, शांत रहना है या कम से कम शांत होने का दिखावा करना है। इस दृष्टि से प्रशिक्षण बुरा नहीं। बाग बाग हैं, जंगल जंगल है। मुझे प्रतीत होता है, मन्दिर के भीतर जाकर दिखावा करने की अपेक्षा न जाना पवित्र बंदगी है। मुझे यह नहीं पता चला कि मन्दिर की रक्षा हेतु यहूदी क्यों मरने के लिए तैयार हैं, कत्ल हो जाने के लिए बेचैन, बस मन्दिर सुरक्षित रहना चाहिए, इन्सान बचे या न बचे।

प्रत्येक यहूदी नफ़रत का शिकार होने के कारण संताप भोग रहा है। मैं यहूदी नहीं परन्तु मैं क्योंकि दुःखी हूँ इस हिसाब से यहूदी ही हुआ?"

जब अपने निर्णय स्वयं लेने के योग्य हुआ तो कभी मन्दिर नहीं गया, अरदास नहीं की। विस्मयजनक तथ्य यह है कि वह कभी मार्क्सवादी नहीं रहा। समस्त आयु उसे मार्क्सवाद ने कभी प्रभावित नहीं किया यद्यपि ये वो दिन थे जब रूस में इंकलाब की लहर चल रही थी तथा यूरोप लाल रंग में रंगा जा रहा था। कॉफ़ी हाऊस में वह कामरेडों के विचारों को सुनता, विवाद होते, परन्तु उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। हँस कर चला जाता। मित्र उसे बायाँ साहित्य पढ़ने के लिए देते। पढ़ता। पढ़ने के अतिरिक्त वह अन्य किसी बात के प्रति इतना गम्भीर नहीं था। यह वाद उसे पसंद नहीं आया। जब उसकी कुछ रचनायें प्रकाशित हुईं तो सबसे पहली गाली उसे कामरेडों ने दी। उसकी आलोचना की।

बर्गमान ने 1969 में जेरूसलम की हिब्रू यूनिवर्सिटी में काफ़्का प्रदर्शनी का आयोजन किया। उसने कविता की वह पंक्तियाँ प्रस्तुत की जिसे 14 वर्ष की आयु में काफ़्का ने लिखा था-

आता है कोई, चले जाने के लिए।
मिलाप झूठ, वियोग सत्य।

पाँच फीट नौ इंच, आठवीं कक्षा में वह सबसे लम्बा विद्यार्थी था। जवान होने तक उसका कद छह फीट हो गया था। उसकी चमकती आँखों में शर्म थी, झिझक थी, बेचैनी और स्वप्न थे। बाद में काफ़्का का मित्र बर्गमान, हिब्रू यूनिवर्सिटी का वाईस-चांसलर नियुक्त हुआ तो उसने विश्व प्रसिद्ध ***नैशनल लाईब्रेरी ऑफ़ इज़राईल*** की स्थापना की। बर्गमान का कथन है- जवानी में वह मेरा तथा मेरे यहूदी धर्म का मज़ाक उड़ाता था। दलीलों की वह वर्षा कर देता। मैं खामोश सुनता रहता, परन्तु आयु के अंतिम समय में वह यहूदी हो गया था। जो जो मुझे फेंकने के लिए कहता, अंत में काफ़्का ने उसे अपने हृदय से लगा लिया। बहुत नेक और शरीफ था, परन्तु शब्दों के प्रयोग के समय वह जल्लाद बन जाता। मुस्करा कर कहा हुआ उसका एक-एक वाक्य शरीर में से निकल जाता। पारस्परिक विरोधी विचारों को वह दोनों हाथों में पकड़ कर खेलता और लहूलुहान हो जाता।

जन्मसाखी में मैंने पहली बार अक्षर शब्द का प्रयोग हथियार के रूप में देखा। भाई मरदाना, ईश्वर की स्तुति नहीं, गुरु नानक देव जी की स्तुति में गाने लगे। महाराज ने मना किया, तो भाई जी ने कहा, मैंने देख लिया है बाबा, सृष्टि की रचना फिर से होने लगी है। ब्रह्माण्ड के पेड़े को तुम हाथों में लेकर फिर से गूंथने लगे हो। गुरु जी ने कहा- बस भाई बस। इस से आगे नहीं चलाना अन्य कोई अक्षर।

तीर, तलवार, गोली चलने के बारे में सुना था। अक्षर का चलना साखी में ही पढ़ा।

काफ़्का की कक्षा को जर्मन भाषा पढ़ाने वाली अध्यापिका परी कथायें सुनाती हुई कहती- जो बच्चे परी की कहानियों से प्रेम करेंगे, वह जीवन में कभी उदास नहीं होंगे। योद्धाओं के समान युद्ध करेंगे। काफ़्का पर इस कथन का कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

उसका कहना है- कला को कलाकार की आवश्यकता होती है, कलाकार कला के बिना अपना काम चला सकता है। बांझ स्त्री बच्चे को जन्म देने में असमर्थ है, परन्तु बच्चे की परवरिश करनी तो सीखे। लेखन मेरा प्राण है। यदि नहीं लिखूंगा तो मर जाऊँगा। मैं लिखता हूँ इस कारण ईश्वर बन जाता हूँ। मेरा लेखन मेरी प्रार्थना है। यदि कोई लिखने वाला मेज़ छीनना चाहे तो केवल हाथों में नहीं, दांतों में पकड़ लूँगा। मेज़ मेरा मन्दिर है।

उन दिनों में पराग लेखकों तथा कलाकारों का दुर्ग था। रुचिकर तथ्य यह है कि उनमें से अधिकतर यहूदी थे। स्थापित साम्यवादी लेखक भी यहूदी, साम्यवादियों के विरोधी रहस्यवादी भी यहूदी। यूरोप के किसी शहर में यही कहने पर कि मैं पराग का हूँ, बस उसे लेखक मान लिया जाता। जैसे प्रत्येक बनारस निवासी ठग ही हो।

पावल का कथन है- प्रत्येक प्रश्न में से काफ़्का दो उत्तर ढूंढता, दोनों परस्पर विरोधी। दोनों उत्तरों पर पुनः विचार करता प्रत्येक में से चार-चार प्रश्न और निकल आते जिनका कोई उत्तर नहीं होता था। वह जंगल में गुम हुआ बच्चा था।

उसे तो सामान्य बातें समझ नहीं आती थी, ईश्वर को वह कैसे समझ सकता था? परन्तु ईश्वरीय सत्ता को वही समझ सकते हैं जिन्हें सामान्य बातों की समझ नहीं होती। तलंवडी साबो में रहते पिता मेहता कल्याण राय को यही दुःख था कि उनके पुत्र नानक को साधारण बात भी समझ में नहीं आती।

23 अक्तूबर 1902 को पराग के विशाल सैमिनार हॉल में 18 वर्षीय एक युवक शाफनहावर विषय पर भाषण देने के लिए आया। यह लड़का कानून का विद्यार्थी, संगीतकार, शायर तथा उभरता उपन्यासकार था। अपने भाषण में उसने नीतशे को धोखेबाज़ कह दिया। उसी क्षण 19 वर्षीय फ़रांज काफ़्का ने इस लड़के कि इतनी खिंचाई की कि श्रोता दंग रह गये। यह लड़का था मैक्स ब्रोद। मैक्स उसी समय काफ़्का का प्रशंसक हो गया। दोनों की मित्रता सारी उम्र तक रही। आयु में छोटा होते हुए भी उसने काफ़्का की खातिरदारी के सभी कर्त्तव्यों का पालन उम्र भर किया। जब काफ़्का को कोई नहीं जानता था तब मैक्स यूरोप में प्रसिद्ध हो चुका था। काफ़्का छपने के लिए तैयार नहीं था। कहा करता- यह कोई प्रकाशित होने

योग्य रचनाएँ हैं? अत्यधिक मिन्नतों के पश्चात् एक बार ***ट्रायल (Trial)*** प्रकाशित करने के लिए काफ़का को मना लिया गया। प्रकाशक बड़ा व्यक्ति था तथा परिचय कराने वाला मैक्स कौन सी छोटी शख़्सीयत था? हस्तलिखित पकड़ाते हुए काफ़का के सामने प्रकाशक से कहा- मैं इसके सामने तुच्छ हूँ। तुम देखना इसके लेखन की रूह।

अगले दिन काफ़का अकेला प्रकाशक के पास गया, यह कहकर कि इसमें अभी दर्जनों त्रुटियाँ हैं, अभी प्रकाशित होने के योग्य नहीं, रचना वापिस ले आया। काफ़का आर्थिक संकट में था, बीमार था, अच्छी रायल्टी मिलनी थी। परन्तु नहीं तो न सही।

काफ़का की मृत्यु 1924 में हुई तथा मैक्स 1968 तक जीवित रहा। काफ़का की जब तक कोई रचना प्रकाशित नहीं हुई थी, उसकी 37 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं तथा संसद में उसे यहूदियों का सदस्य चुना गया था। कहा जाता है कि एक ही क्षेत्र में एक कलाकार की प्रसिद्धि दूसरे महान् कलाकार के लिए विष के समान होती है। मैक्स ब्रोद किसी दूसरी मिट्टी का बना हुआ था। उसने काफ़का की रचनाओं को नष्ट होने से ही नहीं बचाया, आयु के अंतिम पड़ाव तक वह कहता था- संसार मेरा सम्मान इस कारण करेगा क्योंकि काफ़का नामक एक वरिष्ठ लेखक मेरा मित्र था। पहली बार उसने काफ़का के हाथों से उसकी रचनाओं की सुरक्षा की क्योंकि काफ़का उन्हें जला देना चाहता था। दूसरी बार नाज़ीओं से उसकी रचनाओं को बचाया। मैक्स न होता, काफ़का समय की धुंध में कहीं खो जाता। जब भी रायल्टी मिलती, उसी समय काफ़का की पत्नी दोरा को दे आता जिसे निर्धनता तथा बीमारी ने घेर रखा था। विचित्र तथ्य यह है कि काफ़का तथा मैक्स की विचारधारा परस्पर विरोधी थी। मैक्स कट्टड़ यहूदी तथा ज़्यूनिस्ट लहर का प्रसिद्ध लीडर था जबकि काफ़का कर्म-काण्ड, धर्म से मुक्त, इनका उपहास उड़ाने वाला था। परन्तु मैक्स जान गया था कि काफ़का ने यहूदियों को उम्मीद दी, संसार को विश्वास दिया, यही विश्वास, भरोसा मैक्स के जीवन का केन्द्र बना। विश्वास ही धर्म है, काफ़का को पता था, मैक्स को कुछ समय बाद पता चला। काफ़का के विश्वास का यदि कोई नाम नहीं तो क्या हुआ?

नमस्तं अमजबे।।

(नमस्कार अकाल पुरुख को जिसका कोई धर्म नहीं)

जापु साहिब की इस पंक्ति के विषय में प्रोफैसर भूपेन्द्र सिंह ने कहा था, "परमात्मा से इंकारी नास्तिक धर्मों का प्रशंसक होने की अपेक्षा मैं उस ईश्वर का प्रशंसक हूँ जिसका कोई धर्म नहीं।"

जज हांस ग्रौस ने अदालत से अस्तीफा देकर 1902 में पराग यूनिवर्सिटी में प्रोफैसर की नौकरी शुरू करके आपराधिक कानून का अध्ययन शुरू किया। उसका मत था कि अपराध की अपेक्षा अपराधी को समझो। उसकी रचनायें पुलिस विभाग के लिए तथा भाषण विद्यार्थियों के लिए मॉडल बने। काफ़्का उसका विद्यार्थी था। कैसल तथा ट्रायल में इस प्रोफैसर के रूप को देखा जा कसता है। काफ़्का का मित्र, जज का पुत्र ओटो ग्रौस, मनोवैज्ञानिक बना। वह फ्रायड का विद्यार्थी था। फ्रायड गर्व से कहता था- ओटो और युंग में कहरों की मौलिकता है। अंततः ओटो मानसिक रोगी हो गया तथा युंग उसका इलाज करता रहा। पिता की मृत्यु 1915 में हो गई तथा 1918 में ओटो ने आत्महत्या की।

अंधे उपन्यासकार आस्कर बॉम को मिलने के लिए काफ़्का उसके कमरे में गया तथा झुककर सलाम किया। मैक्स ब्रोद ने बॉम को बताया, वह तुम्हें झुककर मिला था। बॉम को याद है- उसे पता था कि मैं अंधा हूँ। वह न झुकता तब कौन सा मुझे पता लगना था? परन्तु वह किसी महान् सभ्यता का राजकुमार था। देखे कोई न देखे। उसने नेकी करनी थी।

वह दो संसारों का नागरिक था। एक तो मध्यवर्गीय यहूदी व्यक्ति, सामाजिक हिंसा का शिकार, दूसरा त्यागी योगी, सभी से निर्लेप। कहा करता- नरक एवं स्वर्ग तुम्हारें लिए दो पृथक् पृथक् स्थान होंगे। मेरे लिए एक ही हैं। ब्रोद लिखता है, "उसकी उपस्थिति में किसी में इतना साहस नहीं कि घटिया, तुच्छ बात करे। सही बात या खामोशी। लोग बताते हैं कि धर्मों के संस्थापकों का लोगों पर ऐसा प्रभाव होता था। काफ़्का की संगति ने मेरे विश्वास को दृढ़ता प्रदान की है कि पैगम्बरों की उपस्थिति यकीनन वैसी ही होगी जैसी लोग बताते हैं।"

उसकी कल्पना कुछ ऐसी होती थी, "मान लो एक व्यक्ति की इच्छा है कि अनेक व्यक्ति बिना बुलाये एक स्थान पर एकत्रित हो जायें। केवल एक दूसरे से मिलें, बाते करें। कोई रिश्ता नहीं, मित्रता नहीं, एक दूसरे को परखें। जब किसी का मन हो आ जाये, जब मन हो चला जाये। कोई बोझ, कोई बन्धन नहीं। आने वाले मेहमान का स्वागत, जाने वाले को हँसते हुए विदायगी। जिस व्यक्ति के मन में ऐसे विचार उत्पन्न हुए, उसने संसार के पहले कॉफ़ी हाऊस का निर्माण किया।"

वह बहुत अच्छा तैराक था साहसी नाविक था। पानी पर होने वाली खेलों के मुकाबले उसे अच्छे लगते थे। वह स्वयं भी इन मुकाबलों में भाग लेता था।

जीवन सम्बन्धी- जैसे किसी ऊँचे स्थान से अंधेरे समुद्र में छलांग लगा दे, फिर हाथ-पैर चलाता हुआ तल के ऊपर आने का यत्न करे, फिर पानी में से सिर बाहर निकाल कर रूके हुये सांसों की शृंखला को पकड़े।

समय ऐसा था कि वकालत में पीएच.डी. करने के उपरान्त भी नौकरी नहीं मिली। बहुत समय पश्चात् ऐक्सीडेंट बीमा विभाग में क्लर्क की नौकरी मिली, वह भी सिफ़ारिश से, क्योंकि यहूदी था। उस संस्था में वह अकेला यहूदी कर्मचारी था। यह अद्‌भुत तथ्य है कि संसार की तरफ से विमुख यह जीनियस नौकरी में रुचि रखता होगा। ऑफिस में वह केवल कर्मचारी होता। उसने इतना काम किया कि सीनियर आफिसर खुश होकर तरक्की पर तरक्की देते रहे। फैक्ट्री तथा फर्मों में बढ़ती दुर्घटनायें कम करने के लिए उसने एक पॉलिसी तैयार और लागू की। इस योजना तहत फैक्ट्रियों में सुरक्षा सम्बन्धी सामान की सुविधा दी गई तथा सावधानियाँ रखने की जानकारी दी गई। उसकी यह विधि इतनी सफल सिद्ध हुई कि कम्पनियाँ मुआवज़ा देने के भार से मुक्त हो लाखों के लाभ कमाने लगीं। उसके द्वारा तैयार किए गये आंकड़ा-चार्ट तथा वार्षिक आय-खर्च बजट के विवरण तो सौ प्रतिशत ठीक होते ही, प्रत्येक वर्ष वह अग्रिम वर्ष की नवीन योजनाबंदी प्रकाशित करता। वह सचिव की उच्च उपाधि पर पहुँच गया और 15 वर्ष की नौकरी के समय अन्य किसी ने यह वार्षिक रिर्पोटें तैयार नहीं कीं। दुर्घटना के शिकार कर्मचारियों के वारिस बीमे की रकम लेने आते, मिन्नते करते, हाथ बांधते, वह इस तरह पेश आता कि दुःखी व्यक्ति कहीं ओर दुःखी न हो जाये, कहा करता- आपके पैसे आपको दे रहे हैं, कोई अहसान नहीं कर रहे। आह भरकर कहता- कितने भले हैं ये दुःखी व्यक्ति। पत्थर मार कर हमारे दफ्तर को चकनाचूर करने की अपेक्षा यह आते हैं और मिन्नते करते रहते हैं।

वह कभी पूर्णतः स्वस्थ नहीं रहा। पहले मिहदे में घाव। बाद में तपेदिक। समस्त आयु मीट नहीं खाया, शराब से दूर रहा। मिहदे के रोग के कारण उसने परहेज़ भी बहुत रखा। अनेक बातों में पागलपन की हद तक वहमी। उसका मानना था कि उबला हुआ दूध अप्राकृतिक हो जाता है, इसलिए कच्चा दूध पीना ही लाभदायक है। डॉक्टरों का कहना कि दूध के कारण ही उसे तपेदिक का रोग हुआ। उन दिनों पराग के पशुओं में तपेदिक के कीटाणु आम होते थे।

पराग के कॉफ़ी हाऊस शहर की जान थे। डाकुओं से लेकर दार्शनिक तक सभी यहाँ आते रहते। मेज़ के इर्द-गिर्द बैठे एक समूह में स्टालिन का प्रशंसक उसकी प्रशंसा करने से नहीं रूका, तो काफ़का ने कहा- दो वर्ष पहले भी इसी कॉफ़ी हाऊस में मैंने तुम्हारी बातें सुनी थीं। उस समय भूतों पर तुम्हें बहुत विश्वास था। तुम्हारा दावा था कि तुमने भूत देखा है, और दिखा सकते हो। उतना दृढ़ विश्वास आज तुम्हारा स्टालिन में है।

समकाली राजनीति में उसकी रुचि नहीं थी परन्तु जैसे-जैसे चिंतक के रूप में उसे जानने लगे, यहूदी आतंकवादियों के पीछे काफ़का का दिमाग दिखाई देने

लगा। जीवन में केवल एक बार थाने में जाकर मारेस की ज़मानत दी थी, मारेस पुलिस मुठभेड़ में शामिल था। कुत्ता भौंकने के विरुद्ध लिखी गई शिकायत तक पुलिस रिकार्ड में मौजूद है परन्तु कहीं काफ़्का का हस्ताक्षर नहीं मिला।

मैक्स ब्रोद, मेरिंक शायर को पसंद करता था परन्तु काफ़्का के लिए वह बेकार था। एक दिन ***जामुनी मौत*** काव्य संग्रह में से मैक्स ने एक कविता पढ़कर सुनाई जिसमें यह वाक्य थे- 'बड़ी सुन्दर तितलियाँ खामोश फूलों पर ऐसे बैठी हैं जैसे जादू की पुस्तकें खुली हुई हों।" काफ़्का ने हँसते हुए कहा- इसे तुम शायरी कहते हो?

पुस्तकों के लिए उसका जनून बहुत था। लाईब्रेरी जाने की अपेक्षा बाज़ार जाकर खरीदता और कहता- पुस्तक वह चाबी है जो पाठक के मन का ताला खोलती है। उसने पोलक को पत्र लिखा- वह पुस्तकें पढ़ो जो डंक मारती हों, घाव कर देती हों। पुस्तक यदि आपके मस्तिष्क में घूंसा नहीं मारती तो वह पुस्तक कैसे हुई? तुम कहते हो खुशी देने वाली पुस्तकें हों। अरे पागल, व्यक्ति बहुत खुश होते यदि पुस्तकें न होतीं। पुस्तक पढ़कर ऐसा अनुभव हो जैसे हमारा सबसे प्रिय कोई हमसें सदा के लिए बिछुड़ गया है। मानवता से दूर, एकांतवासी, हमे वनवासी बना दे। हमारे भीतर का वह समुद्र जो बर्फ बन गया है, उस बर्फ वाले समुद्र के लिए कोई कुल्हाड़ी होनी चाहिए पुस्तक। मेरा तो यही विचार है भाई।

17 वर्ष की आयु में उसने सारा नीतशे पढ़ लिया था। 40 वर्ष की आयु में, आयु के अंतिम दिनों में वह परियों की कहानियाँ पढ़ता रहता। फलाबेअर, डिकनज़, दोस्तोइवस्की, गेटे तथा किर्केगार्द उसके प्रिय लेखक रहे। फ़रांज बली ने 1907 में लिखा, "आज जर्मन साहित्य जिन ऊँचाइयों को छू रहा है वह हैनरिक मान, मेरिंक तथा काफ़्का के कारण है।"

काफ़्का की पंक्ति- जीना कठिन है, ठीक है, परन्तु न जीना भी कौन सा सरल है? मैक्स ने कहा- केवल मुझसे ही नहीं, सबसे अलग था वो। उस जैसा कोई नहीं हुआ। उसे क्या चाहिए था, शायद वह नहीं जानता, परन्तु क्या क्या नहीं चाहिए, इसका उसे पूरा ज्ञान था।

काफ़्का हँसते हुए कहता- यह जीवन बीमा भी लाखों वर्ष पुरातन मानव के वहम के समान है जिसका विश्वास था कि अगरबत्ती जलाकर, ढोल बजाकर मुसीबतों को भगाया जा सकता है।

"मैं बहुत आलसी हूँ। दावा करता हूँ सब कुछ कर सकता हूँ, परन्तु कुछ भी नहीं कर सकता। मान लो आत्महत्या करने का मन हो, तो भी न करूँ, आलसी हूँ।"

"स्त्री के साथ पुरुष इस कारण दुर्व्यवहार करता है क्योंकि वह स्त्री से डरता है। हमारे साहित्य, हमारी समस्त कोमल कलाओं पर उसका अस्तित्व है। स्त्री सर्वशक्तिमान् है, पुरुष नहीं।"

"इसे मेरी शान कहो या मेरा अहंकार, मैं केवल उसे प्रेम कर सकता हूँ जो मुझसे बहुत ऊँचा हो, जिस के पास मैं कभी पहुँच नहीं सकता।"

उसकी मासूमियत को देखकर कम्पनी के कर्मचारी कहते- काफ़्का, कम्पनी का सबसे छोटा एवं प्यारा बच्चा है। एक दिन दोपहर को वह अपने सहकर्मी के कमरे में चला गया जो दोपहर का भोजन करने लगा था- ब्रैड तथा मक्खन। काफ़्का ने हैरान होते हुए कहा- हे परमात्मा! इतना ब्रैड तथा मक्खन खा जाते हो तुम? मित्र ने पूछा- तुम कितना खाते हो दोपहर को? काफ़्का ने कहा- पानी के एक गिलास में एक नींबू निचोड़ता हूँ। कम है यह तुम्हारे ख्याल अनुसार?

दफ्तर के सफाई सेवकों के बच्चों को टॉफियाँ, पेस्ट्रियाँ देते हुए औरतों से पूछता- तुम बुरा तो नहीं मान रही कहीं? बचपन में पिता जी को अपने नौकरों को गालियाँ देते हुए देखता तो वह नौकरों को सलाम करके पारिवारिक पाप धोने का प्रयास करता।

जब गम्भीर कला-चिंतकों में उसके यश की सुगन्ध दूर-दूर तक पहुँची तो उसकी टिप्पणी थी- जो पुस्तकें मुझे जीने नहीं देती थीं, वह पुस्तकें अब मुझे मरने नहीं देती।

लम्बे समय तक बीमार रहने पर वह कहा करता- डॉक्टरों पर मुझे कतई विश्वास नहीं। डॉक्टर मुझे उस समय सही लगते हैं जब कहते हैं कि इस बीमारी का कुछ पता नहीं लग रहा। मुझे डॉक्टरों से सख़्त नफ़रत है। मेरे दो छोटे भाइयों को इन डॉक्टरों ने ही मारा है। पता ही नहीं चला कि उन्हें क्या रोग था। यह मत कहो कि मैं शोकग्रस्त हूँ। सुखी भी नहीं, दुःख-सुख से मुक्त भी नहीं। अब मुझे दुःख के कारण का बोध हुआ है, वह यह है कि मुझसे ठीक ढंग से लिखा नहीं जाता, वैसे तो लिखा ही नहीं जाता। जब लिख लेता हूँ, तो वह पढ़ने योग्य नहीं होता। मेरी लिखावट कुछ ऐसी होती है जैसे पक्के अपराधी का मन अचानक हत्या करने का हो और वह कर दे, वह भी उस व्यक्ति का कत्ल जिसे वह जानता तक नहीं।

"लिखते समय एक शब्द को मैं घुमा फिरा कर देखता हूँ। शब्द भी मेरे हाथों में आने से पहले मेरी तरफ देखते हैं। जब वाक्य पूरा हो जाता है, मुझे अकसर कंपकंपी शुरू हो जाती है क्योंकि भाषा को मैं अन्दर से देख चुका होता हूँ, निर्वस्त्र, फिर मैं लज्जित होकर जल्दी ही नज़रें दूसरी तरफ घुमा लेता हूँ।

"पाठक इस प्रकार मेरी रचनायें पढ़ेंगे धीरे-धीरे, जैसे कब्रिस्तान में टोपी उतार कर लोग अपने पूर्वजों की शिलाओं पर लिखे वाक्यों को पढ़ते हैं।

"पैगम्बर मूसा चालीस वर्ष यहूदियों को मरुस्थलों में पता है क्यों चक्कर कटवाता और भूखे रखता रहा? फ्राऊन द्वारा दिए माँस को खा-खाकर वह मोटे हो गये थे। चर्बी कम करने के लिए वह इधर-उधर घुमाता रहा। जब यहूदी मेरे जैसे पिंजर हो गए तब कैनान में जाने दिया। मैं भी फ़लस्तीन जाने के योग्य हो गया हूँ अब।"

"हीन ने जर्मन भाषा को बदनाम कर दिया है। बदतमीज़ ने अंगी की गांठ खोल दी है। अब हर कोई इसकी छाती पर हाथ रखना चाहता है।"

यहूदियों से मेरा क्या रिश्ता? मेरा तो स्वयं से कोई रिश्ता नहीं रहा।

"मुझसे मेरी कलम ने सब अभिलाषाओं को छीन लिया, खाना-पीना, दर्शन यहाँ तक कि संगीत भी। इतनी मुझमें शक्ति नहीं थी कि मैं सभी काम कर सकूं। लेखन पर एकाग्र होना आवश्यक है। मेरी इच्छा से कुछ नहीं हुआ, सब मेरे लेखन की इच्छा से हुआ। लेखन मेरी ज़िन्दगी है। अन्य बाकी सभी वस्तुएँ जब छिन जायें, वह ज़िन्दगी वैसे भी ज़िन्दगी कैसे रही?

ब्रोद उसे गेटे की हवेली दिखाने के लिए वईमार ले गया। शिल्लर भी यहीं रहा था। गेटे के वस्त्र, उसके द्वारा प्रयोग की जाने वाली वस्तुओं को देखकर काफ़का उदास हो गया। ब्रोद से कहा- क्यों लाया मुझे यहाँ। रचनाओं में वह जीवित महकता घूमता दिखाई देता था। यहाँ तो मुझे मेरे मृत बाबा की उदास वस्तुएँ ही दिखाई दीं बस।

अपने प्रकाशक को लिखा, "यदि तुम्हें लगे कि प्रकाशित होने योग्य है तो प्रकाशित कर देना। मैंने बहुत सावधानी से काम किया है। त्रुटियाँ तो हैं अभी भी, परन्तु कोई निपुण उस्ताद भी पकड़ नहीं सकता। अपनी कमियों को छिपाने का नाम कला है। जितना बड़ा कलाकार उतना बड़ा ठग।"

उसकी सखी फेलिस ने जब काफ़का के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा तो उसने ऐसे मना किया, "क्या करोगी मुझसे विवाह करके तुम? शाम को तीन बजे दफ्तर से आता हूँ। खाना खाकर सो जाता हूँ। फिर एक घंटा सैर करता हूँ। इसके बाद आधी रात से भी अधिक समय तक लिखता रहता हूँ। कभी कभी तो लिखते हुए सुबह हो जाती है। सहन कर सकोगी यह सब? लिखते समय मैं एकांत चाहता हूँ, किसी साधु जैसा एकांत नहीं, मुर्दे जैसा एकांत। मृत्यु तो कुछ भी नहीं, लिखना, मृत्यु से भी गहरी नींद है। मुर्दे को कब्र से बाहर खींचना कितना कठिन कार्य है,

उसी प्रकार मैं भी स्वयं को मेज़ पर से खींच नहीं सकता। बिल्कुल नरक है यह, पागलपन। यही मुझे अच्छा लगता है, यही मेरी किस्मत है फेलिस।"

प्रथम विश्वयुद्ध प्रारम्भ हो गया। मैक्स लिखता है- युद्ध हमें पागलपन प्रतीत होता था। हम बिगड़े लड़कों की पीढ़ी थी वह जो 50 वर्ष अमन में रहने पर यह सोचती थी कि युद्ध अब कभी नहीं होगा। मानवता का संताप देखने के लिए हम अंधे हैं। हम में से किसी की भी रुचि राजनीति में नहीं थी। वैगनर का संगीत, यहूदी ईसाई विरासत, इंम्प्रैशनिस्ट पेटिंग के ऊपर चर्चा होनी हमारे लिए आवश्यक थी। रातो-रात ही भूकम्प आ गया। हम सभी मूर्ख सिद्ध हुए। हम तो युद्ध के विरोधी भी नहीं थे। युद्ध का विरोधी व्यक्ति यह तो जानता हे कि युद्ध होगा तो उसका विरोध करना है। हम पूर्णतः विवश एवं भयभीत थे।

काफ़्का पर इसका कोई असर नहीं हो रहा था, जैसे कुछ हो ही नहीं रहा। मैक्स ब्रोद संसार को किसी भी तरह बचाने के लिए चिंतित था। काफ़्का स्वयं को बचाना ही अच्छा समझता था, वह स्वयं को बचा रहा था, अर्थात् निरंतर लिख रहा था।

मँहगाई बढ़ रही थी। परन्तु इसका भी उस पर कोई असर नहीं था। तीनों बहनें तथा माँ राशन कपड़े भेजती रहती थीं। वेतन से अच्छा निर्वाह हो रहा था। दुकानों के आगे लम्बी लाईनें लगी होतीं। एक एक घंटे के बाद वस्तुओं का मूल्य बढ़ रहा था। कभी कभी वह लम्बी लाईन में पीछे खड़ा हो जाता, कुछ खरीदने के लिए नहीं। क्योंकि अन्य लोग कष्ट झेल रहे थे, उस कष्ट को बांटने के लिए वह भी घंटों वहीं खड़ा रहता।

जर्मन पाठकों तथा आलोचकों का एक ही मत है कि यदि काफ़्का को पढ़ना है तो जर्मन सीखो। उसकी भाषा की कमी, संक्षिप्तता, सीधा हमला, जो कहा गया, अर्थ उसके विपरीत, शब्दों का जोड़ तथा फिर उनका उच्चारण, इसका अनुवाद नहीं हो सकता। ट्रायल नॉवल का प्रथम वाक्य है- किसी ने निश्चय ही चुगली की है, क्योंकि कुछ भी गलत न करने के बावजूद पुलिस उसे सुबह ही बंदी बनाकर ले गई।

इस एक वाक्य से वह बता देता है कि वर्तमान युग की प्रत्येक सुबह प्रलय लेकर आयेगी। निर्दोष व्यक्तियों को लटका दिया जायेगा जिन्हें अंत तक पता नहीं चलेगा कि क्या हो रहा है।

पराग में पागल हो चुके जंगीय सिपाहियों का कैम्प लगा। वर्ष 1916 में 4 हज़ार सिपाही मानसिक रोग के शिकार थे। कम्पनी की ओर से काफ़्का को इनके बीमे के केस तैयार करने के लिए भेजा गया था, परन्तु वह साथ ही साथ उनका इलाज

भी करता। उसने दानी लोगों को लिखकर प्रार्थना की तो धन की कमी न रही। सरकार की ओर से उसे पुरस्कार देने का निर्णय किया गया।

तपेदिक उसके फेफड़ों को खा रही थी। बुखार रहने लगा। खांसता तो मुँह से खून निकलता। वह छोटी बहन ओटला के गाँव चला गया जहाँ बिजली की सुविधा भी नहीं थी। यहाँ उसे पसंदीदा वातावरण तथा स्वास्थ्यवर्धक भोजन मिला। इन दिनों को वह अपने जीवन के सबसे सुखी दिन मानता है। ओटला कहती- बीमारी उसे यहाँ ले आई थी नहीं तो वह कब पराग छोड़ता। यहाँ वह टालस्टाय, हरज़न तथा किर्केगार्द को पढ़ता रहता।

लिखा- मैं इस कारण बीमार नहीं हुआ कि जीवन में प्रत्येक दृष्टि से फेल हो गया। मैंने बड़ा काम शुरू किया है। धरती, हवा तथा कानून प्रसंगहीन हो गए थे, मैंने नये रूप में इनका निर्माण करना चाहा। मैं सृष्टि का आदि हूँ। मैं सृष्टि का अंत हूँ। डायरी का वाक्य- विवाह, पिता से स्वतन्त्रता का नाम है। फ़लस्तीन, मृत्यु से स्वतन्त्रता है। बीमार होने के कारण फलस्तीन नहीं जा सकता, इस कारण नक्शे के ऊपर अपनी अंगुलि घुमाता हुआ मैं पराग से फ़लस्तीन पहुँच जाता हूँ।

"मृत्यु की ओर जाने वाले मार्ग पर इतने स्टाप क्यों बनाये गये?

"मेरे फेफड़े घायल हैं। सांस लेते हुए दर्द होता है। मुझे चांद पर चले जाना चाहिए जहाँ हवा नहीं।

मिलेना को लिखा हुआ पत्र- दोपहर के पश्चात् आधे दिन तक शहर का चक्कर लगाया। शहर यहूदियों के विरुद्ध नफ़रत में बह रहा है। 'गंदा खून', यहूदियों के लिए प्रयुक्त होते हैं ये शब्द। इतनी नफ़रत में से निकल कर कहीं और जाना ही ठीक होगा। काक्रोच को जितना चाहे भगाओ, फिर से रसोई में। इसी प्रकार मैं हूँ यहाँ- यही है मेरा साहस। खिड़की में से बाहर दिखाई दे रहे घुड़सवार सिपाही, हाथों में बंदूके। दूसरी ओर हथियारबद्ध दंगाकारियों के काफ़िले...।

"जो होना है वह होगा। जो हुआ, वही होना था।"

18 दिसम्बर 1920 को उसे मादलेरी सैनेटोरियम में दाखिल करवाया गया। यह कोई अस्पताल नहीं, पहाड़ी पर बना सुन्दर विश्राम घर था। जिन रोगियों का कोई इलाज नहीं था वह आराम से अंतिम सांसे ले सकें, इसका बस यही उद्देश्य था।

यहाँ से उसने मैक्स को लिखा- मुझे पता चला है कि तुम मिलेना लड़की को मिलने जाओगे। अच्छी बात है। यह खुशी अब मुझे कभी नहीं मिलेगी। मेरे बारे में कुछ पूछे तो ऐसे बातें करना जैसे कोई किसी मृत व्यक्ति की बात सुनाया करता है। विगत समय की दास्तां।

यहाँ 17-18 वर्ष का एक युवक उससे मिलने आया। उसने काफ़्का की रचनाओं को पढ़ा था। कभी हँसने लगता, तो कभी रोने। काफ़्का के लिए पुस्तकों का एक बण्डल लेकर आया तथा सेबों की एक टोकरी। काफ़्का ने लिखा- कहता था बहुत खुश हूँ। परन्तु उसके चेहरे के रंग पल पल बदलते। डर लगता। किस शैतान की आग निगल रहा है यह लड़का?

यह भविष्य का प्रसिद्ध शायर गुस्ताव जानुख था जिसने 25 वर्ष पश्चात् *काफ़्का के साथ गुफ्तगू* पुस्तक लिखी। इतनी बातें, कि दो जिल्दें बन गईं। काफ़्का की आग को ही निगला था उसने।

अकेले कैस्सल को आधार बनाकर हज़ारों लेख और पुस्तकें लिखी गईं। अनेक दृष्टिकोण नज़र आये। मैक्स अनुसार यह रूहानी बख्शिश का चिह्न है। किसी ने कहा, यह नौकरशाही का चिह्न है। किसी ने जूडाइज़्म, किसी ने राजसत्ता, किसी ने एकाकीपन का अनुभव तो किसी ने यीसू मसीह की तरफ जाने वाला मार्ग बताया। फ्रायडवादियों तथा समाजवादियों ने इसकी व्याख्या अपने अलग दृष्टिकोण से की। सात्र ने इसे अस्तित्ववाद का शाहकार बताते हुए कहा कि मूल्यहीन, बे-रंग संसार में भटके हुए मनुष्य का संकट है कैस्सल। सिमोन बेवुअर ने लिखा- प्रारम्भ में तो पता ही नहीं चलता कि उसकी रचनायें मन में क्यों कशिश उत्पन्न करती हैं। काफ़्का हमें हमारे मन की बातें सुनाता है, ईश्वर गैरहाज़िर हो गया है, मानव इतना बलवान नहीं कि अपना चिराग स्वयं बने। मुक्तिदाता की तलाश में शापित रूहें भटक रही हैं। पैगम्बर पिता ने आकाश से कानून उतारना छोड़ दिया है। परन्तु कानून तो उतारा जा चुका है, नवीन युग अनुसार हम इसका अर्थ करने की क्षमता खो चुके हैं। आज का दर्शन इसकी व्याख्या करने के योग्य नहीं है। इतना अकेला, इतना गुप्त है कि हमारी भाषा इसके अर्थों का भार नहीं उठा सकती, परन्तु इस बात का मुझे अवश्य पता है कि इसे न माना गया तो हम तबाह हो जायेंगे यकीनन। भय तथा उदासी व्यापक है।

जार्ज लूकाच ने उसकी सख़्त आलोचना की। कहा- काफ़्का की रचना फफूंद युक्त प्रयोग सिद्धान्त है। यह लूकाच की पार्टी की घोषणा थी इस कारण न किसी ने उसकी बात को नोट किया, न ही इस पर किसी ने चर्चा करना उचित समझा।

1963 में पराग में जर्मन लेखक कॉनफ्रैंस हुई, जिसमें कहा गया कि वह गुम हो चुकी मानवता का पिता था। भटकन का पैगम्बर।

काफ़का का वाक्य- एक बंद दरवाज़े के चौकीदार के रूप में मैंने समस्त आयु पहरा दिया कि कोई इसे खोल न दे। किसी को मैंने खोलने नहीं दिया, न ही स्वयं उसे खोला। अपने आप तो इसने खुलना ही नहीं था। मेरा उद्देश्य पूरा हुआ।

राजनीति पर व्यंग्य- समाचार पत्र न पढ़ो तो खबरें कैपसूल बन बन कर आती हैं। विश्व युद्ध शिखर पर है। सरकार कह रही है कि देश में पूर्ण शांति है, इतनी शांति तो युद्ध प्रारम्भ होने से पहले भी नहीं थी। सरकार प्रजा को ऐसे खतरों को दूर कर रही है जो हैं ही नहीं तथा जिनके विषय में लोग चिन्तित नहीं। मँहगाई गिलहरी के समान चढ़ रही है, इस विषय में सरकार खामोश है।

उसने अपनी वसीयत तैयार की। समस्त रचनायें मैक्स ब्रोद को सौंप दी जायें तथा मैक्स इन्हें आग लगा दे। उसकी इस वसीयत को देखकर मैक्स हँसते हुए कहता था, "काफ़का इतना चतुर तो था ही कि रचनायें उस मित्र को सौंपने के लिए कह गया जिसे जानता था कि वह नष्ट नहीं करेगा। मैं तो उसके एक एक वाक्य को आइत के समान माथे से लगाता हूँ।" जब मैक्स ने काफ़का की मृत्यु के पश्चात् उसकी रचनाओं को प्रकाशित करना शुरू किया तब यूरोप में इस बात को लेकर अत्यधिक विरोध व्यक्त किया गया कि मृतक की वसीयत को माना क्यों नही गया? मैक्स विरुद्ध गाली निन्दा के अंगारे बरसाते लोगों से उसकी पत्नी दोरा ने कहा- काफ़का ने कुछ लिखा, इसका पता आपको मैक्स से ही चला। हीरों की खान मैक्स के कब्जे में है। संसार सदैव उसके दर्शन करेगा।

बहन ओटला से पत्र में कहा- जीवित रहा तो फलस्तीन जाऊँगा। वैसे तो यह कठिन ही है। हिब्रू भी मुझे अधिक नहीं आती। फिर भी, चिपके रहने के लिए कोई उम्मीद तो अपने पास रखनी आवश्यक है।

व्यापक चिन्तन को सूक्ष्म सौन्दर्य कला के साथ भासित कर जर्मन भाषा में उसने अपनी कला के यश को प्रसारित किया, परन्तु अंतिम दिनों में, जब वह युद्ध के पश्चात् भी यहूदियों का कत्ल होते देखता तो उसे लगा कि हिब्रू का सजीव होना अनिवार्य है। "जर्मन तो ऐसे हैं जैसे कि मैं झूले में से किसी अनजान बच्चे को चुरा लाया हूँ और घोषणा कर दी कि यह मेरा है। मेरा क्या है इसमें।"

नष्ट हो चुकी प्राचीन भाषा को पुनः सजीव करने का कार्य 1885 में जन्म लेने वाले लिथवानी यहूदी, अलीज़र बिन यहूदाह को मिला। उसने समस्त आयु इस पर कार्य करके वर्तमान हिब्रू का कोश को योरोशलम में तैयार किया। वर्ष 1903 में जन्म लेने वाली उसकी छात्रा पुआ बिन तोविम की मातृ भाषा हिब्रू थी, जिसे अलीज़र ने शाण पर लगाया। वह पराग पहुँची तो हिऊगो बर्गमान उसकी योग्यता देखकर दंग रह गया तथा हिब्रू विद्यालय में उसे शिक्षिका बना दिया। काफ़का का

घर बर्गमान के निवास स्थान के समीप था। वह लड़की सप्ताह में दो दिन काफ़्का को हिब्रू पढ़ाती थी। इसी लड़की से प्रेरित होकर बर्गमान ने योरोशलम में हिब्रू विश्वविद्यालय की स्थापना की तथा स्वयं वाईस-चांसलर की उपाधि पर कार्य किया। यह लड़की बताती है कि काफ़्का जैसा अन्य कोई विद्यार्थी उसने नहीं देखा। लिखती है, "मेरे पहुँचने से पहले वह हिब्रू शब्दों की एक लम्बी सूची तैयार रखता जिनकी पृष्ठभूमि के विषय में जानना होता था। परन्तु फेफड़े तो उसके नष्ट हो चुके थे। अनेक बार तो इतनी इतनी देर तक खांसता रहता कि पढ़ाते समय में मुझे बीच में ही छोड़ कर वापिस आना पड़ता। जाते समय मेरी तरफ अपनी बड़ी बड़ी काली आँखों से ऐसे देखता मानो कह रहा हो - एक शब्द और बताने के लिए तो कुछ देर रूक जाओ, फिर एक ओर, फिर एक ओर। उसे यह भ्रम हो गया था कि केवल हिब्रू भाषा ही उसके दुःखों का इलाज है। माता-पिता के पास रहता था, माँ धीरे से दरवाज़ा खोलकर मुझसे कहती- आराम करने दो इसे अब। उसकी प्यास अमुक थी। वह शीघ्रता से अच्छा सीख रहा था, इतनी अच्छी तरह कि अंत में हिब्रू भाषा में लिखित ब्रैन्नर उपन्यास को पूरा पढ़ लिया।

19 वर्षीय यह सुन्दर लड़की येरोशलम तथा यूरोप, गणित पढ़ने तथा हिब्रू पढ़ाने के लिए गई थी परन्तु यूरोप का इसके मन पर बुरा असर पड़ा। यूरोप उसे कामुकता में ग्रस्त हुई अश्लील सभ्यता प्रतीत हुआ। अपनी आयु से अधिक परिपक्व थी ये लड़की। काफ़्का से कहती - तुम जब ठीक हो जाओगे तो मैं तुम्हें पूर्वजों के देश योरोशलम लेकर जाऊँगी।

अप्रैल 1923 में हिऊगो बर्गमान योरोशलम से पराग आया। काफ़्का से कहा- मेरे साथ चलो। सफ़र में मैं तेरा सहारा बनूंगा वहाँ तुम मेरी कोठी में रहना, येरोशलम हिब्रू यूनिवर्सिटी में। अक्तूबर में चलेंगे।

सफ़र करने की क्षमता उसमें है या नहीं यह जांचने के लिए वह बर्लिन गया। वहाँ सागर किनारे अनाथ यहूदी बच्चों का कैम्प था। पूर्वी यूरोप के अनाथ बच्चों का पालन पश्चिमी यूरोप कर रहा था। वह घंटो उनके गीत, किलकारियाँ सुनता, खेले देखता। बच्चों को छोटे-छोटे उपहार, खाने-पीने की वस्तुएँ देता। यहाँ बच्चों के साथ उसने सैबथ्थ (पवित्र यहूदी त्योहार) मनाया। जीवन में पहली बार उसने अपनी इच्छा से कुछ धार्मिक रस्मों को निभाया। यहीं उसे एक दिन दोरा दायमंत मिली जो समस्त आयु उसके साथ रही। दोरा केवल दसवीं तक पढ़ी हुई थी, इतना भी जबरदस्ती ही पढ़ सकी थी क्योंकि यहूदी रबई (पुजारी) पिता लड़कियों की शिक्षा के विरुद्ध था, हिब्रू तो बिल्कुल ही नहीं पढ़नी। पैगम्बर के कथनों को समझना स्त्रियों के वश की बात नहीं है, उसका यह मानना था। परन्तु 19 वर्षीय यह लड़की

हिब्रू तथा यिदिश भाषा में अद्भुत कुशलता हासिल कर गई। काफ़का के जीवन में अनेक स्त्रियाँ आई थीं परन्तु उसकी पत्नी होने का अधिकार केवल दोरा को मिला।

अत्यधिक दुःखी जीवन बिता रहे काफ़का का अंतिम तिनका दोरा ही बनी। अगस्त में जो कमरा 20 क्राऊन का लिया, वह सितम्बर में 70 क्राऊन का तथा अक्तूबर में 180 क्राऊन का हो गया। बिल न भर पाने के कारण बिजली और गैस का कनैक्शन काट दिया गया। मिट्टी का तेल और स्टोव लाया गया। तेल न होता तो मोमबत्ती पर ही ब्रैड गर्म करके खा लेते थे। काफ़का कहता- दोरा हम येरोशलम जाकर रेस्तरां खोलेंगे। तुम खाना तैयार करना, मैं वेटर का काम करूँगा।

दोरा हँसने लगती। उसे पता था कि यह शमा की अंतिम चमक है। अंधकारमयी भविष्य का उसे पता था, परन्तु वह एक स्त्री थी। जीवन तथा आशा को जितनी अच्छी तरह से एक स्त्री पकड़ सकती है, अन्य कोई नहीं। सुन्दर, साहसी तथा समझदार एक लड़की, मृत्यु की शय्या पर लेटे एक रोगी व्यक्ति के साथ अपना जीवन निभा रही थी। उसका निश्चय था कि वह मृत्यु को पछाड़ देगी। चमत्कार में विश्वास रखती थी। अरदास में उसकी अत्यधिक आस्था थी। कहती- काफका ने मेरा हाथ पकड़ा है। गर्व करने योग्य पैगम्बर की बेटी हूँ, मझधार के बीच नहीं छोड़ूंगी।

दोरा से जीवन में एक ही गलती हुई। काफ़का ने उसे कहा- मेरी डायरियों को जला दो। उसने काफ़का की आँखों सामने उसकी डायरियों को राख बना दिया। समस्त आयु इस बात का पश्चात्ताप रहा परन्तु कहा करती- उस समय मेरी आयु इतनी नहीं थी कि इंकार कर सकूं। क्या अच्छा है, क्या बुरा, मुझे क्या पता था। वह मेरा पति था। मैं इंकार कैसे कर सकती थी।

बाद में अनेक डायरियों एवं रचनाओं को उसने संभाल लिया था। परन्तु द्वितीय विश्व युद्ध के समय नाज़ीयों ने इन्हें अपने अधिकार में ले लिया फिर वह कभी नहीं मिल सकीं। काफ़का की मृत्यु के पश्चात् वह रूस चली गयी। बची हुई रचनायें, तस्वीरें तथा निशानियों पर रूस की खुफिया पुलिस ने कब्ज़ा कर लिया जिसका अंत तक कोई सुराग न मिला। इस लड़की का जीवन लफ्ज़-ब लफ्ज़ मृत्यु को पराजित करने की दास्तां है। जीवन के अटल निर्णय के कारण वह येरोशलम जाने में कामयाब हो गई।

काफ़का का स्वास्थ्य और अधिक भी खराब होता गया। *'जोसफिन द सिंगर'* सैनौटोरियम में लिखी उसकी अंतिम कहानी है। तपेदिक उसकी श्वास-नाली तथा गले तक पहुँच चुकी थी। पानी पीना भी दुश्वार हो गया था। मैक्स ब्रोद प्रतिदिन आता, सारा दिन बैठा रहता। काफ़का कहता- "एक ही बार में एक बड़ा पानी का गिलास पी लेता था, पिता जी के साथ बीयर का बड़ा कप पीता था।" कपड़ों सहित

उसके शरीर का भार 45 किलो रह गया था। कलियों से भरी शाखाओं को कांच के मर्तबान में पानी डालकर दोरा रोगी के सामने रख देती तो वह कहता- कलियाँ मरतीं मरतीं भी कितने आराम से पानी पीती रहती हैं। मरता हुआ व्यक्ति पानी पी सके, यह नहीं हो सकता।

दोरा की तरफ देखते हुए कहता- दर्द बहुत हो रहा है। तुम इतना काम करती रहती हो, देखो जान, यह दर्द कुछ अलग किस्म का है। परन्तु ठीक है। मेरे माथे पर अपना हाथ रख इसे शांत करो।

उसने डॉक्टरों से कहा- अब अंतिम इंजैक्शन लगा दो। गुस्से में उसने अपने डॉक्टर मित्र से कहा- तुम मेरे पिता, जज तथा ईश्वर नहीं हो। यदि इस समय तुमने मुझे नहीं मारा तो तुम्हें कातिल होने का दण्ड मिलेगा समझे? दैवी कानून मेरे हक में हैं, मैं जानता हूँ। देर मत करो।

डॉक्टर ने मारफ़ीन का इंजैक्शन लगा दिया। आँखे बंद होनी शुरू गई। दवाई असर कर रही थी। डॉक्टर ने उसके सिर को पकड़ लिया। काफ़्का को लगा- उसकी बहन ऐली है, कहा- दूर होकर बैठो, ऐली, पीछे हटो।

छूत का रोग होने के कारण बहनों को दूर बैठने के लिए कहा करता था। डॉक्टर चाहते थे कि दोरा इस समय बाहर चली जाये। परन्तु वह जाने वाली नहीं थी। डॉक्टर ने कहा- दोरा जाओ, जल्दी से काफ़्का के माता-पिता को तार भेज दो। वह चली गयी। बेहोशी में काफ़्का ने कहा- आप मुझसे दूर मत जाओ। मैं जाऊँगा।

वापिस आई तो रोगी जा चुका था। दोरा गुलदस्ता लेकर आई थी। फूल को उसके माथे पर लगाते हुए कहा- कितने सुन्दर फूल हैं, देखो काफ़्का। चमत्कार हो गया। थोड़ा सा सिर उठाकर फूल सूंघे। बायीं आँख खोलकर दोरा की ओर देखा। होंठो पर मुस्कान थी, कुछ कह नहीं पाया। दोरा ने उसकी छाती पर कान के भार अपना सिर रख दिया। बहुत मद्धम, दिल की धड़कन। अंतिम धड़कन और अंतिम टूटती सांस को केवल दोरा ने सुना, दोरा ने देखा कहा, "तेरे दुःख खत्म काफ़्का, मेरे दुःख शुरू।"

डॉक्टर ने मैक्स ब्रोद को लिखा- जिसने दोरा को नहीं देखा, कैसे जानेगा, प्रेम क्या होता है। मैक्स ने लिखा- जब समय आया कि जीवन एवं मृत्यु में से किसका चयन करना है, उस समय दुविधा में पड़ने में वाला व्यक्ति नहीं था काफका, मैं यह बहुत समय से जानता हूँ।

उसे पराग में दफ़नाया गया, 'चुड़ैल अपने पंजों में से छोड़ेगी नहीं।' यहाँ पाँच भाषाओं में उसकी जीवन कथा संक्षिप्त रूप में लिखी हुई है। जिस पराग में उसकी कब्र बनी, वहीं उसकी रचनाओं पर पाबन्दी लगा दी गयी। अर्नस्ट पावेल

लिखता है- काफ़का का संसार अनन्त रोशनी के सामने अंधा हो जाता है। उसकी रचनाओं ने प्रमाणित विश्वास की जड़ों को इस कारण नहीं हिलाया कि उसे सत्य प्राप्त हो गया था। वह वो व्यक्ति था, सत्य नहीं मिला तो उसने कांच के साथ भी समझौता नहीं किया। उसके अन्तःकरण में तथा पाक साफ लेखन में इन्सान को इन्सान होने का संताप स्पष्ट दिखाई देता है।

काफ़का के कुछ कथन

- मेरा जीवन जिन सुगन्धों एवं मिठास से पूर्ण था, संसार में किसी को वो मिठास नसीब नहीं हुई। मेरा अंत जितना कड़वा होगा, वह कड़वाहट किसी के हिस्से में नहीं आयेगी।
- मुझे कोई समझ नहीं सका। जो मुझे जान जायेगा, दावा करेगा उसने ईश्वर को जान लिया है।
- एक पड़ाव ऐसा होता है जहाँ से वापसी सम्भव नहीं। इस पड़ाव पर पहुँचना ही होगा आखिर।
- कहाँ आ गया मैं? यहाँ सांस कुछ अलग प्रकार की है, यहाँ तारे की किरण सूर्य की किरण से अधिक तीखी और ताकतवर है।
- 'यहाँ मैं आराम से लेटता हूँ। सुख अनुभव करता हूँ। बहुत मीठी नींद सोता हूँ। पूर्णतः सन्तुष्ट हूँ, प्रत्येक इच्छा पूरी हुई क्योंकि मेरा कोई ठिकाना है,' अपने बिल में लेटा कीड़ा यही सोचा करता है।
- सामने प्रेम हो या मृत्यु, केवल दो अवसरों पर तुम स्वयं को जान पाओगे। ये दो अवसर, एक ही अवसर है वास्तव में।
- पुस्तक का वास्तविक तथा अंतिम सफ़र उसके लेखक की मृत्यु के पश्चात् प्रारम्भ होता है।
- क्या बन जाओगे, यह देखने की बजाये यह देखो, तुम हो क्या।
- सत्य, अनन्त अंधेरा है। पहले गहराई में छलांग लगाओ, गहरे उतरो, फिर तेज़ी से हाथ-पैर चलाकर ऊपर आओ तथा हांफते हांफते, मृत्यु विरुद्ध संघर्ष करते हुए, गुम हुई सांस ढूंढो और पकड़ो। मृत्यु के आलिंगन में से निकलो तो धरती की वस्तुएँ ओर भी चमक उठेगी।
- चढ़ते जाओगे तो सीढ़ी के डण्डे ऊपर की तरफ और जुड़ते जायेंगे। जादू की तरह नये नये डण्डे जुड़ते जायेंगे।
- छल तुम्हें इस प्रकार का अपराधी न बना दे कि तुम्हें विश्वास हो जाये कि तुम छल से सब कुछ छिपा सकते हो।

- इंकलाब का ज्वारभाटा उतर जाता है तो पीछे नौकरशाही की झाग बची रहती है। लालफीते, घायल मानवता की जंजीरें बन जाते हैं।
- चूहे ने कहा- अफ़सोस संसार कितना छोटा हो रहा है। प्रारम्भ में यह इतना बड़ा था कि डर लगता था, भागते भागते मैं हांफ जाता। मैं खुश हुआ कि धीरे-धीरे दीवारें सरकती हुई समीप आ रही हैं, परन्तु बाद में इतनी समीप आ गई कि मैं एक कोने में फंसकर बैठा हूँ। रास्तें में बाधा देखकर रूका तो आवाज़ आई, दिशा बदल। मैं उस तरफ भागा जिधर से आवाज़ आई थी। वहाँ बिल्ली खड़ी देखी।
- कौवों का दावा है कि एक अकेला कौवा स्वर्ग को नष्ट कर सकता है। ठीक है, कर सकता है। परन्तु कौवों को इस बात का नहीं पता कि स्वर्ग कहते ही उस जगह को हैं जहाँ कौवे पहुँच नहीं सकते।
- मेरे भीतर कोई अमर अविनाशी शक्ति है- इस विश्वास के बिना मानव जीवित नहीं रह सकता।
- पूर्ण प्रतीक्षा शानदार है। जिसकी प्रतीक्षा है, वह परोक्ष है, अत्यधिक दूर, पर्दे के पीछे। न दुष्ट है वह, न दुविधा में है, न बहरा है। सही नाम लेकर सही शब्द का उच्चारण करोगे तो बुलाने से आ जायेगा। जादू का यही तत्व सार है जो सृजन नहीं करता, बुला लेता है।
- जीवन को भुजाओं में भरना आ गया जिसे, वह मौत से नहीं डरेगा।
- व्यक्ति का दुःखदायक चेहरा बच्चे का मूर्च्छित आनंद होता है।
- कमरे से बाहर जाने की आवश्यकता नहीं। बैठो रहो और सुनो। सुनो भी न, प्रतीक्षा करो। प्रतीक्षा भी न करो बेशक, बस खामोश तथा शांत हो जाओ। संसार तुम्हारे सामने खड़ा होकर घूंघट उठाने की याचना करेगा। इससे आगे अन्य कोई रास्ता नहीं। आनंदित होकर संसार तुम्हारे कदमों पर झुकेगा।
- है कोई वस्तु ऐसी, जिसका हिसाब नहीं हुआ।
- मिलेना को पत्र में- तेरा मेरा जीवन यदि दुःखदायी न होता तो हम कितने शर्मिंदा होते मिलेना।
- मुझे अपनी पिछली गलतियों का अफ़सोस नहीं, मैं उन विश्वासों के कारण शर्मिंदा हूँ, जिन्हें मैंने सत्य मान लिया था।
- खतरों से बचकर निकलता रहा हमेशा, बहादुर नहीं, भगौड़ा हूँ।

रचना को समाप्त करते हुए यह शेयर हवा में तैरता हुआ पृष्ठ पर उतर आया-

कैसा आलम है कि रौशनी तलवों में चुभती है,
किसी ने तोड़कर बिखरा दिया हो आईना जैसे।

काफ़का साहित्य

The Trial, The Castle, The Metamorphosis, The Bridge, The Hunter Gracches, The Bucket Rider, Jackals and Arabs, The New Attorney, A Country Doctror, In the Gallery, A Visit to the Mine, The Next Village, A Fratricide, The Neighbour, The Great Wall of China, An old Manuscript, The Knock at the Manor Gate, Eleven Sons, A Cross Breed, Report to end Academy, The Worry of a Family Man, Guardian of the Tomb, Meditations on Sin and Hope, The City Coat of Arms, The Problem of Our Laws, The Vulture, The Test At Night, The Conscription of Troops, The Helmsman, The Top, The Home Coming, First Sorrow, The Departure, Advocates, A Hunger Artist, The Married Couple, Give it Up, On Parables, Investigaton of Dog.

मिलेना

(कितना समर्थ, कितना वज़नदार नाम है मिलेना, इतना भारी कि उठा न सको। पहले यह नाम मुझे कुछ पसंद नहीं आया, जैसे यूनानी या कोई रोमन नाम भटकता हुआ बोहीमीआ चला गया हो जहाँ चैक्कों ने दरिंदगी से इसे कुचला हो तथा जबरदस्ती किसी लड़की के गले से बाहर खींचा हो। जो भी है, रंग तथा नैन-नक्श ऐसे कि इस अभिमानी स्त्री को बांहों में ले सको। दुनिया से दूर, आग से दूर, मैं नहीं जानता वह कौन थी, इच्छा से, आत्मविश्वास से वह बाहों में समा जाती। उसके भीतर प्रेम, साहस तथा सूक्ष्म द्रष्ट्रा के गुण थे। इन समस्त गुणों को वह अपने त्याग में फेंक देती है या फिर कह सकते हैं कि वह त्यागी जिस कारण ये गुण उसके आस-पास एकत्रित हो गये हैं। - काफ़्का)

काफ़्का के साथ जिस जिस का भी नज़दीकी सम्बन्ध रहा, उसके विषय में कुछ न कुछ लिखा तथा पढ़ा जा सकता है क्योंकि बौद्धिक क्षमता से रहित उसके सम्पर्क में रहा ही नहीं जा सकता था। अनेक पुरुष तथा स्त्रियाँ ऐसी हैं जिन्होंने काफ़्का के प्रभाव को स्वीकार किया तथा ऐसा करना उन्होंने अपना सम्मान समझा। लेखकों में शिरोमणि मैक्स ब्रोद तथा दूसरी सामान्य दसवीं पास लड़की दोरा है जो उसकी पत्नी बनी।

11 वीं कक्षा में फिजिक्स के प्रोफैसर ने मैगनेटिज़्म का अध्याय प्रारम्भ करने से पूर्व मेरी कक्षा से पूछा- छात्रो, मैगनेट किस वस्तु को अपनी ओर खींचता है? सारी कक्षा ने हाथ खड़े करते हुए एक साथ कहा- लोहे को। प्रोफैसर ने कहा- यही गलत धारणा तुम्हारे दिमाग में से बाहर निकालनी है। स्कूल में आप सभी को यही बताया गया था। सुनो। चुंबक अन्य किसी वस्तु को नहीं खींचता, चुंबक के अतिरिक्त। लोहा जब चुंबकीय क्षेत्र में आता है तो चुंबकीय लहरों के प्रभाव से चुंबक बन जाता है। धातुओं में से केवल लोहा चुंबक बनने के लिए तैयार हो जाता है, इस कारण चुंबक की तरफ खींचा चला जाता है। जो धातुएँ चुंबकीय क्षेत्र में आकर भी न्यूटल रहती हैं, चुंबक का उनसे कोई सम्बन्ध नहीं होता।

अन्यों की अपेक्षा मिलेना इस कारण विशेष है कि वह काफ़्का से प्रभावित नहीं हुई, न ही काफ़्का उससे, तथापि दोनों में लम्बे समय तक सम्पर्क रहा। दोनों ही स्वयं में सम्पूर्ण, सन्तुष्ट टापू के समान थे जिन्होंने एक दूसरे के अस्तित्व को स्वीकार भी किया, सम्मान भी दिया परन्तु फिर भी निर्लेप एवं स्वतन्त्र रहे। काफ़्का का जीवन, शुद्ध सिद्धान्त, निर्मल अनुभव है जो व्यवहार में नहीं आया। मिलेना ने किसी दार्शनिक सिद्धान्त का निर्माण नहीं किया। उसका जीवन वह कर्मक्षेत्र था,

जिसे फल की न इच्छा थी, न परवाह। विश्व सभ्यता की उन कम स्त्रियों में से है मिलेना, जिनसे प्रेरणा हासिल की जा सकती है।

मिलेना की प्रमाणिक जीवनी उसकी सखी मारग्रेट बूबर न्यूमन द्वारा रचित है। कभी ये दोनों कम्यूनिस्ट रहीं थीं, एक दूसरी को रवेंस ब्रुक्क यातना-केन्द्र में मिलीं। मिलेना ने कहा- हम दोनों मिलकर यहाँ के जीवन सम्बन्धी लिखेगीं। जब मिलेना को विश्वास हो गया कि वह अब नहीं बचेगी तो उसने मारग्रेट से कहा- तुम्हे अकेले इस पुस्तक को लिखना होगा। मारग्रेट ने कहा- परन्तु मुझे तो लिखना नहीं आता। मिलेना ने हँसते हुए कहा- तुम्हें पता नहीं, मिलेना के साथ मित्रता करने वाला इन्सान जीनियस हो जाता है। तुम पुस्तक लिखोगी, संसार तुम्हारी पुस्तक को पढ़ेगा। मारग्रेट बच गई। आज़ाद हो कर उसने मिलेना की यादों के कदमों में बैठकर किताब की रचना की।

पुस्तक के पहले अध्याय का शीर्षक है- लिखेंगे दुःखों की किताब। प्रारम्भिक शब्द हैं- एक दूसरे को कुछ दिनों से ही जानने पहचानने लगी थीं। परन्तु दिनों का क्या महत्त्व जब समय को घंटों तथा मिन्टों की बजाए दिल की धड़कनों से मापा जाता हो।

मिलेना, चैकोसलोवाकिया की रहने वाली थी और मारग्रेट जर्मनी की। पूरा नाम था मिलेना जेसैंसकी। पता चला मिलेना पत्रकार थी। एक जर्मन स्त्री द्वारा मिलेना ने मारग्रेट तक संदेश भेजा, मिलना है। वह जानना चाहती थी कि क्या यह सत्य है कि सोवियत देश में जर्मनी के फ़ॉसिज़्म विरोधी शरणार्थी कामरेड, स्तालिन ने हिटलर को सौंप दिए हैं?

यातना केन्द्र की ऊँची दीवारों पर लोहें की कांटेदार तारें लगी हुई थीं, जिन्में बिजली का करंट था। प्रथम मुलाकात का पहला वाक्य- मैं हूँ पराग की मिलेना। हाथ मिलाया तो मिलेना ने कहा- धीरे मारग्रेट, जर्मन ढंग से हाथ न मिलाओ, मेरी अंगुलियाँ पर सूजन है। उसका बे-रंग चेहरा तकलीफ़ों को बयान कर रहा था, परन्तु आँखों में चमक और बोलने में ताकत थी। मारग्रेट भूल गई कि यह स्त्री कमज़ोर है। लम्बा कद, तराशे होंठ, तीखी नाक, चौड़ा माथा तथा घुंघराले केश बताते थे कि दिल दिमाग की अमीरी सामने खड़ी है।

एक दूसरी के साथ बात करना मना था। पहरेदार सतत सावधान रहते, मारग्रेट डरती रहती, कोई देख न ले, परन्तु मिलेना इस तरह शांत रहती जैसे शहर के किसी पार्क में खड़ी बातें कर रही हो, आस-पास से अनजान। इस पल के बारे में मारग्रेट लिखती है, "मेरे सामने अखण्ड आत्मा थी, अपमानित तथा दमित औरतों में से केवल एक स्वतन्त्र औरत।"

मिलेना को थोड़ी बहुत ही जर्मन भाषा आती थी परन्तु मारग्रेट से बातें करने के कारण कुछ समय में ही उसकी शब्दावली तथा उच्चारण असाधारण रूप से शुद्ध हो गये। प्रथम मुलाकात के पश्चात् जब मारग्रेट वापिस अपनी बैरक में आई तो लिखती है, मैं अन्य सभी के लिए अंधी तथा बहरी हो गई थी। मेरे वजूद में एक एक वाक्य का पुनः संचार हो रहा था- आई एम मिलेना ऑफ़ पराग। बार बार इन वाक्यों को बोलती, मेरा नशा बढ़ रहा था।

प्रथम विश्व युद्ध के समय यहूदियों का सामूहिक कत्ल शुरू हुआ तो मारग्रेट स्वयं के बचाव हेतु सोवियत चली गयी। हज़ारों कम्यूनिस्टों ने इस उम्मीद से वहाँ आश्रय लिया था कि सोवियत देश उनकी रक्षा करेगा परन्तु वहाँ उन्हें यातना-केन्द्रों में रखा गया तथा अंततः 1940 में स्टालिन ने जर्मन पुलिस को इन्हें सौंप दिया। मारग्रेट ने प्रेस में स्टालिन की करतूतों का पर्दाफाश कर दिया। जर्मन लोगों ने तो उस पर कहर बरसाना ही था, कम्यूनिस्ट स्त्रियों को इस कारण दण्ड दिए गये कि वह स्टालिन विरुद्ध झूठा प्रचार कर रही थीं। कज़ाकस्तान के कारागंडा यातना केन्द्र के पश्चात् वह जर्मन के इस यातना केन्द्र में आई। जर्मन कैदी स्त्रियों ने उसे गद्दार, देश-द्रोही कहा। इन दोषों से बेपरवाह मारग्रेट ने लिखा, "यदि मैं इस जेल की बजाय किसी अन्य जेल की कैदी होती, तो मैं मिलेना से कैसे मिलती?"

बर्लिन से 50 मील दूर इस केन्द्र में पाँच हज़ार स्त्रियाँ बन्दी थीं। युद्ध समाप्ति तक इनकी संख्या 50 हज़ार तक पहुँच गयी। अनेक स्त्रियाँ तो ऐसी थीं जिन्हें यह भी नहीं पता था कि उन्हें यहाँ क्यों लाया गया है। कैदियों को ठण्ड में रखा जाता, भूखे मारा जाता तथा उनके साथ पशुओं जैसा व्यवहार किया जाता। गालियाँ मार-पीट करना आम बात थी। जीवित रहने के लिए कैदी कुछ भी करने के लिए तैयार हो जाते, मुख़बरी तो क्या, हाकिमों के कहने पर अपने साथियों को मार-पीट भी देते। केवल मिलेना ही थी, जो न तो झुकी, न घबराई। वह सभी को सांत्वना देता। अपने विषय में बताने में वह एक मिनट का भी समय नष्ट नहीं करती थी। वह जानना चाहती थी। कामल पत्रकार के समान इस प्रकार प्रश्न करती कि सामने खड़ी औरत उसे अपनी सहेली समझने लगे। उसने मारग्रेट से ऐसे प्रश्न पूछे कि उनका उत्तर देते समय उसे वह याद आ गया जिसे वह भूल चुकी थी। जो रूस के यातना केन्द्रों में बंद थे साथी कैदियों के नाम इस उम्मीद से उसने लिखे कि कभी तो उन्हें मिलेगी। वह ऐसे गीत भी लिखती जिन्हें कैदी गाते थे। मारग्रेट ने उसने पूछा, कितने समय तक कम्यूनिज़्म में तुम्हारा विश्वास बना रहा? क्या तुम्हें विश्वास हो गया था कि कम्यूनिस्ट प्रत्येक व्यक्ति को काम, रोटी और स्वतन्त्रता देंगे? दोनों हैरान होतीं कि पार्टी की उलझन तथा असफलताओं के लिए कम्यूनिस्ट नेता किस

हद तक बहाने बनाने में कुशल हैं। दोनों ने ही कम्यूनिस्ट चरित्रहीनता की जड़ों को ढूंढा।

मिलेना पार्टी की कार्ड-होल्डर सदस्या थी। रूसी कम्यूनिस्ट इंकलाब उस समय समस्त संसार के लिए प्रेरणा-स्रोत बन गया था। पार्टी द्वारा सौंपे गये प्रत्येक कार्य को मिलेना पूरा करती। उसने कभी भी कम्यूनिस्ट रूस की यात्रा नहीं की परन्तु पत्रकारिता के समय जो तथ्य उसके सामने आये, तब उसने अपने कार्ड के टुकड़े-टुकड़े करके उसे पार्टी के दफ्तर में फेंक दिया। पार्टी ने घोषणा कर दी कि उसे निकाल दिया गया है। स्टालिन की शुद्धिकरण की लहर को उसने उधेड़ना शुरू कर दिया। रेडियो मास्को के प्रचार विंग के समक्ष उसने प्रश्न रखे- "चैक्क कम्यूनिस्ट तथा साधारण कर्मचारी जो सोवियत रूस गये हैं, उनका क्या हुआ? क्या यह सत्य नहीं कि उनमें से अधिकांश जेल में बंद हैं? रूस का लोगों के साथ यही व्यवहार है। लोग इतने मासूम होते हैं विश्वास कर लेते हैं कि रूस उन्हें सुरक्षा प्रदान करेगा। कम्यूनिस्ट शरणार्थियों में अनेक ऐसे लोग रूस में है जिनका मैं बहुत सम्मान करती हूँ तथा कुछ ऐसे जिन्हें मैं बिल्कुल भी पसंद नहीं करती। मेरी पसंद या ना-पसंद के क्या मायने हैं? मैं सभी की सलामती की दुआ करती हूँ।" उसके इन विचारों को 8 मार्च 1939 को प्रकाशित किया गया।

दिन-रात वह ठण्ड तथा भूख से कांपती रहती। पीला चेहरा तथा सूजे हुए हाथों को देखकर एक दिन मारग्रेट अपने हिस्से की ब्रैड मिलेना के पास ले गयी। नाराज़ होकर मिलेना ने इस सामान को हाथ से परे हटा दिया। उसे कोई कुछ दे सकता है, यह मानने के लिए वह तैयार नहीं थी। उसका कोई नहीं था, बिल्कुल अकेली थी परन्तु मारग्रेट एक संयुक्त परिवार से थी, जिसे मिलने के लिए उसके मन में आशा थी, फिर भी, मुझ पर कोई तरस करे, मिलेना को स्वीकार नहीं था।

वह समय की पाबन्द नहीं थी। परेड में आगे पीछे वह अपनी ही धुन में रहती। जेल अफ़सरों का आदेश मानना तो एक तरफ, वह उन्हें डांट-डपट भी देती। एक दिन सभी कैदी स्त्रियाँ परेड करने जा रही थीं कि मिलेना की दृष्टि बसंत की कलियों तथा फूलों पर पड़ी। वह खड़ी होकर गाने लगी। साथ की कैदी स्त्रियाँ जब उस पर झपटीं तो वह बोली- तुम सब का जन्म कैद काटने के लिए ही हुआ है। गुलामी तुम्हारी हड्डियों में समा चुकी है।

कैदियों के लिए कैदी निगरान, कैदी नर्सें, कैदी डॉक्टर तथा कैदी मुखबर रखे जाते। मिलेना कहा करती- कितनी आसानी से कैदी अपने साथियों के विरुद्ध अपने शत्रुओं की सहायता करने लगते हैं। दो कम्यूनिस्ट स्त्रियाँ मिलेना से कहीं बाहर से मिलने आई तो जाते हुए कहा कि हमे पता चल गया कि तुम तासकी की

शार्गिद हो, इस कारण सोवियत देश की बदनामी कर रही हो। मिलेना को धमकाते हुए उनमें से एक स्त्री ने कहा- "चैक्क समाज की सम्मानित सदस्या रहेगी क्या बदनाम मारग्रेट की सहेली? दोनों में से एक को चुन लो।" सोचने की आवश्यकता नहीं। मिलेना ने कहा- मारग्रेट से मित्रता। दफ़ा हो जाओ अब।

जन्म 1896 ई. को पराग में हुआ। माँ बहुत सुन्दर थी, काले घुंघराले केश। मिलेना को याद है कि जब वह तीन वर्ष की थी तो उसे गोद में बिठाकर बहुत समय तक उसके केश संवारती रहती। मिलेना मारग्रेट को बताती- केश संवारने के पश्चात् इस स्थान पर माँ मेरे केशों के छल्ले को चूमती। यह छल्ला मैं कभी भूल नहीं सकती. .. भाग्यवान छल्ला। अकेली संतान, अकसर अकेले ही खेलती। जवानी में ही माँ का देहांत हो गया। मिलेना की माँ के मायके के विज्ञान, कला, मंच-संगीत को चाहने वाले, परन्तु ससुराल बिल्कुल इसके विपरीत। मिलेना बताती- थप्पड़ तो दूर माँ कभी डांटती भी नहीं थी। मार-पीट की ज़िम्मेवारी पिता जी निभाते। सिलाई, कढ़ाई तथा लकड़ी पर नक्काशी करने में माँ निपुण थी।

पिता दांतों के डॉक्टर थे। उनका क्लीनिक अच्छा चल रहा था। उसने डैंटल कॉलेज की भी स्थापना की जो आज तक डॉक्टर जॉन जैसिंसकी के नाम से चल रहा है। मिलेना शक्ल तथा बुद्धि में पिता पर थी। पिता की तरह बातें करते समय गालों में गड्ढे पड़ते थे, बात करने एवं निर्णय लेने में दृढ़।

मिलेना को याद है जब उसके भाई का जन्म हुआ तो परिवार के समस्त सदस्यों का ध्यान उस कमज़ोर लड़के की ओर ही हो गया, जैसे मिलेना घर में है ही नहीं। भाई की मौत हो गई। मिलेना हठी थी। पिता अधिकतर उसकी मार-पीट करते। पिता परम्परा के पुजारी, पुराने ढंग का हैट तथा सूट पहनते, मिलेना पर हर तरह की पाबन्दी थी।

13 वर्ष की थी जब माँ को निमोनिया हो गया, फिर लकवा। सारा दिन वह माँ को संभालते संभालते थक जाती। अंततः माँ के बिछुड़ने का समय आ ही गया। मिलेना को सारी उम्र क़ब्रिस्तान अच्छे लगे। सारा दिन वह क़ब्रिस्तान में ही बिता देती। जिधर मन करता, उधर चली जाती। पिता जी को ये हरकतें पसंद नहीं थीं। घर में अकसर कलह होता। मिलेना कई कई दिनों तक घर न आती। कभी मंच का शौक, कभी चित्रकारों के लिए मॉडलिंग का कार्य। वह साहित्य की गम्भीर पाठक थी। पन्द्रह से बीस वर्ष की आयु तक जो भी मिला उसे पढ़ा। हासमन, दोस्तोवसकी, मरेडिथ, तालस्ताय, जैकबसन, टामस मान उसके प्रिय साहित्यकार थे।

लड़कियों के उच्च-स्तरीय आस्ट्रीया प्रशासन के मिनरवा विद्यालय में मिलेना को दाखिल करवाया गया। लैटिन तथा ग्रीक भाषाओं को पढ़ना अनिवार्य था।

इस विद्यालय की स्थापना चैक्क बुद्धिजीवियों ने की थी। इस विद्यालय में पढ़ी लड़कियों में से अधिकतर ने अध्यापिका, समाज-सेविका तथा डॉक्टर के पद को सुशोभित किया।

मिलेना को इस विद्यालय की योग्य छात्रा नहीं माना गया। यह नहीं कि बौद्धिकता में कोई कमी थी, वह परम्परागत नियमों से चिढ़ती थी, स्वाभाविक रूप से बागियाना सुर की मालिक। दो अन्य लड़कियाँ सतासा और जरमिला उसकी सखियाँ बन गईं। ये तीनों प्रबन्धकों के लिए सिर दर्द बन गई थीं। हर समय तीनों को साथ देखकर यह शक हुआ कि यह तीनों समलिंगी हैं। उनकी हरकतों को देख ऐसा प्रतीत होता जैसे कि वह नालायकी की तरफ बढ़ रही हैं। बाकी सब तो ठीक, मिलेना अपने क्लीनिक में से नशे की दवा चुरा कर लाती, तीनों मिलकर उसका सेवन करतीं और प्रतीक्षा करतीं कि क्या क्या होगा। कोकीन तक का प्रयोग किया गया। माता-पिता ने तीनों को अलग करने का बहुत प्रयास किया परन्तु व्यर्थ।

पिता की इच्छा थी कि मिलेना डॉक्टर बने इसलिए स्कूल के पश्चात् मेडिकल कॉलेज में दाखिल करवा दिया गया। पिता, प्रथम विश्व-युद्ध में घायल सिपाहियों के चेहरों का आप्रेशन करते समय मिलेना को सहायक के रूप में रखते, परन्तु मिलेना घावों से घृणा करती। एक वर्ष के पश्चात् उसने मेडिकल कॉलेज छोड़ दिया।

लम्बा कद, सुन्दर नैन-नक्श तथा आत्मविश्वास से पूर्ण उसकी चाल थी। उसके ओर उसकी सहेलियों के कारण अकसर ये टिप्पणियाँ सुनने को मिलतीं- ये लड़कियाँ पराग के खानदानों की इज्जत को दाग लगायेंगीं। इन दिनों समस्त यूरोप परम्परा के पाखण्ड की कैद से स्वतन्त्र होने का प्रयास कर रहा था और इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु लीडरशिप पराग के पास थी। दुनिया पराग की तरफ देख रही थी। उन दिनों का वर्णन करते हुए जौसफ़ कोडिसिक का कहना है- चारों तरफ बिखरी हुई धूप वाला दिन। मुझे याद है जैसे आज की घटना हो। रंग-बिरंगे वस्त्र पहने अनेक राष्ट्रों के लोग, फौजी तथा विद्यार्थी आदि। चौक में स्थित गर्वनर की मूर्ति भी इसी रौनक को देखने में मग्न। इस समय बाहों मे बाहों डाले दो घूमती लड़कियाँ अजीब लग रही थीं, क्योंकि दोनों ने लड़कों के वस्त्र पहने हुए थे। केश अंग्रेजी ढंग के, नाजुक शहतूत की शाखाओं के समान शरीर, अमीरी ठाठ-बाठ, दिखावा बिल्कुल नहीं, मिलेना तथा सतासा, दोनों ही ग़ज़ब।

पिता के पैसों को पानी के समान बहाती मिलेना। दोस्त से मिलने का समय निश्चित, देखा कि देर हो रही है, कपड़ों सहित वलवा दरिया में छलांग लगा

दूसरे किनारे पर पहुँच गई। ऐसा करना अपराध था, इसलिए अगली सुबह पाँच बजे उसे थाने में बन्दी बना लिया गया।

मिनरवा स्कूल की अनेक लड़कियों ने ख्याति प्राप्त की परन्तु मिलेना मिलेना थी। उसके भीतर कोई ऐसी शक्ति थी जिस कारण वह पहचान लेती कि किस किस ने कौन कौन सा नकाब पहना हुआ है। अपने पूर्वजों की परम्पराओं, रस्मों को भंग करती हुई वह किसी नवीन मार्ग का सृजन कर रही थी। उसके लिए देशों, धर्मों तथा भाषा की कोई दीवार नहीं थी। यही कारण है कि ईमानदार लोगों के लिए वह कीमती तथा कपटी लोगों के लिए कांच। पराग में बुद्धिजीवियों के अनेक संगठन थे- चैक्क तथा जर्मन दोनों, मिलेना प्रत्येक दल में जाती, सुनती, सुनाती। इतनी ताकतवर कि किसी दल की सहायता की आवश्यकता नहीं। काफ़्का निर्णय लेने में जितना कमज़ोर था, मिलेना उतनी ही दृढ़। यही कारण है कि मिलेना ने काफ़्का को रद्द किया। मिलेना के एक परिचित ने तो यह टिप्पणी भी दी - मुझे प्रतीत होता जैसे वह घोड़े पर सवार है और कमर में रिवाल्वर लटक रहा है। उन दिनों एक पुरानी घटना का अकसर वर्णन होता। पुरातन बोहीमीआ पर राजकुमारी **लिबिऊस/लेबिओस** का शासन था। उसके शासन में स्त्रियों का सम्मान होता था। राजकुमारी ने परम्पराओं के विपरीत स्वेच्छा से विवाह करवाने के लिए स्वयंवर की रचना कर प्रेमिसल नामक एक नेक किसान को चुना। राजकुमारी की मृत्यु के पश्चात् प्रेमिसल ने राज्य संभाला। उसके शासनकाल में स्त्रियों को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे कि उनके सम्मान को ठेस पहुँची हो। उन्होंने पुरुषों के विरुद्ध युद्ध किया, सैंकड़ों लड़कियाँ मारी गयीं। मिलेना को देखकर लोग इस कहानी को याद करते।

मिलेना की फूफी रज़ेना जेसिंसकी अपने समय की प्रसिद्ध कवियत्री तथा उपन्यासकार थी। उसके विषय में लेखक आरने नोवाक ने लिखा है- उसके उपन्यासों के पात्र इतने जांबाज थे कि बेशक कोई खुशी का अवसर हो, या वह उस जहाज़ पर सवार हों जो डूब रहा हो, वह केवल अपने मन की मानते थे। मिलेना अपनी फूफी से कभी सहमत नहीं हुई। मिलेना कहती- तुम्हारे अश्रु-मार्का उपन्यास व्यर्थ है बुआ, परन्तु बुआ उसे लगातार स्नेह करती रही तथा कहती- उसे मैं उसकी नालायक हरकतों के बावजूद भी प्यार करती हूँ, या फिर उसकी ऐसी हरकतों के कारण ही? पता नहीं, परन्तु वह अच्छी लगती है। अब मैं 73 वर्ष की हूँ, तीस वर्ष हो गये मिलेना से प्रेम करते हुए, बहुत है इतना समय।

इस खानदान का बुज़ुर्ग, जॉन जैसेनिअस (जन्म 1566) पराग का प्रसिद्ध सर्जन था जो पराग में रहते हुए भी केवल जर्मन एवं लातीनी भाषा में ही बात करता।

यह अपनी किस्म की एक बौद्धिक शेखी थी। उसने सम्राट रुडोलफ द्वितीय के शाही सर्जन के रूप में कार्य किया। बादशाह की मनमानियों/जबरदस्ती के विरुद्ध जब आन्दोलन हुआ तो यह सर्जन, बागियों में था। अंततः बागियों को बंदी बना लिया गया। जब मौत के दण्ड की घोषणा हुई तो डॉक्टर ने गर्जते हुए कहा- जैसे तुम अपमानित ढंग से हमारे सिरों की नुमाईश कर रहे हो, वह लोग आने वाले हैं जो सम्मानपूर्वक हमारे सिरों को दफ़न करेंगे। इस कथन का दण्ड, पहले जॉन की जीभ काटी गई, फिर सिर। जब काफ़्का ने लिखा- मिलेना शब्द मुझे ऐसा लगा जैसे पराग का नहीं, ग्रीक या रोमन भाषा का हो, जो भटकता भटकता बोहीमीआ में आ गया हो, जिसे चैक्क लोगों ने बेदर्दी से कुचलते हुए जबरदस्ती गले से बाहर निकाला हो, तब उसका यह संकेत मिलेना के इस शहीद बाबा की ओर कहा गया प्रतीत होता है।

रविवार को मारग्रेट तथा मिलेना कैदियों की धारीदार वर्दी पहने एक दूसरे से बाते करती हुई कह रही थीं - क्या हम कभी किसी कॉफ़ी हाऊस में बैठकर भी बातें कर सकेंगी? किसी संगीत सभा का आनन्द प्राप्त कर सकेंगी? आस-पास वर्दी पहने कैदी स्त्रियाँ सैकड़ों की गणना में भूतों के समान घूम रही हैं। अचानक तीव्रता से जर्मन सुपरवाईज़र आई और दोनों को निर्ममता से पीटने लगी। जेल में बांह में बांह डालकर घूमने का क्या मतलब? मार खाकर दोनों सहेलियाँ भीड़ में से हटकर दीवार के पास बैठ गईं। भीड़ के नरक में से निकल कर मारग्रेट गीत गाने लगी। मिलेना ने कहा- कवोलक बोज़ी। इन रूसी शब्दों का अर्थ है- दैवी स्त्री। मारग्रेट ने कहा- मुझमें तुम्हें कौन से गुण दिखाई दिए मिलेना? उसने कहा- प्रेम करने की शक्ति- प्रत्येक से। धरती के समान दृढ़ तथा अच्छी, फल ही फल। ग्रामीण मैडोना- समस्त बंधनों से पार कुमारी मरीअम।

मारग्रेट लिखती है- मैं सोचा करती, शायद मिलेना मुझे उसकी बौद्धिकता के कारण अच्छी लगती थी। परन्तु शीघ्र ही मुझे ज्ञात हो गया कि उसके आसपास कोई रूहानी मण्डल है, वह निश्चित कदमों से विपरीत दिशा में बहती तेज़ हवा को चीरती जाती। कभी अचानक सामने दिखाई दे जाती, जैसे शून्य में से प्रकट हुई हो। प्रसन्न होती तो भी आँखों की उदासी स्थिर रहती। कैदी होने या यातनाएँ झेलने का दुःख नहीं था, यह कोई अन्य ही दुःख था- उस व्यक्ति का दुःख जो सारे संसार में अकेला हो तथा जानता हो- कहीं मुक्ति नहीं। मैं जानती थी कि जलपरी जैसे उसके बन्धन में से मैं कभी स्वतन्त्र नहीं हो सकूंगी। कभी नहीं।

काफ़्का ने लिखा- गहरे समुद्र के नीचे लघु से लघु कण पानी का अत्यधिक दबाव सहन करता है मिलेना। यही तेरे साथ हुआ। परन्तु इससे भिन्न अन्य कोई जीवन होता तो कितनी शर्मिंदगी होती।

पिता जी की इच्छा के विरुद्ध उसने अरनैस्ट पोलक के साथ प्रेम विवाह किया। पोलक यहूदी था। पिता ने बेटी के साथ सभी सम्बन्ध तोड़ दिये और लोगों से कहा- लड़की मानसिक रोगी है। खर्चा बंद। पोलक भी धनी व्यक्ति नहीं था। बाद में पता चला कि वह गैर-जिम्मेवार भी है। कई औरतों से रोमांस चलाता। मिलेना दुर्व्यवहार तथा निर्धनता के घेरे में फंस गयी। फिर भी वह ज़रूरतमंद लोगों की सहायता करती रहती बेशक पैसे उधार लेने पड़ते। उसकी सहायता किसी ने नहीं की।

विल्ली हॉस को पैसों की आवश्यकता थी। मिलेना के अतिरिक्त किसी अन्य से उसको सहायता नहीं मिली। सेना में भर्ती हो गया। छुट्टी आया तो मिलेना से मिलने के लिए गया। खुशी खुशी बताया- मेरे पास आठ सौ रूपये हैं। कर्ज़ ग्रस्त मिलेना ने कहा- आधे पैसे मुझे दे दो। वह हिचकिचाया तो क्रोधित होकर मिलेना ने उससे सारे पैसे छीन लिये। पहले तो आग-बबूला हो गया, फिर शर्मिंदा होकर कहने लगा- मुझे शर्म आ रही है मिलेना। मुझे चाहिए था कि तुम्हारे कहने से पहले ही सारे पैसे तुम्हें दे देता। तुमने तो आधे मांगे थे। मैं अपमानित हूँ मिलेना। तुमने मुझे सबक सिखा दिया है।

पिता के पश्चात् पति पोलक ने पैसे देने बंद कर दिए। उसने चैक्क भाषा पढ़ानी शुरू कर दी परन्तु इसके साथ निर्वाह न हो पाता। शरीर में अभी ताकत थी। रेलवे स्टेशन चली जाती और कुली का काम करती। घटिया काम करते करते कोकीन खाने की आदत पड़ गई।

पहली बारा 1920 में मिलेना ने काफ़्का द्वारा लिखी कहानियाँ पढ़ीं। इन कहानियों ने उसे मोह लिया। वह कहती- काफ़्का सम्पूर्ण लेखक है। उसने, ***द स्टोकर, द जजमैंट, मैटामारफ़ॉसिस*** तथा ***कटैंपलेशन*** का पहली बार चैक्क भाषा में अनुवाद किया। काफ़्का को यह अनुवाद पसंद नहीं आया।

मिलेना ने लेख लिखा- ***करस ऑफ द स्ट्रलिंग क्वालिटी***। लिखती है- सदाचारी व्यक्ति दयालु नहीं होते अपितु इसके विपरीत, ऐसे लोग खतरनाक तथा दुष्ट होते हैं। इन लोगों में वह अपने पिता को भी शामिल करती है, जिसने सदाचारी, खानदानी होने का लिबास पहना हुआ है- "मेरे पिता ने जीवन में एक बार भी झूठ नहीं बोला। यह बड़ी बात है। मैं झूठ बोल देती हूँ, तो भी लोगों ने मुझे पसंद किया। मेरा सच्चा पिता इतना निर्दयी है, मैं सोचती, कितना अच्छा होता यदि उसने कभी

कभी झूठ बोलने का हौसला किया होता। फिर वह कुछ अच्छा लग सकता था। इसके विपरीत काफ़्का सर्वोत्तम था परन्तु अपने गुणों को छिपा लेता था और अपने ऐसे अवगुणों का वर्णन करता जो उसमें थे ही नहीं। वह अपनी नेकी पर शर्मिंदा होता था। वह छिप कर दूसरों की सहायता करता। शपथ उठा लेता कि उसे कुछ पता नहीं। जब मैंने उसकी मृत्यु का समाचार सुना तो मुझे लगा अच्छा ही हुआ। यह संसार उसके रहने योग्य था ही नहीं।

मिलेना ने मारग्रेट को काफ़्का के बचपन की घटना सुनाई। निर्धन माँ ने मज़ूदरी करके एक शलिंग कमाया। उन दिनों में यह बड़ी रकम थी। कुछ खरीदने के लिए माँ-बेटा बाज़ार की ओर चल पड़े, रास्तें में एक भिखारिन बैठी थी। इतनी निर्धन, माँ-बेटे को लगा कि संसार में सर्वोत्तम करने योग्य यही है कि इसे शलिंग दे दें। परन्तु इतनी बड़ी रकम लेकर बूढ़ी जितनी प्रसन्न होगी उतने ही आशीर्वाद देगी, यह अच्छी बात नहीं होनी थी। उसने शलिंग देकर बारह पैनीयाँ ले लीं। भिखारिन के पास से तेज़ी से आगे निकलते, पीछे मुड़ते, पैनी फेंकते, फिर वापिस आ जाते, इस तरह कुछ चक्कर लगाकर सारी पैनियाँ दे आये। अपने पास कुछ नहीं रखा। घर आकर दोनों रोये।

काफ़्का ने पत्र में लिखा- तुम्हारे पत्र अच्छे लगते हैं मिलेना। तुम्हारे पत्र पढ़कर मुझे कुछ देर तक डर नहीं लगता। डर से मैं इतना सहमत हो जाता हूँ कि उसके हक में दलीले देने लगता हूँ। तुम्हारें पत्र मुझे साहसी बना देते हैं और मैं डर के खिलाफ हो जाता हूँ। तुम्हें मिलकर बहुत शांत हो जाता हूँ। मेरी व्याकुलता का भी यही कारण है। तुम्हारे बंधन में फंसकर मैं स्वतन्त्र अनुभव करता हूँ। इस बात को समझने के पश्चात् जीवन को त्यागना अच्छा लगता है। लिखा- मिलेना समुद्र के समान है शक्तिशाली, तल में संसार के ख़ज़ाने छिपे हुए हैं, परन्तु समुद्र को न तो अपनी ताकत का पता है, न ही उसे ख़ज़ानों का अभिमान है। मूर्ख इतना कि चांद के कमज़ोर मुख को देखकर नाचने लगता है।

मिलेना ने बताया- काफ़्का को कुछ पता नहीं चलता था। जिसे हम सामान्य समझते थे, काफ़्का के लिए वह जटिल था। हम दोनों जा रहे थे। मार्ग में एक बूढ़ी भिखारिन को देखा। उसे दो क्राऊन का सिक्का देकर कहा कि एक क्राऊन वापिस कर दो। बूढ़ी के पास क्राऊन वापिस करने के लिए था ही नहीं। बहुत देर तक वहीं खड़ा रहा। मैंने कहा चलो छोड़ो। एक नहीं दो दे दिए यह समझ लेना। वह चल पड़ा। बड़बड़ाते हुए कहा- भिखारिन ही निकली न आखिर। एक क्राऊन दबा गई कंबख़्त। दो तो छोड़ो एक क्राऊन की भी हकदार नहीं थी वह।

मिलेना ने कहा- हम सभी में जीने की ताकत है मारग्रेट, क्योंकि हम सहारा ढूंढते रहते हैं, कभी चोरी का, कभी झूठ का, कभी सत्य का, कभी निराशा का...। काफ़्का ने कभी किसी सहारे की उम्मीद नहीं की। उसने कभी झूठ नहीं बोला, कभी नशे में बेहोश नहीं हुआ, कभी किसी की शरण नहीं ली, ऐसा मान लो जैसे हम सभी ने कपड़े पहन रखे हैं और वह नंगा होने के कारण छिपता रहता है। छल कपट से दूर... पूर्णतः संन्यासी। संन्यास उसकी मंजिल नहीं। उसकी भयभीत पवित्र दृष्टि, समझौता करने की अयोग्यता के कारण संन्यास स्वयं उसकी झोली में आ गिरा। काफ़्का तो जानता ही नहीं था कि संन्यास क्या होता है। स्त्री को देखकर वह जितना हैरान होता, उतना ही टाईप राईटर को देखकर चकित रह जाता। सजीव या निर्जीव उसके लिए कोई भेद नहीं।

काफ़्का ने उसके पत्रों का उत्तर देना बंद कर दिया कि कहीं उसके पति पोलक को कोई एतराज न हो। दो वर्ष लगातार उस गली के आगे जाकर खड़ी हो जाती जहाँ से डाक मिलेना के मुहल्ले की ओर जाती। उसकी सखी विलमा ने बताया, "1922 में मैं कार में जा रही थी, मिलेना शीघ्रता से डाकघर की ओर जाती देखी। मैंने आवाज़ दी, मिलेना ने शून्य आँखों से मेरी तरफ देखा। मुझे नहीं पहचाना। चेहरा पीला, नीरस, आसपास से पूर्णतः बेखबर।"

वह जनवरी से लेकर मई 1922 तक काफ़्का के घर और अस्पताल में उसका हालचाल पूछने जाती रही। मृत्यु का समाचार सुनकर लिखा- पराग में बहुत कम लोग उसे जानते थे। उसने एक बार कहा था, जब मन आत्मा का भार उठाने में समर्थ न रहे तो फेफड़े भार बांटने लगते है परन्तु यह उनके वश की बात नहीं होती, शीघ्र हार जाते हैं। काफ़्का इतना अच्छा था कि जीवित न रह सका, कमज़ोर इतना कि लड़ नहीं सका। इतना ईमानदार, इतना पवित्र कि अपनी कमियों को छिपाना तो एक तरफ, स्वयं उन्हें बयान करता रहता। मृत्यु को शर्मिंदा करने के लिए उसने मृत्यु के आगे खुशी से हथियार फेंके।

1924 में मिलेना ने अपने घर को पेईंग गैस्ट का रूप दे दिया। एक नौकरानी रख ली। स्वयं ही भोजन बनाती। उसने पोलक को तलाक दे दिया। पिता ने उसकी लेखन क्षमता को पहचान लिया था। मिलेना भी चाहती थी कि पिता से दूर न जाये। वर्ष 1926 में उसने ***द वे टू सिंपलीसिटी*** नामक पुस्तक प्रकाशित करवाई। जैसे काफ़्का ने पिता के नाम एक पत्र लिखा था, यह पुस्तक भी उसी प्रकार का एक पत्र है। काफ़्का के पिता ने तो पुत्र द्वारा लिखे पत्र को नहीं पढ़ा, मिलेना के पिता ने पढ़ा तो बेटी को गले से लगा लिया। अप्रिय शहर को छोड़कर वह अपने प्रिय पराग में आ गई जहाँ उसे सारा शहर जानता था। उसे मित्रों एवं शत्रुओं की

संख्या सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा अधिक थी। वह चाहती थी कि या तो उसे कोई प्रेम करे या नफ़रत। चैक्क कामरेड कवि नेजल, मिलेना को और मिलेना नेजल को पसंद नहीं करती थी। एक पार्टी में अधिक शराब पीकर वह हंगामा करने लगा तो उसे उठाकर हॉल के बाहर फेंक दिया गया। मिलेना ने एम्बुलैस मंगवाकर, सहारा देकर उसे विदा किया। क्या पसंद है, क्या ना-पसंद, इसका कोई ख्याल नहीं, जो सही है वही करेगी।

1927 में उसने बुद्धिमान् भवन निर्माता इंजीनियर जेरोमर से विवाह किया। यह एक सामान्य व्यक्ति था जिसने सबसे निम्न स्तर राज-मिस्त्री के रूप में कार्य शुरू किया तथा बेसिक काम सीखकर 12 वीं कक्षा पास की। तत्पश्चात् पराग अकैडमी ऑफ फ़ाईन आर्टस के डिग्री कोर्स में दाखिला लिया। यहाँ विश्व विख्यात भवन निर्माण कर्त्ता ले कारबूज़ीए से भेंट हुई। कारबूज़ीये की कला की सर्वप्रथम प्रशंसा जेरोमर ने की थी। जेरोमर उससे भी बड़ा कलाकार था। यह दो वर्ष मिलेना के जीवन के सबसे अच्छे दिन थे। उसने तीन पुस्तकें प्रकाशित करवाईं तथा सचित्र पत्रिका ***पेस्ट्री टाईडन*** का संपादन किया। इस विवाह से मिलेना को मानसिक संतुष्टि प्राप्त हुई परन्तु गर्भवती होने के प्रारम्भिक महीनों में उसे दर्द शुरू हो गया। उसने पिता तथा उनके सहयोगी डॉक्टरों की राय ली। पिता ने कहा- जाँच करने से पता चला है कि सब ठीक है। तुम बच्चों के समान व्यवहार मत करो, सब ठीक है, परन्तु कोई सुधार नहीं हुआ। हालत दिन प्रतिदिन बिगड़ती गई। आठवें मास जेरोमर उसे पहाड़ी प्रदेश में ले गया कि शायद हवा बदलने से कुछ ठीक हो जाये। यह बताने के लिए कि वह बच्ची नहीं है झील के ठण्डे पानी में छलांग लगा दी। सारे शरीर पर छाले निकल आये, बुखार हुआ तथा शरीर का एक भाग सुन्न हो गया। डॉक्टरों ने बताया - सेफटीमोनिया है। दर्द बहुत अधिक था। पता चलने पर पिता जी भागे आये। वर्षों से दबा हुआ पिता का प्रेम फिर से जाग उठा। दिन रात उसके पास बैठा रहता। दर्द कम करने के लिए मारफ़ीन की दवा दी जाती। सुन्दर लड़की का जन्म हुआ, परन्तु डॉक्टरों ने कहा कि मिलेना के जीवित रहने की उम्मीद कम ही है।

पिता ने देखा कि महान् कलाकारों की तरह उसका दामाद भी निश्चिन्त होकर बैठा है, मिलेना की मौत के पश्चात् बच्ची की देखभाल नहीं करेगा। उसने कहा- मिलेना इस बात की चिंता मत करना कि बच्ची का पालन-पोषण कौन करेगा। मैं, इसका नाना इसे गोद ले लूंगा। ठीक है जेरोमर? दामाद खामोश रहा परन्तु मिलेना ने कहा- आपको देने की बजाय प्रिय पिता जी इसे वलवा दरिया में फेंकना अच्छा

होगा। मुझे दुःख देने में आप सफल हो गये थे, अब मैं उन दुःखों को अपनी बेटी पर दोहराने नहीं दूंगी।

वह बच गई परन्तु बायें घुटने की हड्डियाँ तथा पट्ठे कठोर हो गये। टांग काटने का विचार किया गया, पिता नहीं माने। माहिरों को बुलाकर, निर्णय किया कि सुन्न करने के पश्चात् घुटने को जबरदस्ती आगे पीछे की ओर मोड़ा जाये। यह तजुर्बा सफल रहा। पिता की आँखों में आँसू आ गये, उसने सर्जन को गले से लगा लिया। मिलेना जब होश में आयी तो उसे विश्वास हो गया कि वह ठीक हो रही है। एक वर्ष तक लाठी के सहारे अस्पताल में चलने का अभ्यास करने के पश्चात् जब वह अपनी बेटी के साथ घर आई तो उसे एक और आघात लगा। उपचार के समय उसे कोकीन दी जाती थी, परन्तु अब उसे इसकी आदत हो गई थी। जिस चाल ढाल से लड़कियाँ मिलेना से ईर्ष्या किया करती थीं, वह अब खत्म। चेहरा सूजा हुआ। वह कहती, जेरोमर के साथ कुछ समय सुख का बिताया था न, उसका ही दण्ड है यह। कुदरत पल पल का हिसाब लेगी। उसने निर्णय किया, हमेशा के लिए मारफ़ीन बंद करेगी। पति को सहायता करने के लिए कहा। नशेड़ी जब अचानक नशा बंद कर दे तो उसके साथ बहुत बुरा होता है, टांगों से लेकर सिर तक तीखे दर्द की लहरें चीखे मारने के लिए मजबूर कर देती हैं। दिन रात रोने में बीतते। जेरोमर यह सब सहन न कर पाता। एक दिन मिलेना ने देखा, दवाइयों के मेज़ पर पलंग के समीप गोलियों से भरा रिवाल्वर रखा हुआ था। जेरोमर का संकेत, यदि जीवन कठिन प्रतीत होता है, तो खत्म करो। मिलेना ने आत्महत्या नहीं की, जेरोमर चला गया। उसे छोड़कर रूस चला गया जहाँ उसे लगता था, बस्तियाँ आबाद हो रही हैं, अच्छा काम मिलता रहेगा। ले कारबूज़ीआ, गरुपिऔ हानिस मेयर तथा मेअ पहले ही वहाँ पहुँच चुके थे।

जेरोमर जल्दी ही रूस की अफ़सरशाही से तंग आ गया। उसके बनाये नक्शों का निरीक्षण वह लोग करते थे जिन्हें अ, आ भी नहीं आता था। दो वर्ष तक उसका कोई नक्शा पास न हो सका। वह रूस की आन्तरिक हिंसक, उदास संकीर्ण परिस्थितियों के बारे में मित्रों को पत्र लिखता रहता परन्तु यूरोप के किसी कम्यूनिस्ट मित्र ने उत्तर देना उचित नहीं समझा क्योंकि सभी का विचार था कि वह सफ़ेद झूठ बोल रहा है, कि वह कम्यूनिज़म का विरोधी, निन्दक हो चुका है। वर्ष 1936 में वह भागकर वापिस आ गया तो यह एक चमत्कार ही था क्योंकि इस समय स्टालिन की शुद्धिकरण की लहर शिखर पर थी अर्थात् सामूहिक कत्लों की प्रक्रिया।

मिलेना कम्यूनिस्ट पार्टी की सदस्य अवश्य बनी, परन्तु अंधी भक्तिन नहीं। प्रत्येक गतिविधि पर अपनी सूक्ष्म दृष्टि रखती। उसे स्टालिन की कार्य प्रक्रिया

gfh

पर संदेह था। जब स्टालिन ने सार्वजनिक मुकद्दमें में जीनोवीव और कामेनीव को गोली से मरवाया तो संदेह यकीन में बदल गया। अन्य कामरेडों के समान न तो वह कभी दुविधाग्रस्त हुई, न ही कभी आँसू बहाये। पार्टी दफ्तर में जाकर कार्ड फेंक आई।

एक दिन उसने अपने मित्र फ्रेडी माइर को कहा- जिसकी मुझे तलाश थी, वह पुरुष नहीं मिला। बुज़दिल मिले, मानसिक रोगी मिले, बातूनी मिले। यह सभी मुझ पर निर्भर हो जाते जबकि मैं चाहती थी कि मुझे कोई सहारा मिले। मैं स्वप्न देखती थी, मेरे कई बच्चे हों, मैं दूध निकाल रही हूँ, पशु चरा रही हूँ, मेरा पति आते जाते हुए मुझे छेड़ता रहे, मन से मैं एक किसान स्त्री हूँ। मेरे भीतर यह जो अखौती बोद्धिक कीड़ा प्रवेश कर चुका है, यह एक दुर्घटना ही समझो।

जब अन्य कामरेड साथी समाजवाद का स्वप्न देख रहे थे, तब वर्ष 1937 में उसने कहा- मुझे पता है जर्मन फ़ॉस्टिट हमें बंदी बनायेंगे, परन्तु यदि लाल सेना हमें उनसे स्वतन्त्र करवाने आई तो मैं आत्महत्या कर लूंगी।

मई 1936 में जर्मनी ने चैकोसलवाकिया पर आक्रमण कर दिया। अनेक खतरें झेलते हुए मिलेना इस युद्ध की रिर्पोटिंग करती रही। जर्मन ने यह बहाना बनाया कि चैक्क लोग वहाँ के निवासी जर्मन लोगों पर अत्याचार कर रहे हैं। अनेक स्थानों में चैकोसलवाकिया में पति अगर चैक्क था तो पत्नी जर्मन थी यदि पति जर्मन था तो पत्नी चैक्क। बच्चे स्वयं इसी विषय पर विवाद करते रहते।

मार्च 1939 में जब जर्मनी ने चैकोसलवाकिया पर अधिकार कर लिया तो मिलेना ने तीव्रता से उन फ़ौजियों के साथ सम्पर्क स्थापित किया जिन्हें अभी तक बन्दी नहीं बनाया गया था। उन्हें कहा कि इंग्लैंड की सेना की सहायता करो। यहाँ उसने पैगम्बर की भूमिका निभाई। वह मज़बूत तर्कों में रचित लेख समाचार पत्रों को भेजती परन्तु जर्मन सैंसर आधे से ज्यादा लेख काट देता।

सखी विलमा ने उसका साथ छोड़ दिया था क्योंकि मार्क्सवादी सिद्धान्त उसे पसंद नहीं आया था। जब पता चला कि मिलेना ने पार्टी को छोड़ दिया है तथा कामरेड उसे तासकी की शार्गिद की उपाधि दे चुके हैं तो वह मिलने गयी। दोनों सहेलियाँ बहुत लम्बे समय पश्चात् मिलीं तो ऐसे जैसे कभी अलग हुई हीं नहीं। विलमा ने कहा- मोरावीआ की नदी पुंकवा को अचानक धरती निगल लेती है, पता ही नहीं चलता कहाँ गायब हो गई। घाटियों तथा दरियाओं में वह धरती के नीचे से बहती जाती, फिर धरती में से बाहर निकल कर प्रवाहित होने लगती है। हमारी मित्रता भी कुछ ऐसी ही है। जब अलग हुई तो पता नहीं कहाँ गई, परन्तु जब मिली तो ऐसे जैसे यहीं थी, एक साथ। मिलेना ने लिखा- चैक्क होने के कारण मुझे अपने

देश का संगीत अच्छा लगता है। शब्द की अपेक्षा संगीत की धुन सुनकर मैं सम्पूर्ण अर्थों तक पहुँच जाती हूँ। एक अलाप मुझे सम्पूर्ण स्पेस में फैला देता है। लोगों के लिए स्पेस का अर्थ हवा या आकाश होगा, हमारे लिए हमारी मिट्टी ही स्पेस है। हम चैक्क यह शेखी नहीं मारते कि हम जर्मन एवं सलावकों के मध्य पुल का काम करेंगे। हमारे पूर्वज किसान थे, बाबा ने हल हमारे पिता को और हमारे पिता ने अपने बेटे को पकड़ाया, आगे वह भी इसे अपनी संतान को ही सौंपेगा। वर्तमान चैक्क ही भूतकालिक एवं भविष्यकालिक चैक्क के मध्य पुल का कार्य कर सकता है। ज्यादा डींगें मारने की आवश्यकता नहीं। चैक्क लोक-गीत या फिर संत वेंचेसलास की वाणी हम अपने बच्चों को सुनायेंगे, सिखायेंगे। हमें अन्य किसी की आवश्यकता नहीं।

मिलेना जर्मन सेना को पराग में से निकाल तो नहीं सकती थी, उसने अपने उन चैक्क बुद्धिजीवियों को सुरक्षित बाहर निकालने की योजना बनाई, जिनके पकड़े जाने पर सरकार द्वारा ईनाम की घोषणा की गई थी। मिलेना ने 22 मार्च 1939 को लिखा- जर्मनों द्वारा कब्ज़ा किए जाने का दूसरा दिन था। सभी बेचैन थे। सिपाही गलियों में घूम रहे थे। एक चैक्क लड़की घर से बाहर कोई वस्तु खरीदने के लिए निकली तो सेना को देखकर घबरा गई और रोने लगी। एक सिपाही उसके पास आया और बहुत प्रेम से कहा- रो मत लड़की। जो हुआ, उसके लिए हम दोषी नहीं। उसने लड़की को ऐसे सांत्वना दी जैसे कोई अपनी बेटी को हौंसला रखने के लिए कह रहा हो। ऐसे व्यक्तियों को मैं किस प्रकार से दोषी कह सकती हूँ? हज़ारों की संख्या में चैक्क नागरिक अज्ञात सैनिक की मूर्ति की ओर चल पड़े, हाथों में गुलदस्ते, सभी की आँखों में आँसू, न तो उच्च स्वर में रोने एवं सिसकियों की आवाज़, न भय का कोई निशान, केवल दुःख, मूक वेदना। जब हमारा यह काफिला आगे बढ़ रहा था, पहरा दे रहे एक जर्मन सिपाही का हाथ स्वयं ही अपने हैट की तरफ बढ़ा, सत्कार से सिर झुकाय। उसे अहसास था कि उसकी उपस्थिति से चैक्क लोगों की आँखें भरी हुई हैं।

उन दिनों में ज़ैडविच ने लिखा- चैकोसलवाकिया की रक्षा करती हुई मिलेना, बिल्कुल चर्चल के समान प्रतीत होती, रोशन माथा, दयालु आँखें, मुख पर साहस, पूर्ण आत्मविश्वास, उचित राजनीतिक सूझ-बूझ उसे चर्चल का रूप देती। उसकी लिखित को देखकर मैक्स ब्रोद ने लिखा- पूरा टामस मान जैसा लेखन। टामस के लेखन को अद्वितीय माना जाता था।

उसने अनेक चिंतकों को सुरक्षित सीमा पार पहुँचाया, स्वयं नहीं गयी। उसका निर्णय पराग में मरने का था। उसे पता था कि गोली खाकर मरना बहुत सरल है, केशों से पकड़कर घसीटना, गालियां, लातों, मुक्कों आदि से भरा जीवन अत्यधिक

अपमानित एवं निन्दनीय है, परन्तु किसी को तो कुर्बानी देनी होगी ही। मिलेना तैयार थी। एक दिन पिता का फोन आया, कहा- क्यों, क्या हुआ बेटी? तुम्हें अभी तक बंदी क्यों नहीं बनाया जर्मनो ने? तुम्हारे जैसी स्वाभिमानी लड़की इतने समय तक जेल से बाहर तो नहीं रहनी चाहिए थी। मिलेना ने कहा, पता नहीं। परन्तु कुछ दिन बाद गैसटापो ने उसे पूछताछ के लिए बुला लिया। यह प्रश्नोत्तर हुए :

प्रश्न - तुम्हारा यहूदियों के साथ कोई सम्पर्क है?

मिलेना - हाँ है, कोई आपत्ति?

प्रश्न - तुम्हारा प्रेमी कहाँ है?

मिलेना - बहुत समय पहले देश छोड़ गया है।

प्रश्न - तुम्हारी बेटी का पिता यहूदी है?

मिलेना - अफ़सोस, यहूदी नहीं है।

प्रश्न - बकवास बंद करो। हमे ऐसे उत्तर सुनने की आदत नहीं है।

मिलेना - मुझे भी ऐसे प्रश्न अच्छे नहीं लगते।

मिलेना को न तो बंदी बनने से कोई भय था, न ही यातनाओं का सामना करना कोई मुसीबत। चिंता थी तो केवल अपनी बेटी हौंजा की। उसका क्या होगा? आखिर जब मिलेना को बंदी बनाके गैसटापो यातना केन्द्र में ले गयी तो नाना नातिन को ले गया। पराग यूनिवर्सिटी तथा सभी कॉलेज हमेशा के लिए बंद कर दिये गये। विरोध में विद्यार्थियों ने जूलूस निकाला तो एक सौ बीस विद्यार्थियों को जर्मनो ने गोलियों से भून दिया, तथा हज़ारों को यातना केन्द्र में भेज दिया।

जर्मन लोगों द्वारा जो अपमान सहना पड़ता, उसका कोई दुःख नहीं। मिलेना को अत्यधिक पीड़ा उस समय होती जब कम्यूनिस्ट कैदी सखियाँ उसका अपमान करतीं, मुक्के और लातों से मारना जैसे आम बात थी। दोष मिलेना का था। वह इतनी स्वाभिमानी थी कि आँखों तथा सिर को झुकाती नहीं थी। कुछ कैदी स्त्रियाँ उसका सम्मान भी करती थीं, मगर चोरी चोरी डरते हुए। एक शाम कैदियों की गणना की जा रही थी। मिलेना लेट हो गयी। चलो लेट हुई वह बात अलग, कम से कम तेजी से चलती हुई पहुँच जाती तो निगरान समझ जाती, कि लेट आने पर इसे पश्चात्ताप हो रहा है। आराम से आई और शांत खड़ी हो गयी। निगरान को इतना गुस्सा आया कि वह मुक्का मारने के लिए सामने आ खड़ी हुई। मिलेना ने उसकी आँखों में देखा तो निगरान का हाथ नीचे हो गया, वह अवाक् सिर झुका कर चली गयी।

मिलेना ने मारग्रेट से कहा- डर ऐसा अनुभव है जो आपको सीधा खड़े नहीं होने देता। शांत चित्त जब मैं जल्लाद की तरफ देखती हूँ तो वह समझ जाता है कि मिलेना जुल्म सहने के लिए तैयार है।

सोनटाग पत्थर-दिल अफ़सर था। उसके हाथ की छड़ी हर समय कैदियों पर बरसती रहती। मिलेना के पास से गुज़रा तो रोमांचित मुद्रा में छड़ी को मिलेना की ठोडी पर लगा दिया। मिलेना ने छड़ी पकड़ी, बांह से पकड़कर धक्का मार दिया। इस बदतमीज़ी का दण्ड कालकोठरी था, परन्तु वह खामोश वहाँ से चला गया।

अक्तूबर 1941 में चैक्क संगीतकार बीबी अंनका कुआपलोवा गिरफ्तार होकर जेल में आई। लिखती है- हम भयभीत अपनी होनी की प्रतीक्षा कर रही थीं, पता नहीं क्या करेंगे हमारे साथ। मिलेना हमारे पास आई कहा, स्वागत है लड़कियों आपका मेरे घर में। इस दहशत भरी कोठड़ी में कोई ऐसा भी था जिसने इसे अपना घर कहकर हमारा स्वागत किया। इनके पेट सूखे तथा टांगे सूजी हुई थीं।

मिलेना मारग्रेट से अकसर कहती- अब तक तो वर्तमान विषयों पर ही लिखा है। आज़ाद होने के पश्चात् कुछ अच्छा लिखूंगी। कविता लिखने की आयु तो नहीं रही, तो क्या हुआ, वार्तिक कौन सी बुरी है। काफ़का जैसा तो नहीं, परन्तु जो लिखूंगी अच्छा लिखूंगी। अब मेरे पास अत्यधिक जानकारी एवं अनुभव है। वह काफ़का के पिता का कथन दोहराती- जिस बात का मुझे यातना केन्द्र में पता लगा, वह ये कि यह गलत है कि दुःखों में व्यक्ति निखर जाता है, यह बकवास है। आग से निकल कर सोना तो क्या बनना, व्यक्ति जानवर बन जाता है।

जो कैदी स्त्रियाँ नियंत्रण से बाहर हो जातीं अर्थात् मानसिक रोग से पीडित् हो अपना संतुलन गंवा बैठती या फिर ला-ईलाज रोग से ग्रस्त हो जातीं, उन्हें जेल में बने अस्पताल में भर्ती करवा दिया जाता जहाँ एक ही ईलाज था- ज़हर का इंजैक्शन। ईलाज के लिए गई कैदी स्त्री वापिस नहीं आती थी। डॉक्टरों की एक विशेष टीम जब जेल में निरीक्षण के लिए आई तो उन्होंने कहा- अधिक बीमार रोगियों को बड़े अस्पताल में ले जाकर उपचार करना होगा। इनमें अपाहिज, टी.बी, सिफलिस की रोगी, मानसिक रोगी, दमे से पीड़ित स्त्रियाँ हैं। दो ट्रक आये, उन्हें उनमें भर कर ले गये। अगले दिन उनकी वर्दियों के जेल में वापिस पहुँचा दिया गया, पता चला कि ट्रक में ले जाकर उन्हें कब्रिस्तान में दफ़ना दिया गया है। इसके बाद यहूदी स्त्रियों की सूची बनाई गयी। सभी को दफ़नाया गया। गर्भवती स्त्रियाँ बंदी होकर अन्दर जेल में आतीं। काम तथा भूखमरी के कारण यदि गर्भपात न भी होता तो बच्चे के जन्म के पश्चात् डॉक्टर यही कहते- मृत बच्चा पैदा हुआ है। वास्तव में प्रत्येक नवजात शिशु को स्नान कराने वाले टब में डूबोकर मारा जाता।

पत्रकार होने के कारण वह कुछ नहीं भूलती थी, असंख्य सनसनीखेज घटनाओं को सुनकर दुःखी होती, दुःखी इसलिए नहीं कि चारों तरफ हैवानियत का वातावरण है, इसलिए दुःखी होती कि वह इनके विरुद्ध कुछ कर नहीं सकती। फिर कहती, और कुछ नहीं कर सकती तो क्या, पुस्तक तो अवश्य लिखूंगी।

जर्मनी ने रूस पर आक्रमण कर दिया। अनेक रूसी स्त्रियों को इस तसीहा केन्द्र में लाया गया। चैक्क तथा जर्मन कम्यूनिस्ट स्त्रियों ने इनका स्वागत किया। प्रसन्नता हुई कि असली देश की असली सकम्यूनिस्ट आन्दोलनकर्त्ता आईं हैं। इनसे अन्य बंदी स्त्रियाँ भी कुछ न कुछ सीखेंगी। उनके बदबूदार वस्त्रों को धोया। इन स्त्रियों की भाषा इतनी गंदी थी कि पुरुष भी शर्मिंदा हो जाये। न तो इन्हें इंकलाब का कुछ पता था न ही समाजवाद का। राजनीति से यह पूर्णतः अनभिज्ञ थीं। कुछेक ने स्टालिन तथा उसकी सरकार पर गालियों की ऐसी बारिश कि मल्लाह की कड़वी भाषा भी हार जाये। चैक्क कम्यूनिस्ट नेता बीबी पलैकोवा पहले कुछ दिन तो कहती रही कि सभी रूसी स्त्रियाँ एक समान नहीं होती, परन्तु बाद में उसका भी मानसिक संतुलन बिगड़ गया। मिलेना ने उसे अस्पताल में जाने नहीं दिया क्योंकि वहाँ उसे इंजैक्शन देकर मार देते। जब हालत अधिक बिगड़ने लगी तो उसे नशे का इंजैक्शन दिया गया, वह चीखती रही, मैं ठीक हूँ... मैं ठीक हूँ, क्योंकि उसे लगा कि यह ज़हर का इंजैक्शन है। फिर उसे अस्पताल ले गये। एक औरत ने बताया- उसकी स्थिति और भी दयनीय हो गई। उसने भोजन करने से इंकार कर दिया। घंटो वह दीवार का सहारा लेकर खड़ी रहती, फिर चीखने लगती- स्टालिन आई लव यू। दो सप्ताह पश्चात् जब उसका शव अस्पताल से बाहर आया, वह हड्डियों की एक मुट्ठी थी केवल। स्वयं मरी या इंजैक्शन देकर मारी गयी, किसी को कुछ पता नहीं।

कम्यूनिस्ट कैदी स्त्रियों का व्यवहार अजीब था। वह एक दूसरे से यह नहीं पूछती थी, भूखी हो, या दर्द कुछ कम हुआ या नहीं। वह पूछतीं- तुम कामरेड हो या नहीं। उनके विचार में अन्य लोग कुली, मज़दूर, बीमार, आदि नहीं कम्यूनिस्ट बचने चाहिएं, उनका यह व्यवहार देख मिलेना बहुत दुःखी होती। वह ओर भी कठोर हो जाती, मिलेना के भीतर का जज उसे ताने मारता। कम्यूनिस्ट स्त्रियाँ उसे ***बुरजुआ जनानी*** शब्दों की गाली देतीं।

जर्मनी ने जब रूस पर आक्रमण किया तो मिलेना के अलावा सभी कैदी स्त्रियाँ बहुत खुश हुईं, उन्हें विश्वास था कि रूस ही जीतेगा और उन्हें मुक्ति मिलेगी। मिलेना की राजनीतिक सूझ अथाह थी। उसने कहा- यदि स्टालिन जीत गया तो यूरोप के समस्त गुनाह माफ़ कर देगा तथा नये गुनाह करने की आज्ञा देगा। राष्ट्रीय समाजवाद तथा साम्यवाद पृथक् पृथक् नहीं हैं। कामरेड स्त्रियाँ यह बातें सुनकर

दूसरों से कहतीं- जब हम सभी आज़ाद होंगी तो मिलेना और मारग्रेट का मुख दीवार की तरफ करके गोलियों से छलनी कर दिया जायेगा।

अंततः मिलेना इस नरक में हार गयी। उसे पैरालायसिस का अटैक हुआ। उसका चेहरा बेरंग हो गया। उसे बीमारी का दुःख नहीं था, सोचती थी ज़हर का इंजैक्शन देंगे। शीशा देखकर कहती- मैं बिल्कुल उस वानर जैसी हो गयी हूँ जो हमारी गली में मदारी के आगे नाचा करता था और हम हँस-हँस लोट-पोट होकर भीख देते। जीवन छोटा मारग्रेट, मृत्यु बड़ी।

इसी अस्पताल में एक दिन पुरुष कैदियों को इलाज हेतु लाया गया। एक रोगी ने मिलेना को पहचान लिया, यह प्रसिद्ध चैक्क इतिहासकार जेविश कलंदरा था। नर्स से प्रार्थना कर मिलेना ने उसके पास एक पर्ची भेजी, लिखा था- कुछ खाने के लिए भेजूं? जेविश ने उत्तर दिया, दोबारा पर्ची मत भेजना मिलेना। तुम और मैं बहुत बड़ी मुसीबत में फंस जायेंगे। 1945 को जेविश रिहा होकर पराग पहुँच गया जहाँ 1949 में कम्यूनिस्टों ने बंदी बना उसे देशद्रोही कहते हुए मृत्यु दण्ड दिया।

जेल कमांडैंट ने मिलेना ओर मारग्रेट को आपस में बातें करते हुए देख लिया। उसने चिल्लाते हुए मारग्रेट से कहा- मेरे पीछे आओ। वह चली गई। उसके गर्म वस्त्र उतरवा कर ठण्डे वस्त्र पहनाकर तहखाने में बंद कर दिया गया। यह इमारत पहले एक बैंक होती थी जिसका स्ट्रांग रूम अब तहखानें में बना एक लोहे का बंद कमरा था। वह न तो रोयी, न ही छोड़ने के लिए मिन्नतें की, कहती- साईबेरिया में का पाँच वर्ष का नरक भोग चुकी हूँ, यह सब यातनायें उसके सामने क्या हैं? अनेक दिनों तक उसे भूखा रखा गया तो स्वप्न आते जैसे चारों तरफ ब्रैड के पर्वत हों। ठण्ड होनें के कारण स्वप्न में रेशमी राजइयाँ दिखाई देतीं। कुछ दिनों पश्चात् यह सब भी बंद। न भूख रही, न ही ठण्ड लगी। आस-पास का समस्त वातावरण शांत हो गया, इसे मौत की शांति कहोगे या जीवन की आशा, पता नहीं, परन्तु अभी वह मिलेना के लिए जीवित रहना चाहती थी। उसे मारग्रेट की आवश्यकता थी। एक दिन बंकर का दरवाज़ा खुला, एक कैदी स्त्री ने छोटा सा पैकट दिया। कहा- मिलेना ने भेजा है, छिपा लो। वह चली गई। एक मुट्ठी शक्कर, थोड़ी सी ब्रैड। मिलेना के पिता जी ने जो उसके लिए भेजा, उसमें से थोड़ा सा हिस्सा। एक दिन वही स्त्री फिर से कुछ देने आई, मारग्रेट ने पोटली को हाथ में पकड़ लिया, वह स्त्री गिड़गिड़ाते हुए कहने लगी- ग्रेट, क्या मैं मिलेना को तुम्हारी तरफ से कह दूँ कि तुम्हें किसी चीज़ की आवश्यकता नहीं? यह खतरनाक काम है, मुझे डर लगता है, कह दूँ? ग्रेट ने हाँ कर दी। वह इस अंधेरे नरक में चार मास तक बंद रही।

मिलेना को पता नहीं था कि मारग्रेट जीवित है भी या नहीं। वह कमांडर रैमडोर के पास गई। कमांडर जल्लाद स्वभाव का व्यक्ति था। मिलेना ने कहा- यदि तुम मुझे मारग्रेट से मिलवा दो तो मैं तुम्हें वो रहस्य बता दूंगी, कि तुम्हारी नौकरी बच सके। रैम हैरान होकर उछला, एक बीमार कैदी में इतना साहस? जब वह ऊल-जलूल बोलने लगा तो मिलेना ने कहा- ठीक है, तुम्हारी इच्छा। वापिस जाने लगी तो रैम ने कहा- अच्छा, तो बताओ। मिलेना ने कहा- पहले ग्रेट से मिलवाओ। रैम ने कहा- बाद में मिला दूंगा। मिलेना ने कहा- मान लूं कि यह जर्मन नागरिक का वचन है? रैम ने हामी भर दी। ऐसी बात पर जर्मन निवासी शीघ्र ही गर्वित हो जाते हैं।- प्रॉमिस ऑफ़ ए जर्मन! मिलेना ने बताया कि बीमार कैदियों को ज़हर का इंजैक्शन देकर मारा जा रहा है। यदि कोई कैदी बीमार नहीं भी है, परन्तु उसका दांत सोने का है, तो डॉ. रेज़नथल तथा नर्स ग्रेडा जो डॉक्टर की रखैल हैं, मार देते हैं। नवजात बच्चों को पानी में डूबो कर मारा जाता है। एक कैदी ने बच्चे के जन्म के पश्चात् मैंने उसकी चीखें भी सुनी परन्तु नर्स ने यही कहा कि मृत बच्चा पैदा हुआ है।

रैम कौन सा इन बातों से अनभिज्ञ था, परन्तु वह डर गया कि यह बात अब फैल गई है, मैं स्वयं पर खतरा क्यों लूं? उसने मिलेना को ग्रेट से मिलवा दिया तथा नर्स और डॉक्टर को बंदी बना लिया। परन्तु यदि कहीं रैम डॉक्टर का पक्ष लेने का निर्णय करता तो मिलेना के सिर पर गोली लगनी थी, इसका मिलेना को पता था। परन्तु फिर भी क्या फ़र्क पड़ता? मिलेना इस सबके लिए तैयार थी। ग्रेट को मिलना आवश्यक था। उसका जीवन बहुत कीमती था क्योंकि मिलेना उससे पुस्तक लिखवाना चाहती थी। मिलेना स्वयं लिखने में असमर्थ हो गई थी न।

एक दिन रैमडोर ने मिलेना से कहा- यदि तुम कैदियों की जासूसी करनी शुरू कर दो तो मैं तुम पर रहम कर सकता हूँ। मिलेना ने हँसते हुए कहा- गलत पते पर पहुँच गये हो रैम। मैं दुःखी अवश्य हूँ, परन्तु कायर नहीं हूँ, न ही मूर्ख। रैम अपने गुस्से को तो पी गया परन्तु आखिर क्या कहता, कहा- इस बात से कोई इन्कार नहीं कर सकता मिलेना कि तुम एक शानदार इंसान हो। मिलेना ने कहा- यदि तुम न भी मानो तो क्या? मैं हूँ ही जब शानदार।

काफ़्का ने मिलेना को पत्र में कुछ समय पहले लिखा था- मृत्यु तो हो परन्तु मृत्यु की पीड़ा न हो, यह इच्छा अनुचित है। इस इच्छा को अनदेखा करके भी मृत्यु का ज़िक्र हो सकता है।

एक दिन मिलेना ने मारग्रेट को कहा- मुझे अपनी पुत्री हौंजा का कोई समाचार नहीं मिला। किस रंग के वस्त्र पहनती होगी? क्या लम्बे मौजे पहनती होगी

वह? विशेष दिनों में क्या करती है? क्या पता स्कूल से हटकर सारा दिन प्यानो बजाती रहती हो? नाना अपनी नातिन के साथ वैसा ही कठोर व्यवहार करता होगा, जैसा मेरे साथ?

एक दिन मिलेना ने पिता का पत्र मारग्रेट को दिया। इस पत्र में चिंता, बेटी के प्रति स्नेह तथा वास्तविक दुःख के अतिरिक्त कुछ भी नहीं था। मिलेना ने कहा- खून के रिश्तों के प्रति स्नेह प्रकट का ढंग मेरे पिता का अलग ही है। इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता। स्पष्ट बात यह है कि वह निर्दयी हैं, ओर कुछ नहीं। मिलेना को इस बात का पता नहीं था कि गैसटापो ने उसकी बेटी पर बहुत अत्याचार किये, परन्तु उसने कोई भेद नहीं खोला, वह सिपाहियों के सामने गूंगी, बहरी हो गयी थी। उसका नाना गर्व से अपने मित्रों के सामने इस घटना का ज़िक्र करता।

सभी सहेलियों ने निर्णय किया कि 10 अगस्त 1943 को मिलेना का जन्मदिन मनाया जाये। भयभीत, कहीं यह मिलेना का अंतिम जन्मदिन न हो, उसके लिए उपहार तैयार करती रहीं। एक ने कढ़ाई की मशीन से छोटे से रूमाल पर मिलेना का कैदी नंबर लिखा, एक ने कपड़े में से लाल रंग का टुकड़ा काट कर दिल बनाया, उस पर लिखा- मिलेना। सारा मेज़ उपहारों से भर गया। इस पार्टी में नर्तकियाँ, पत्रकार, चित्रकार, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ आदि कैदी स्त्रियाँ थीं। दांतों के ब्रुश से ही अनेक चित्र बनाये गये। मिलेना यह सब देखकर रोने लगी- इतना बड़ा सरप्राईज़? फिर क्षमा मांगी कि कितने दिनों तक तुम सब से मिल नहीं सकी, परन्तु अब मैं ठीक हो जाऊँगी।

कहा करती- यदि तुम्हारे पास दो या तीन लोग हों, मेरा अभिप्राय है, केवल एक ही मित्र हो जिसके सामने कमज़ोर होने पर शर्म अनुभव न हो, जो दयालु हो, उसके सामने पश्चात्ताप कर सको, फिर आपके जैसा अन्य कौन है? आप उससे ही रहम की उम्मीद कर सकते हो जो आपसे प्रेम करता हो। दूसरों से कौन रहम मांगता है? स्वयं पर तो कोई रहम करता भी नहीं।

वर्ष 1944 में बहुत सर्दी थी। हिटलर स्थान स्थान पर हार रहा था परन्तु इधर कैदियों ने कौन सा बचना था। एक दिन में पचास पचास मौतें होतीं। कैदी स्वयं ही शवों को ढोते। अधिक ताबूत क्या करने थे? एक कफ़न में दो-दो पिंजर आ जाते। अनेक बार तो इसकी आवश्यकता ही नहीं होती थी। गड्ढा खोदते, उसमें लाश फेंकते तथा थोड़ी सी मिट्टी उस पर डाल देते। कब्र खोदने का काम भी कैदी ही करते। ठेकेदार वेडलैंड अपनी घोड़ागाड़ी पर लाशों को ढोता था परन्तु कारोबार बढ़ने के कारण उसने ट्रक खरीद लिया था।

मिलेना यह सोचकर मुश्किल से काम करती रहती थी कि कहीं उसे पूर्णतः अपाहिज मानकर ज़हर का इंजैक्शन न लगा दिया जाये। वैसे उसके भीतर का जीवन प्रवाह समाप्त हो चुका था। कभी कभी आह भरते हुए कहती- मैं जीवित पराग नहीं जा सकती। यदि वेडलैंड कहना मान ले तो मेरी लाश को पराग पहुँचा दे? उसकी जाकेट कितनी सुन्दर है, कितना नेक व्यक्ति है वह!

पहले डॉक्टर के जाने के पश्चात् अंग्रेज डॉक्टर ट्रायट आया। वह नेक युवक था। उसने मिलेना से कहा मैं तुम्हारे पिता का विद्यार्थी हूँ। मिलेना ने विश्वास कर लिया। डॉक्टर ने उसकी पूर्ण जांच की। एक गुर्दे को अलसर ने पूरी तरह नष्ट कर दिया था। इसका आप्रेशन आवश्यक था। सभी तैयारियाँ की गईं। खून कहाँ था? दिया गया। यह बात जनवरी 1944 की है। खून चढ़ने के बाद उसने खुशी खुशी अपने लाल हाथ सहेलियों को दिखाये। आप्रेशन शुरू हो गया परन्तु दुर्भाग्यवश उसे बीच में ही होश आ गया और डॉक्टर से निकाली गयी किडनी दिखाने के लिए कहा। डॉक्टर ने दिखा दी, फिर बेहोश कर दिया। चेहरा पीला था। परन्तु होश में आते ही उसके होंठो से पहले ये शब्द निकले, चैक्क भाषा में कहा- धन्यवाद परमेश्वर पिता, कृपालु पिता।

वह स्वस्थ होने लगी। उसके वार्ड में छह स्त्रियाँ मृत्यु तथा जीवन के बीच संघर्ष कर रही थीं। मिलेना को स्वस्थ देखकर उनकी आँखों में खुशी झलकने लगी, जीवन फिर से धड़कने लगा। मिलेना के पिता ने पार्सल भेजा, सभी चीज़े रोगियों में बांट दी गईं। मनहूस कमरा त्योहार में बदल गया। एक मासूम लड़की को जेल का भोजन हज़्म नहीं होता था, मरने की स्थिति में थी, मिलेना के पिता द्वारा भेजी गईं खाने की वस्तुओं को वह एकटक देखती रही। उसे उसका हिस्सा दिया गया तो उसने परमात्मा के धन्यवाद का गीत गाया। सभी उसके साथ मिलकर गाने लगीं।

मिलेना चारपाई से उठकर दरवाज़े के सामने बैठकर सलाखों में से बाहरी स्वतन्त्र दुनिया को देखने के लिए उठने का प्रयास करने लगी, परन्तु सब व्यर्थ। फिर वह रोशनदान में से ही आकाश में उड़ते बादलों को देखने लगी जो स्वेच्छा से इधर उधर जा सकते थे। तभी भार ढो रहीं कैदी स्त्रियों ने एक गीत गाना शुरू कर दिया-

खिल गए हैं देश में गुलाब।
जाना है जनाब, वहाँ जायेंगे जनाब।
रंग बिरंगे सुगन्धित खिल गये गुलाब।
जानी खिल गए गुलाब।

गीत सुनकर मिलेना ने दोनों हाथों में मुँह छिपा लिया और बहुत रोयी।

अप्रैल मास में उसका दूसरा गुर्दा भी खराब हो गया। अब सारी उम्मीदें ख़त्म। कैदी स्त्रियों ने मिलकर दिन में सूर्य के आगे अरदास की, रात हुई तो तारों के आगे हाथ जोड़ कर बैठ गईं। हालत जितनी बिगड़ती जाती, मिलेना उतने ही विश्वास से कहती- मैं ठीक हो रही हूँ। मेरे पैरों के रंग देखो, यह किसी मरती हुई स्त्री के पैर हैं? हाँ मेरे हाथों की रेखायें ज़रूर मिट रही हैं।

पिता ने कुछेक दिनों के पश्चात् सुन्दर दृश्यों वाले तीन कार्ड भेजे। यह मोज़रट कलाकृतियों की तस्वीरें हैं, मिलेना सहेलियों को बताती रहती- देखो, यह पुल। अपने मित्र फ्रेडी मेयर के साथ मैं यह पुल पार करती थी, यह संत जॉन की मूर्ति है, जिसके पीछे की तंग गली पराग के बाज़ार की ओर जाती है। यह पेंटिंग देखो- चार देवताओं के हाथों में तलवारें हैं, दरवाज़ा लांघकर हम महल के भीतर चले जाते, सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती थीं।

फिर पिता का पत्र आया, सुन्दर बसंत की बातें लिखी हुईं, बाग में पिता-बेटी द्वारा पुराने दिनों की प्रातःकाल की सैर, जंगल की सैर, पत्र पढ़कर कहा- मारग्रेट, पिता जी और क्यों नहीं लिखते?

कुछ दिनों पश्चात् पिता का पत्र आया। लिखा था- मुबारक हो बेटी। मेरी नातिन ने आठवीं की परीक्षा पास कर ली है। पढ़ने में अच्छी है। पिता ने झूठ लिखा था, मिलेना ने झूठ पकड़ लिया, आगे जो लिखा था उसे नहीं पढ़ा।

15 मई 1944 को वान ज़ेविट द्वारा भेजा हुआ पार्सल आया। मिलेना को सुनना तथा दिखाई देना बंद हो गया था। बार बार पूछती, किसका पार्सल है? बार बार बताया जाता- ज़ेविट का। उसका मन करता था बार-बार यही नाम सुनाई दे। फिर धन्यवाद करते हुए ठण्डी आह भरी, खुश होकर कहा- धन्यवाद उस परमात्मा का कि वह जीवित है। मैं समझती रही गोली से मार दी गयी है।

मिलेना के पिता को ज़ेविट ने ही बताया था कि मिलेना किस यातना केन्द्र में है। मिलेना के बाद उसे भी बंदी बना लिया गया परन्तु उसकी किस्मत अच्छी थी कि ज़मानत हो गई। मिलेना की ज़मानत का प्रबन्ध कर लिया गया, अदालत की स्वीकृति, ज़मानती बांड। वकील के घर पर बंब गिरा, सब कुछ समाप्त। मारग्रेट जेल की दैनिक क्रिया को निभाने गई हुई थी, एक कैदी भागती हुई आई और कहा- मिलेना मर रही है, ग्रेट मिलेना मर रही है। मिलेना का चेहरा शांत, चमकती आँखों से मारग्रेट की ओर देखते हुए मिलने के लिए बांहें फैलाईं। आसपास कैदी स्त्रियाँ घेरा बनाये खड़ी थीं। वह फिर से बेहोश हो गई। दो दिन पश्चात् 17 मई को हमेशा के लिए आँखे बंद हो गईं। डॉक्टर ने पिता जेसैंसकी को तार भेजी- यदि चाहो तो मिलेना के शव को पराग ले जा सकते हो।

मारग्रेट, जो जेल के बड़े दरवाज़े तक शव को छोड़ने आई थी लिखती है- हल्की हल्की बूंदें बरस रही थीं। मैं चाहती थी मेरी गालों की बूंदो को बारिश की बूंदें समझा जाये। मृत्यु से कुछ दिन पूर्व मिलेना ने मुझसे कहा था- याद है न तुम्हें? किताब लिखनी याद है न? कम से कम तुम मुझे नहीं भूलोगी। तुम में मैं जीवित रहूंगी। तुमसे लोगों को पता चलेगा कि मिलेना नाम की लड़की कौन थी। तुम मेरी हमदर्द हो, मेरी जज।

उसके इन वाक्यों ने मुझे लिखने का साहस प्रदान किया।

मिलेना की मृत्यु के समय उसकी बेटी हौंजा की आयु 11 वर्ष थी, सत्रह वर्ष की आयु तक नाना का भी देहांत हो गया। मिलेना अपने राजनैतिक तथा साहित्यिक कार्यो में इस प्रकार मशगूल रहती थी कि जिस प्रकार के स्नेहमयी वातावरण में हौंजा की परवरिश होनी चाहिए थी वैसे नहीं हुई। माँ-बेटी सहेलियों के समान रहतीं। माता-पिता का उचित प्रेम न मिलने के कारण वह लड़की समस्त जीवन दुर्घटनाओं से ग्रस्त रही। हौंजा का बेटा जान सारनी बताता है कि माँ कभी मेरी नानी के विषय में बात नहीं कर सकी। हम सब हैरान रह गये, जब हमें पता चला कि उन्होंने नानी को आधार बनाकर किताब लिखी है। इस किताब का नाम है ***काफ़का की मिलेना (काफ़का'ज़ मिलेना)*** ए.जी बरने ने चैक्क भाषा से इसका अनुवाद अंग्रेजी में किया है।

हौंजा लिखती है, "माँ की मृत्यु के एक वर्ष पश्चात् युद्ध समाप्त हो गया। मुझे विश्वास नहीं होता था माँ की मृत्यु का। एक स्त्री ने मुझे लम्बा पत्र लिखा। ये औरत जेल में माँ के साथ अंतिम सांस तक रेवंसबुरक रही थी। इस पत्र में जेल की परिस्थितियों का विस्तार सहित विवरण था, अनेक कैदियों के नाम लिखे हुए थे, परन्तु मैं इतनी छोटी थी कि मेरी समझ में कुछ नहीं आया। मुझे कुछ ओर चाहिए था, कुछ ऐसा प्रमाण जिससे यह पता चल सके कि माँ नहीं रही। पत्र लिखने वाली मारग्रेट आंटी एक दिन घर आ गयी। मम्मी के एक टूटे दांत को मारग्रेट ने संभाल रखा था। उसने मुझे वह निशानी सौंप दी।

"मेज़ के ऊपर मेरे सामने मामा का दांत रखा हुआ था, वही दांत जो उसकी हँसी में शामिल होता था, जो मेरे साथ बातें करता था। आंटी ने मुझे कहा- मेरे पास उसका अन्य कुछ नहीं, सोचा यही तुम्हें दे दूं, शायद तुम्हें अच्छा लगे। यह स्त्री नेक थी, दयालु थी परन्तु दयालु और नेक लोगों में भी कहीं कोई जल्लाद बैठा होता है। दांत देखकर मैं कांप गई। परन्तु इतना अवश्य हुआ कि माँ की मृत्यु का यकीन आ गया।

“इस निशानी ने मेरे वजूद को दो भागों में बांट दिया। मैं इसे अपने पास कैसे रखूं? मृत व्यक्ति की अस्थियों को कोई फूलदान में डालकर अपने पास रख सकता है? मैं इसे फेंक भी नहीं सकती थी। कुदरत ने मेरी सहायता की। इसे संभाल कर मैंने ऐसे स्थान पर रख दिया कि मुझे फिर कभी नहीं मिला, न ही मैंने उसे ढूंढने का प्रयास किया। व्यक्ति को यदि प्रत्येक घटना याद रहे, तो एक दिन पागल होकर आत्महत्या कर लेगा। मानव का दिमाग उतनी यादों को संभालता है, जिनका वह भार वहन कर सकता है। बड़ी चोट खाकर बेहोश हो जाना भी दर्द से बचने का उपाय कुदरत ने दिया ही है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि माँ कभी कुछ भूलती नहीं थी, जब चाहो कुछ भी पूछ लो। यदि उसमें भुलाने की शक्ति होती, तो सम्भव है वह जीवित रह सकती। उसे मारा ही उसकी स्मरणशक्ति ने है।

“मैं उसके शत्रुओं तथा मित्रों से मिली। उसके पत्र तथा लेखों को पढ़ा। काफ़्का ने मामा को जो पत्र लिखे वह पुस्तक के रूप में प्रकाशित हो चुके हैं। माँ की मृत्यु को 23 वर्ष हो गये हैं। मैंने सोचा अब उसके बारे में बताने के लिए मेरे पास कुछ बातें हैं। एक व्यक्ति को सम्पूर्ण रूप से कोई नहीं जान सकता। दूसरे को तो जानना ही क्या हम स्वयं को नहीं जानते। यह मानकर कि मामा को कोई नहीं जान सका, न जान सकेगा, मैंने लिखने के लिए कलम उठाई।

“एक दिन बातें करते हुए अचानक माँ ने कहा- हौंजा तुम किसी विदेशी से प्रेम मत करना। यदि कर लिया, तो विवाह मत करना। मान लो यदि विवाह भी हो गया तो बच्चों को जन्म मत देना। मैंने कहा- ठीक है माँ। मामा ने कहा- वायदा? मैंने कहा वायदा रहा। मैंने उस समय उस बात का वायदा कर लिया जिसके विषय में उस समय मुझे कुछ भी पता नहीं था, न ही उसका अर्थ पता था। बस मामा ने कहा वायदा करो, मैंने वायदा कर लिया। दस वर्षीय बच्ची को इन बातों का क्या पता?

“नाना ने मुझे कहा- तेरे मामा से जेल में मिलकर आते हैं। आज्ञा मिली गई। हम दोनों एक दरवाज़ा लांघकर उस तरफ देखने लगे, जिधर से उन्होंने आना था। एक स्त्री आती दिखाई दी। न तो मैं पहचान सकी, न ही नाना। लंगड़ाते देख हम समझ गए कि मामा है। हाथ और पैर सूजे हुए थे। चेहरा दुःखों के कारण बदल गया था। उसने पूछा- पढ़ाई कैसी चल रही है? मैंने कहा- हमें जबरदस्ती जर्मन भाषा पढ़ा रहे हैं। हम सीखते नहीं। हमें समझ में तो जाती है परन्तु हम अध्यापक से कह देते हैं हमें कुछ भी पता नहीं चला। मामा ने कहा- तुम सारी उम्र मूर्ख ही रहोगी। जर्मन से सुन्दर दूसरी कौन सी भाषा है इस संसार में? यदि जर्मन लोग जल्लाद हो गये तो इसमें भाषा का क्या दोष है?

"मामा इस रस्म के खिलाफ़ थी कि मिलते समय या विदायगी के समय झुक कर आदर से हाथ चूमो। कहा करती- हैलो कहो। हाथ मिलाओ। गुलामों जैसे इस स्वभाव से मुझे चिढ़ है। बातें करते हुए ऐसा लगा जैसे पलक झपकते ही समय बीत गया। मुझे याद नहीं हम कितने समय तक मिले। जब बिछुड़ने लगे, मुझे पता नहीं क्या हो गया, माँ की मनाही के बावजूद मैंने घुटनों के भार बैठकर उसके सूजे हाथ के पिछले भाग को चूम लिया। मुझे ऐसा करते देख पहले तो वह मुस्करायी फिर उसने मुझे डांटने की बजाय गले से लगा लिया। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे मेरे सिर पर आंसुओं का झरना बह रहा हो। इसके बाद वह मुझे कभी नहीं मिली। मुझे मारग्रेट आंटी ने बताया कि मिलेना ने अनेक बार उसे यह बात बताई थी।

"पुराने समय में किसने जेल के नियम बनाये थे, यह कौन था और किस देश का था पता नहीं परन्तु प्रत्येक युग में प्रत्येक देश की जेलों में एक ही प्रकार ये नियम आज भी प्रचलित हैं। किसी से कोई दुश्मनी है, या झगड़ा हो गया, जेल में आ गये। जेल के भीतर रहने वाले लोगों से भी दुश्मनी हो जाती है। परन्तु जिस व्यक्ति के कारण सज़ा मिली, या जिसके कारण जेल में झगड़ा हो गया, दुश्मन वह नहीं। दुश्मन वह है, जिसने पहली बार जेल के नियम बनाये।

"डॉक्टर ने नाना जी को मम्मी की मृत्यु का तार भेजा था, कहा था, लाश ले जाओ। नाना जी पूरी तरह से टूट चुके थे। वह जर्मन जाकर शव लाने के योग्य नहीं थे। वहीं दफ़ना कर कुछ निशानियाँ डॉक्टर ने पराग भेज दीं। हम दिन रात यही ध्यान रखते कि कहीं नाना आत्महत्या ही न कर लें। मौत के समाचार के पश्चात् वह मुझे मिलेना कहकर बुलाते थे।

"मैं जेरोमर को यह समाचार देने गई। रोने के कारण सूजी आँखों को देखकर मैं समझ गई कि उसे पहले से ही पता है।

"सबसे अच्छे मुझे लुमीर अंकल लगे। मैं उसे समाचार देने गई तो मेरे काले गाऊन को देखकर वह समझ गये। उन्होंने एक भी शब्द सहानुभूति या उदासी का नहीं कहा। उसे पता था कि इस प्रकार के शब्दों को सुनकर मैं थक चुकी हूँ। मुझसे कहा- हौंजा चलो बाज़ार चलें। हम दो घंटे इधर उधर घूमते रहे। उन्होंने मेरे साथ माँ के बारे में बातें तो कीं, परन्तु ऐसे जैसे वह जीवित हो। मुझे उनकी बातें बहुत अच्छी लगीं। मेरी थकान और उदासी दूर हो गई।"

हाफ़िज़ शीराज़ी

जिस फकीर शायर की साखी लिखने बैठा हूँ, उसका नाम न हाफ़िज़ था न शीराज़ी। माता-पिता ने उसका नाम मोहम्मद शमसुद्दीन रखा। शमस का अर्थ सूर्य तथा दीन का अर्थ धर्म। धर्म की आभा। छोटी उम्र में ही पूरा कुरान याद हो गया इस कारण हाफ़िज की उपाधि मिली। बागों के शहर, उस समय ईरान की राजधानी शीराज़ में जन्म लेने के कारण, निवासी होने के कारण शीराज़ी कहलाया। संसार उसे हाफ़िज़ शीराज़ी के नाम से याद करता है। यद्यपि शायरी में वह सूर्य था फकीरी में भी उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं था। वर्ष 1320 में उसका जन्म निर्धन परिवार में हुआ, जब वह नौ वर्ष का था तभी पिता का देहांत हो गया। माँ ने उसे बेकरी की दुकान पर नौकर लगवा दिया जहाँ वह औसतन 12 घण्टे काम करता था। आधे पैसे माँ को देता, आधे पैसे उन अध्यापकों को देता, जिनसे देर रात तक संगीत, शायरी, चित्रकारी तथा अरबी सीखता।

इससे पहले कि हम उसकी जीवन-कथा को आगे बढ़ायें, अच्छा होगा यदि हम इस रचना का प्रारम्भ उसके निजी कथनों से करें। इसका सबसे अधिक लाभ मुझे होगा। उसका सुर मण्डल, वातावरण में ऐसी मंगलमय लहर उत्पन्न करेगा कि मेरी सामान्य बातें भी विशेष हो जायेंगी। हाफ़िज़ को पिछले सात सौ वर्षो से सारा संसार शाबाश देता आ रहा है, सम्भव है उसके नज़दीक बैठने से मुझे भी थोड़ी बहुत प्रशंसा मिल जाये। ईरान में दो मास रहा तब मैंने उसके दीवान का अध्ययन अंग्रेजी में किया। प्रस्तुत है उसका कथन-

मैं आपके उजड़े खेत आबाद करूँगा।
मैं रेगिस्तानों को बाग बना दूंगा।
तुम्हारे उदास मुख को जब मैंने अपने आँसूओं से धोया,
तुम मान जाओगे कि हाफ़िज़ की झड़ियाँ,
उजड़े देश आबाद कर सकती हैं...।

... ...

तुमने मेहरबान होकर हमारी तरफ नज़र डाली,
तो अजीब अजीब साज़ लेकर रंग बिरंगे पक्षी
धरती पर उतरे।
संगीत शुरू हुआ।
तुमने नाराज़ होकर मुख दूसरी ओर किया और चल पड़े
तो आँखों में आँसू नाच उठे।

तुम साथ थे तो संगीत।
तुम दूर थे तो संगीत।
उम्र भर संगीत ने मेरी परिक्रमा की,
तेरे कारण।
... ...
मेरा दीवान पढ़ने के बाद
जब दूसरी कोई किताब खोलोगे,
उस किताब और तुम्हारी आँखों के बीच
खड़ा होऊँगा मैं।
मेरे गीत सुनने के बाद
किसी और का गीत सुनोगे,
गायक के होठों और तुम्हारे कानों के बीच
खड़ा होगा हाफ़िज़।
मैं तुम्हारे स्वाद इतने बिगाड़ दूंगा
कि आम शायर, आम संगीत तुम्हें पसंद नहीं आयेगा।
मैं बांसुरी के उन सुराखों में से नहीं
जिन पर अंगुलियाँ नाचती हैं
मैं बांसुरी का वह सुराख हूँ
जिसे यसू मसीह के होठों ने चूमा था।

तब वह इक्कीस वर्ष का था जब बेकरी की दुकान पर एक लड़की ब्रैड खरीदने आई। हाफ़िज़ ने इतनी सुन्दर कोई लड़की आज तक नहीं देखी थी। उससे पैसे लिए तथा ब्रैड लेकर चली गई। हाफ़िज़ को रोमांस की ऐसी ताकत का कुछ बोध नहीं था। उसे समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे, क्या न करे। उसने मालिक से डेढ़ महीने की छुट्टी मांगी। मालिक ने कहा- तुम्हारे स्थान पर डेढ महीना किसी दूसरे लड़के को रखना पड़ेगा, तो तुम बिना वेतन के जा सकते हो। हाफ़िज़ वेतन के बिना चला गया।

निर्धन विधवा माँ के बेटे की सूरत साधारण थी। उस लड़की की वेशभूषा को देखकर प्रतीत होता था कि वह उच्च कुल से है। उसने बुजुर्गों से सुना था और पुस्तकों में पढ़ा था कि चालीसा (चालीस दिन निरन्तर बंदगी) करने से मन की मुराद पूरी हो जाती है। इसलिए बिसमिल्लाह कहकर बंदगी करने बैठ गया। दिन बीतते गए। सप्ताह बीते। आकाश से रोशनी नीचे उतरी। धीरे धीरे रोशनी पीछे हटी तो एक सुन्दर चेहरा दिखाई दिया। फरिश्ते ने पूछा- क्या इच्छा है मन की? जो मांगोगे

मिलेगा। बहुत देर हाफ़िज़ उसकी तरफ देखता रहा। फरिश्ते ने फिर से कहा- संकोच मत करो, डरो मत। जो कहोगे वही मिलेगा।

हाफ़िज़ ने कहा- आप ईश्वर हो? फरिश्ते ने कहा- नहीं, मैं ईश्वर द्वारा भेजा गया फरिश्ता हूँ।

हाफ़िज़ ने कहा- जिसका फरिश्ता इतना सुन्दर है, वह स्वयं तो इससे भी ज़्यादा सुन्दर होगा?

यकीनन। फरिश्ते ने कहा- उस जैसी सुन्दरता अन्य कहीं नहीं। कभी सम्भव नहीं। उस जैसा वह स्वयं है केवल।

हाफ़िज़ ने हाथ जोड़कर कहा- तब मुझे वही दे दो। ईश्वर दे दो।

फरिश्ता हँसने लगा, कहा- अत्तार को मिलो। मोहम्मद अत्तार को। उसके द्वारा मिलेगा। मैं नहीं दे सकता। यह कहकर फरिश्ता लुप्त हो गया।

उसने अत्तार का दरवाज़ा खटखटाया और उसे अपना गुरू माना। जिस लड़की को प्राप्त करने के लिए उसने चलीहा रखा था, उसे वह हमेशा के लिए भूल गया। माँ ने जैसी लड़की ढूंढी, उससे विवाह कर लिया। 21 वर्ष की आयु में उसने गीत लिखने शुरू कर दिये। एशिया में उसके गीत बहुत प्रसिद्ध हुए। युवक उसके गीत गाते, क्योंकि उन्हें अनुभव होता कि यह प्रेम गीत हैं। बुजुर्ग उसके गीत गाते, क्योंकि इनमें हाफ़िज़ ने संसार से पार की रम्ज़ें हैं। जो इश्क उसने किया, उस जैसी पवित्र बंदगी अन्य कहीं दिखाई नहीं देती। उसका शेयर है :

> तेरे लिबास से पता नहीं चलता मित्र
> कि तुम किस देश से आए हो।
> तुम अपनी भाषा का पहला अक्षर बताओ,
> मैं तुम्हारी भाषा में
> अपने गीत तुम्हें सुनाऊँगा।

इस एक शेयर में उसने घोषणा की है कि वह संसार की प्रत्येक भाषा में अपना कदम रखेगा। फ़ारसी संसार में उसकी कीर्ति उसके जीवित रहते ही हो गई, अन्य भाषाओं में वह निश्चय पहुँचेगा।

वह निरन्तर अत्तार के पास जाता रहा। अत्तार नीरस तथा कठोर स्वभाव का व्यक्ति था। वह हाफ़िज़ के गीतों, गज़लों, शेयरों की प्रशंसा करने की बजाये कहता- यह झंझट मुझे पसंद नहीं। बंदगी करो।

जब हाफ़िज़ चालीस वर्ष का था तब उसके इकलौते पुत्र की मृत्यु हो गई। माँ यह आघात सहन कर सकी, वह भी बेटे के पीछे चली गई। हाफ़िज़ अकेला रह गया। अत्तार की संगति से थक चुका था। घर से लाठी उठाई ओर जंगल की तरफ

चल पड़ा। जंगल में जाकर उसने धरती पर लाठी से गोल चक्र बगाया। दूसरी बार फिर से चालीसा काटने के लिए उस दायरे में बैठ गया।

कितने दिन, कितने सप्ताह बीते, कुछ पता नहीं। फरिश्ता फिर से धरती पर उतरा। हाफ़िज़ ने आँखे खोली। आवाज़ सुनाई दी- मन की मुराद पूरी होगी। जो इच्छा है कहो। पूर्ण होगी।

हाफ़िज़ ने कहा- क्यों आया था मैं यहाँ? क्या थी मेरी मुराद? मेरी तो कोई मुराद बाकी नहीं रही। सब कुछ मिल चुका है मुझे। तुम्हें क्या चाहिए तुम बताओ। पूरी करूँगा तुम्हारी अभिलाषा।

फरिश्ते ने कहा- निस्संकोच भय मुक्त हो कहो। जो मांगोगे मिलेगा।

हाफ़िज़ ने कहा- संकोच किस बात का? भय किसका है मुझे? तुम जाओ और अपना काम करो। मेरी बंदगी में बिना मतलब विघ्न उत्पन्न मत किया करो।

फरिश्ते ने कहा- बात मानो। लाठी उठाकर अत्तार की झोंपड़ी तक जाओ। हम तुमसे प्रेम करने वाले हैं। कहना मानो हाफ़िज़ प्यारे।

हाफ़िज़ उठा। लाठी पकड़ी। धीरे-धीरे, डगमगाते हुए कदमों से वह अत्तर के निवास की ओर चल पड़ा। जब झोंपड़ी के पास पहुँचा, अत्तार हाथ में शराब के दो गिलास पकड़े उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। अत्तार ने कहा- कहाँ चले गए थे तुम बिना बताये? मुद्दत हो गई तेरी प्रतीक्षा करते हुए। हमारे बुजुर्गों ने बहुत मेहनत से यह शराब तैयार की थी लाखों वर्ष पूर्व। दो गिलास मिले हैं, उनमें से एक तुम्हारे भाग्य में था, एक मेरे भाग्य में। हाफ़िज़ को गिलास पकड़ाया। दोनों ने गिलास खाली कर दिए। एक दूसरे से गले मिले और दोनों ने गीत गाये। किसी को बताये बिना, अत्तार किसी अज्ञात स्थान पर चला गया। जाने से पूर्व वह हाफ़िज़ को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर गया। हाफ़िज़ से बादशाहों ने मुरादें मांगी। वर्ष 1389 में वह शरीर त्याग इस संसार से हमेशा के लिए विदा हो गया। उसके गीतों की पंक्तियाँ आज तक उसी प्रकार सजीव हैं :

मन मसत तू दीवानह।
मारा कि बरद खानह।
सद बार तुरा गुफ़तम
कम खुर दो सह पैमानह।

इस नज़्म में वह अपनी कविता से बातें करते हुए पूछता है :

तुम जन्म से पागल हो, मैं शराब अधिक पी गया था।
हमें घर कौन छोड़कर गया था उस दिन?

कविता कहती है- मैंने तुम्हें सौ बार कहा कि शराब के
दो तीन गिलास पीने बंद कर दो।
हाफ़िज़ कहता है- मैंने तुमसे हज़ार बार कहा है यह
पागलपन बंद करो।
कविता- चलो ऐसा करते हैं, मुझे पागलपन करने दो,
तुम शराब पीते रहो। हमें घर तो कोई न कोई छोड़ ही
जाता है।

इन पंक्तियों में 'घर' शब्द ध्यान देने योग्य है। प्रत्येक धर्म ग्रन्थ में लिखा है कि संसार घर नहीं है। यह सराय है यात्रियों की। घर अन्य कहीं है। हाफ़िज़ बता रहा है कि वह अपने घर पहुँच चुका है। हफ़ीज़ जलंधरी का शेयर है :

फकीरों का जमघट घड़ी दो घड़ी
शराबें तिरी और पैमाने तिरे।

विगत समय में हाफ़िज़ के अंग्रेजी में अनुवाद भिन्न-भिन्न लोगों द्वारा किए हुए, अध्ययन करता रहा। सबके बाद जो अनुवाद पढ़ा, वह देनिअल लदिंसकी का है तथा नाम है' द गिफ्ट, पोईमज़ बाई हाफ़िज़'। पैंगुइन कंपास ने वर्ष 1999 में इसका प्रकाशन न्यूयार्क से किया। भूमिका में वह लिखता है, "अनेक वर्ष बीत गए। हाफ़िज़ का दीवान पढ़ता रहता हूँ। मन में बार-बार इसका अंग्रेजी अनुवाद करने का विचार आता, परन्तु क्या करता, होता नहीं था। हाफ़िज़ का अनुवाद करना ऐसे है जैसे कोई अकस्मात् आपसे कह दे रोशनी का अनुवाद करो। समय बीतता रहा। हमेशा की तरह रात को भोजन किया और सो गया। हाफ़िज़ मेरे स्वप्न में आया। मुझसे कहा- तुम मेरे दीवान का अनुवाद क्यों नहीं करते? मैंने कहा- सामर्थ्य नहीं। करने की इच्छा है, परन्तु कर नहीं सकता। वह सारी रात अंग्रेजी में मुझे अपने गीत सुनाता रहा। मैं सारी रात रोता रहा। सुबह होते ही कागज़ उठाये ओर लिखना शुरू किया। जो भाग पढ़ने में अच्छा लगे, वही है जिसका अनुवाद हाफ़िज़ ने किया और मुझे सुनाया। जो निरर्थक लगे, वह मेरा दोष हे, क्योंकि वह मेरा अनुवाद है।

दो शताब्दियाँ पूर्व गेटे ने जर्मन में हाफ़िज़ का कुछ भाग अनुवाद कर यूरोप को उसकी ताकत से अवगत करवाया था। हाफ़िज़ तथा गेटे के मध्य में पाँच शताब्दियों का अन्तराल है परन्तु गेटे अपनी पुस्तक की भूमिका में लिखता है, "हाफ़िज़ तथा गेटे जुड़वाँ भाई हैं।"

"यदि कोई मुझसे पूछे कि हाफ़िज़ का पीर कौन है, " गेटे ने लिखा, "तो मैं कहूँगा- पागलपन। उस जैसा पागल दूसरा कौन होगा?"

ऐमरसन ने कहा- कितना अच्छा होता यदि मैं हाफ़िज़ जैसा लिख पाता।

हाफ़िज़ की लम्बी नज़्म का हिन्दी भाषा में अनुवाद पठनीय है-

सत्य है यह। मेरा कान था मेरे पास। कुछ समय पहले मैंने एक मछली को बेच दिया था। आराम से बैठो। कैसे हुआ यह सब कुछ, धीरे धीरे बताऊँगा। बात ही तो करनी है। जहाँ से चाहो शुरू कर दो। जिस संसार में मेरा निवास है, वहाँ प्रत्येक शब्द महान् है। जहाँ से मर्ज़ी हो बात शुरू करो। समय, स्थान, उदासी, साये, हैं ये सब। दुःख, चिंता एक दिन आयेंगे तेरे पास, गिड़गिड़ाते हुए क्षमा मांगेंगे, कहेंगे- हम झूठ कहते रहे मित्र। हम पर तुमने क्यों विश्वास किया? हाँ, बात कर रहा था मैं उस मछली की जो मेरा कान खरीद कर ले गयी थी। युवकों, यह भी सत्य है कि चन्द्रमा ने मेरे सिर का मोल लगा दिया। ठगों के समूह ने जब मुझे घेर लिया, तो मेरी प्रेमिका ने एतराज़ किया मैं बिना मतलब क्यों गहरे भेद बताता रहा? इतनी कीमती शराब को मैंने मुफ्त में क्यों पिलाई? मुझे बड़े जज की अदालत में पेश किया गया तथा वकील पेश करने के लिए जज ने मुझे आदेश दिया। मैंने कहा- अपना वकील मैं स्वयं हूँ, मैं अपना पक्ष स्वयं प्रस्तुत कर सकता हूँ। मेरा नहीं, यह मेरी अरदास का दोष था जिसने मेरे आगे खज़ानों के दरवाज़े खोल दिए और कहा- बांट दो। खत्म नहीं होंगे। इस राशि में से मैंने एक टिकट खरीदा, टिकट है सफेद बादल जो धरती को नहीं, आकाश को छूता है। स्वयं नहीं लेकर गई मछली मेरा कान, मैंने रिश्वत दी थी उसे, तब कहीं वह मेरा कान समुद्र की स्तह तक लेकर गई। अब मेरा महबूब चाहे धीरे धीरे बात करे, या धीरे धीरे चले... मुझे पता चल जाता है। समुद्र से लेकर आकाश तक मुझे उसके सांसों की आवाज़ सुनाई देती है। ऐसे ही तो फकीर मुझसे ईर्ष्या नहीं करते? इस संसार में मुझसे जैसा ताकतवर जासूस अन्य कोई नहीं। तभी तो चांद एक दिन झगड़ने लगा था मेरे साथ। उसने पकड़वाया है मुझे। इस जज की अदालत में जो पिंजरा लटक रहा है, उसमें सारा संसार बंद है। अल्लाह डर गया था कि यह पागल मुकद्दमा जीत जायेगा। वह व्याकुल हो उठा, कि इस दोषी की कीर्ति फैलेगी इस संसार में। आपने मानना नहीं, यह जज मुझे मेरे जन्म से पहले से जानता था। मेरी बातें सुनकर आपने कहना है कि यह किसी शराबी द्वारा की गई बकवास है। यही तो मैं कहता हूँ। इश्क में की हुई आश्किों की बातें व्यर्थ तो होती हैं परन्तु नशे से खाली नहीं। मैं मान जाता हूँ कि मेरी बातें बकवास हैं, आप मान जाओ कि मैं आपको प्रेम करता हूँ। आशिक खामोश नहीं रह सकता।

मनसूर के साथ जो घटित हुआ, उसे अहसास था, इस कारण वह बचकर चलता है और इशारों द्वारा समझाता है :

मेरी आँखों में अपनी तस्वीर देखकर हँसी नहीं थी हरनोटीए?
अब तू मुकर रही है। तब कौन सा मैं बुरा मानता हूँ?

गंवार संसार के सामने ऐसी बातों को माना ही नहीं करते।

शेख साअदी तथा मौलाना रूमी भी हाफ़िज़ से एक शताब्दी पूर्व शीराज़ी में ही रहते थे। हाफ़िज़ कहता है- इन मुर्शिदों को जब चलना आ गया, तब चलते ही रहे। सारा संसार घूम लिया। शीराज़ में वापिस नहीं आये। मुझे शीराज़ से सुन्दर अन्य कोई स्थान दिखाई नहीं देता।

रूम तथा साअदी महान् थे, इसमें क्या विवाद है? परन्तु हाफ़िज़ को पढ़ते पढ़ते ऐसा अनुभव हुआ जैसे हाफ़िज़ को वह सब कुछ शीराज़ में बैठे बैठे सरलता से ही मिल गया जिसकी तलाश में साअदी, रूमी संसार में घूमते रहे।

शेरशाह सूरी से पराजित होने के बाद हुमायूं ने ईरान में शरण ली। इसफ़ाहान शहर का वह महल मैं देखकर आया हूँ जहाँ हुमायूं रहता था। उस समय ईरान की राजधानी इसफ़ाहान थी। शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् उसके चार पाँच हज़ार हिन्दुस्तानी तथा खुरासानी शुभ चिंतक उसके पास आकर उसे हिन्दुस्तान पर आक्रमण करने के लिए कहने लगे। हुमायूं इतना डरा हुआ था कि उस तरफ देखना भी उचित नहीं समझता था। वाद-विवाद के पश्चात् निर्णय लिया गया कि हाफ़िज़ का दीवान लाओ और निकालो। फाल निकालना ऐसे है जैसे हम कहते हैं कि महाराज में से हुक्मनामा लो। फाल निकला- तुम्हारे सिर पर हुमा का साया है। जिधर जाओगे, सलामें मिलेंगी। हुमा वह कल्पित पक्षी है जिसके बारे में कहा जाता है कि उसका साया जिसके सिर पर पड़ जाता है, उसे ताज प्राप्त होता है। हुमायूं, पुनः आक्रमण करने के लिए तैयार हो गया तथा हिन्दुस्तान पर विजय प्राप्त की। हाफ़िज़ के कथन में इतनी ताकत है।

ग्लोब की मालकिन मलिका विक्टोरिया अपने सिर की तरफ ऊँचे स्थान पर हाफ़िज़ का दीवान रखती थी। जब कभी देश पर संकट आता, बहुत मुश्किलें आती, तो वह हाफ़िज़ के दीवान में से हुक्मनामा लेती। हाफ़िज़ का शेयर है- मेरा एक कायर विद्यार्थी प्रत्येक क्षण भय से कांपता रहता। प्रत्येक रात उसकी ऐसे व्यतीत होती जैसे प्रेतों ने पकड़ रखा हो। मैंने रहम किया, अपनी तलवार में से एक टुकड़ा काटकर उसके लिए चाकू बना दिया। पता चला है कि आज कल गहन अंधेरी रातों में वह युवक मुसीबतों की तलाश उनका सामना करने के लिए इधर उधर घूमता रहता है। दीवान-ए-हाफ़िज़ तलवार है। प्रत्येक नज़्म चाकू है। उसका शेयर है :

बच्चे की तरह ईश्वर तुम्हारी गोद में खेलने का इच्छुक है।
तब सारी कायनात की जिम्मेवारी तुम्हें संभालनी होगी।

... ...

बौने बादशाह मासूम लोगों को तालों के भीतर

बंद करके जब सो जाते हैं
हम फकीर सारी सारी रात
घूमते हैं चाबियाँ बांटतें।

...   .

सुन्दर शायरी को सलाम
सारंगी को घुटनों पर रख और सुरों को छेड़।
संसार, शायर की सारंगी है।

...   .

खुशी बादशाहों का लिबास है।
यह शाही लिबास मैं प्रतिदिन पहनता हूँ।
परन्तु कभी कभी अपने प्रिय को दुःख में देखकर
या पक्षी के रोने की आवाज़ सुनकर
मैं हाथ में ब्रुश पकड़ता हूँ
और आँख में आँसू की तस्वीर लटका देता हूँ।

...   .

चांद तुम्हें प्रेम करता है।
तभी तो हर समय देखता रहता है तुम्हारे मुख की ओर।
जब तुम अपने होठों से कोई कड़वा शब्द बोलते हो
तो चांद दोनों हाथों से अपना मुख छिपा लेता है।

...   .

आती चींटी को देखकर जिस हाथी ने रास्ता छोड़ दिया और
दूसरी तरफ से निकल गया, उस पर ईश्वर मेहरबानियों की वर्षा करता है।

...   .

तुझे ठण्ड लगी
तेरे कांपते पैरों पर मैंने अपनी कंबली रखी।
तुझे भूख लगी, मैं अपने बागों से आलू निकाल लाया।
तुझे थोड़े से सुखदायक शब्दों की ज़रूरत पड़ी
मैंने पूरा दीवान लिख दिया।
रात हुई, तुम रोने लगे कि अकेले डर लगता है।
तुम्हारे हाथ में रस्सी पकड़ा कर मैंने कहा-
अपने साथ बांध लो मुझे।
हाफ़िज़ जिसका हो गया, समस्त आयु उसी का रहा।

...   .
बाज़ार से निकलते समय
मैं धीरे धीरे चला।
ईश्वर के हाथ की रेखा के ऊपर
तेज़ कदमों से चलना मुझे गुस्ताख़ी लगी।
...   .
आपके अहसास आपके मन में से चोरी करके
मैं अपने शब्दों के लिबास पहनाता रहा।
इस बूढ़े चोर पर मुकद्दमा मत करना दयालु लोगों।
...   .
बैठो बस। आराम करो।
वियोग से बड़ी चोट कौन सी है अन्य? तुम यह चोट खाए हुए हो।
घायलों को खाना दूंगा, पानी पिलाऊँगा।
मेरे कोमल शब्द आपका आरामदायक तकिया बनेंगे।
...   .
आपने मुझे कुत्ता कहा तो क्या हुआ?
इस कुत्ते को खारिश होती है जब
यह अपनी पीठ चांद पर घिसाता है।
...   .
तुमने क्या सोचा, क्या किया, परवाह मत करो।
जब उदास हो मेरा दीवान खोल लेना
दीवान खोलकर जिस अदा से तुम मुस्कराते हो
तुम्हारी वही मुस्कान मुझे अच्छी लगती है।
...   .
ऐसा हुआ है कभी कभी
मेरे सिर को अपना दस्तरख्वान समझकर
रंग रंग के पक्षी आकर बैठ जाते हैं
शराब पीने लगते हैं, गीत गाने लगते हैं।
इतने मदमस्त हो जाते हैं कि अपने गीतों की कापियाँ
मेरे इर्दगिर्द बिखरी छोड़कर उड़ जाते हैं।
...   .
कभी कभी मैं कविता से कहता हूँ- अब नहीं।

तुम्हें दिखाई नहीं देता मैं गुसलखाने में हूँ?
परन्तु कविता मानती नहीं।
मैं कहता हूँ- सूर्य को मुट्ठी में जकड़कर
अब मुझसे पानी की बूंदे नहीं निचोड़ी जातीं।
कविता कहती है-
अच्छा तो फिर चली जाती हूँ मैं।
मेरी घोषणा यह है कि यदि संसार ने
हाफ़िज़ को शायर न माना
धरती पर आऊँगी नहीं मैं फिर कभी।

... ...

शुरू में पक्षियों के पंख नहीं होते थे। हुआ यह कि लाखों वर्ष पहले ईश्वर उतरा धरती पर। इतनी सुन्दर वस्तु को देखने के लिए जंगल के जानवर समीप आते गये। ईश्वर ने गीत गाया और आकाश की ओर उड़ गया। सभी में नहीं, कुछेक जानवरों में उसे देखने और उसके गीत सुनने की इतनी प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई कि कुछ दिनों में ही उनके पंख निकल आये। हाफ़िज़ की उड़ान का यही रहस्य है।

... ...

चोरों को बड़ा हीरा मिला, हंसिनी के अण्डे से भी बड़ा। इतना कीमती कि हज़ार घोड़े खरीदे जा सकते हैं, बेशक शीराज़ में दो हज़ार एकड़ ज़मीन खरीद लें। खुशी में शराब पी। एक दूसरे पर विश्वास न होने के कारण हीरा तोड़कर टुकड़े आपस में बांट लिए। कोई कीमत नहीं रही। जब तुम ईश्वर का जिक्र करते हो तब कीमती हीरा टूटता है।

... ...

तुम ईश्वर हो तुम्हें पता नहीं।
ईश्वर को घसीट कर तुम चींटी के सुराख में घुसा रहे हो, यह होगा नहीं।

... ...

एक खानाबदोश भ्रम, लाचारी में इधर उधर भटक रहा था।
ईश्वर ने कहा- हो जाओ। भ्रम सत्य हो गया।

... ...

ईश्वर को रिश्वत कैसे देनी है, मुझसे सीखो।
मेरी फरिश्तों जैसी धुनों को सुनो और सीखो।

... ...

ठण्ठ से कांपता, भूखा, माँ से बिछुड़ा कतूरा रो रहा था,
हाथ में उठाया, घर ले आया। हल्के गर्म दूध में शक्कर घोलकर उसके आगे चाटने के लिए अंगुलियाँ की तो कतूरे को मेरे एक हाथ में पाँच मातायें दिखाई दीं।

... ...

शराब की भरी घोड़ागाड़ी में से शाम को एक बोतल नीचे गिरी और टूट गई। अनेक पतंगे और उनके रिश्तेदार आए और पीने लगे। दो तीन कनक के खेत में चले गये तथा बांसुरियाँ बना लाये। दो तीन चने के खेत में से फलियाँ तोड़ लाये, डफलियाँ बना लीं गाने लगे, नाचने लगे। इतने में चांद निकल आया। एक ने पूछा- यह कहाँ से आया है? कितने समय तक रहेगा? कहाँ जायेगा फिर? तेल कहाँ से लेता है ये? ऐसी निरर्थक बहस शुरू हुई कि मेला उजड़ गया।

... ...

दूसरे से आप अच्छे हो या बुरे
जब यह सोचने लगते हो,
शराब से भरे सुन्दर पैमाने में
उस समय दरार पड़ जाती है।

... ...

मीट का कोई चालाक टुकड़ा गले से नीचे उतरने से इंकार कर दांतों के नीचे छिपा रहता है देर तक। मेरी नज़्म कई कई दिनों तक तुम्हारें दांतों में फंसी रहेगी। मेरी नज़्म को छू कर कई कई दिनों तक तुम्हारी जिह्वा नाचती रहेगी।

... ...

फकीर इतने विनम्र, इच्छाओं से मुक्त क्यों होते हैं? पता नहीं था।
अब पता चला।
मस्जिद के भीतर जाने से पहले जूते उतारने होते हैं।
शरीर तथा शरीर की ज़रूरते रूह के जूते हैं।
ईश्वर के घर के भीतर जाना है तो यह जूते उतारने होंगे।

... ...

जो जो भी तुम बोलते हो, वही आपका घर होता है।
टपक रही छत के नीचे आपके बिस्तर पर कौन सोयेगा?

... ...

दरिया की आवाज़ जब समुद्र में डूबी
दरिया ईश्वर की तरह गरजा और समुद्र की तरह हँसा।

...   .

आकाश हवा में लटका हुआ तैरता समुद्र है। तारे तैरती हुई मछलियाँ हैं। भूमियाँ व्हेल मछलियाँ हैं। कभी मैं किसी मछली की पीठ पर, कभी किसी की पीठ पर झूले लेता हूँ।

रूमी, साअदी, फिरदौसी, अत्तार आदि फकीरों को पढ़ते जाओ तो अंत में थकान हो जाती है। यह सभी भारी हैं, दर्शन से परिपूर्ण है। मेरा मस्तिष्क इतना भार उठाने से इंकार कर देता है। हाफ़िज़ ऐसा नहीं। वह एक बच्चे की तरह आपके साथ खेलता है। न स्वयं थकता है, न आपको थकने देता है। अत्यधिक सुन्दर, विशाल देश में तुम्हें ऐसे लेकर जाता है कि पता ही नहीं चलता सफ़र कब शुरू हुआ था, कब समाप्त हुआ।

धीरे धीरे ईरानी प्रोफैसर मुझे कहता है- गणना नहीं की। गणना करनी भी नहीं चाहिए। क्या आवश्यकता है? मेरे मन में कभी कभी आता है, देखना चाहिए कि संसार ने सर्वाधिक क़ुरान को पढ़ा या हाफ़िज़ के दीवान को। ईरानी युवक यदि पौप म्यूज़िक की कैस्टों को कारों में चलाते हैं वह हाफ़िज़ के गीत हैं। हाफ़िज़ को वह शक्करलब कहते हैं- मधुर होंठों वाला। मैंने कहा- कितनी मीठी भाषा है आपकी फारसी, ख़लील गंबरी। ख़लील ने कहा- नहीं जी, आप ही विनम्र होने के कारण ऐसा कहते हो। आपकी पंजाबी भाषा इससे कहीं अधिक मधुर है। हमारे पास तो शक्करलब है केवल, आपके पास शक्करगंज (शक्कर का पर्वत बाबा फ़रीद) है। फिर कैसे माने जिनके पास मीठे पर्वत हों, उनकी भाषा कैसे मीठी नहीं होगी? आप ऐसे ही हमारी प्रशंसा कर रहे हो।

प्रोफैसर अंसारी ने उसका शेयर सुनाया :

आपकी मोहब्बत में मेरी खोपड़ी फटी,
दिमाग कण कण होकर आकाश में बिखर गया।
अब कभी टूटा तारा धरती की ओर आता देखो,
तब समझ जाना हाफ़िज़ अभी तुम्हें भूला नहीं सका।
कि हाफ़िज़ तुम्हें मिलना चाहता है।

अंसारी ने शेयर सुनाकर कहा- सारे संसार में टूटे तारे को अपशकुन कहा जाता है। केवल ईरान है जहाँ बच्चे, जब रात को टूटता तारा देखते हैं तो नाचने लगते हैं तथा कहते हैं- खुशामदीद हाफ़िज़, खुशामदीद। ईटली के घर घर में उपेरा, ईरान के घर घर में शायरी।

मीठी मीठी प्रीत, छोटी छोटी हँसी,
क्या है यह हमारे मन की हलचल?
अरे क्या शानदार आवाज़!
मेरी रूह सो रही थी न, वह जाग गयी।

... ...

बहुत सुन्दर अकेले पक्षी के समान नहीं,
मेरे विशाल मन की पहाड़ी में से,
यह तो नज़्मों के समूह के समूह उड़े हैं एक साथ,
ईश्वर के शशकीरे हुए समूह,
इनके पंजों से शाखाओं के टूटने की आवाज़,
फिर धरती पर उतरने की आवाज़, बिल्कुल साफ तो है।

... ...

ईश्वर का मीन्यू मेरे आगे लाकर क्यों रख दिया?
अरे भूख लगी है, जो है, वही आने दो।

अपने घर के आंगन में उसने सरू का पौधा लगाया। जब हाफ़िज़ का अंतिम समय आने लगा, तब वह पेड़ जवान होकर लहरा रहा था। हाफ़िज़ ने वसीयत में लिखा, "मुझे मेरे सरू की छाया में दफ़न किया जाये।" उसे सरू के समीप दफ़नाया गया। धीरे धीरे सरू की जड़ों ने उसकी हड्डियों को अपने आलिंगन में ले लिया, जैसे अपनी भुजाओं का घेरा वह अकसर सरू के इर्द-गिर्द डाल लेता था।

मकबरा बनाया गया परन्तु समय पाकर वह कण कण होकर बिखर गया। उसका भारतीय प्रशंसक अवतार मेहर बाबा हाफ़िज़ का मकबरा देखने गया। वह उदास हुआ। जितने पैसे लेकर गया था, सारे दे आया और कहा- मेरे पास पैसों की कमी नहीं। आपके पास कला का ख़ज़ाना है। कला आपकी, पैसा मेरा। हिन्दुस्तान आकर भी वह पैसे भेजता रहा। उसके उद्यम से शीराज़ में 1925 में पुनः उसका शानदार मकबरा तैयार किया गया। पहले मकबरे को गिराया नहीं गया, पुराने को ऐसा बना दिया जैसे नया तैयार किया हो।

मुझे बताया गया कि उसकी पाँच हज़ार नज़्में थीं, अब केवल पाँच सौ रह गई हैं। शेष को मौलवियों तथा हुकुमतों ने नष्ट करवा दिया। मैंने सोचा अतिशयोक्ति हो सकती है, क्योंकि व्यक्ति को मिथ्या बनाने में कितना समय लगता है? परन्तु मुझे एक स्थान यह प्रमाण मिल गया कि उसने ऐसा कुछ लिखा था जो आपत्तिजनक हो। चोर आपकी सौ वस्तुएँ ले गये। कानून यह कहता है कि जिसके पास से एक

वस्तु भी बरामद हो गई, अन्य 99 वस्तुएँ भी उसके पास ही होंगी। उसका शेयर सुनो :

मेरे शब्द भूखे सूर्य की खुराक हैं।
धरती के होंठो की मुस्कान से पता नहीं चलता?
कि रात यह मेरे साथ सोई थी?

अर्थात् मार खाने का सामान उसने तैयार किया हुआ था। वह स्वेच्छा से अल्लाह के नाम रखता। जो नाम कतूरे या बलूंगड़े का, उसी नाम से माला जपने लगता। पूछने पर हँसने लगता, कहता - कुत्तों, बिल्लों को आपकी भाषा समझ में नहीं आती, परन्तु जब नाम लेकर बुलाते हैं तो भागे चले आते हैं। इसी कारण यह नाम रखे हैं। नाम जो चाहे रख लो अपने बलूंगड़े का, क्या फ़र्क पड़ता है? उसी नाम से पुकारने पर वह छलांगे लगाता आयेगा।

एक बार हुकुमत ने उसे शीराज़ में से निकल जाने का आदेश दिया। कॉलेज में पढ़ाता था, नौकरी से हटा दिया गया, यद्यपि कॉलेज उसके मित्र का था। उसने निर्णय लिया कि यदि शीराज़ में नहीं रहने देंगे तो हिन्दुस्तान चला जाऊँगा। वह हिन्दुस्तान के लिये चल पड़ा परन्तु बाद में उससे प्रार्थना कर वापिस बुलाया गया।

जैसे हमारी लोक-धारा में चांद चकोर की प्रेम-कथा है, वैसे ही ईरान में बुलबुल और गुलाब का इश्क है। हाफ़िज़ का कथन है- बुलबुल ने गुलाब से कहा- अभिमान मत करो। हवा का झोंका आयेगा, तुम पंखुड़ी पंखुड़ी होकर गिर जाओगे। तुम्हारा निशान तक नहीं रहेगा। अभिमान मत करो। गुलाब ने कहा- मैं तो तुम्हारी किसी बात का बुरा नहीं मानता। अब तुमने जो बात की है, वह सत्य है। फिर भी मैंने तुम्हें यह कहना हूँ कि जिससे प्रेम करते हो उससे ऐसी बातें नहीं करते।

ईरानी लोगों का विश्वास है कि पतझड़ में बुलबुलें सूखी शाखाओं पर बैठकर जो गीत गाती हैं, वह वास्तव में उनकी प्रार्थनाए हैं। इन प्रार्थनाओं को सुनकर ही ईश्वर, पत्ते, फूल और फल भेजता है। वारिस शाह ने भी लिखा है, "सेवण बुलबुलां बूटेयां सूकेयां नू, फेर फल लगण नाल डाल दे नी। वारेशाह जो गए सो नहीं मुड़दे लोकी असा थीं आवणा भालदे नी।" कोयलों का आगमन बसंत में होता है। हाफ़िज़ की रूबाई में बुलबुल और कोयल में विवाद शुरू हो गया कि बाग की मालकिन दोनों में से कौन है। कोयल अपना अधिकार बताती है, बुलबुल अपना। जिस वृक्ष पर बैठी बहस कर रही थीं, उसने कहा- लड़कियो, शोर किस बात का। बसंत में तो सभी आ जाते हैं। थोड़े दिनों तक पतझड़ आने वाली है। पता चल जायेगा की बाग की मालकिन कौन है।

मौलाना रूमी

शमस्स तबरेज़, रूमी और हाफ़िज़ शीराज़ी, यह सभी शायर संसार को ईरान द्वारा दिए गए उपहार हैं। आठ सौ वर्ष पूर्व का रूमी पुराना प्रतीत ही नहीं होता। यह सही है कि इन शायरों के विचारों तथा कविताओं का आनन्द जो फारसी में प्राप्त होता है, वह अनूदित कृतियों में प्राप्त नहीं होता, परन्तु इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं, क्योंकि पंजाब के वर्तमान शासकों ने उर्दू, फारसी की शिक्षा को स्कूलों में से एक सर्कुलर द्वारा समाप्त कर दिया था। जब इन भाषाओं को बंद करने की घोषणा की गई तो किसी ने भी इसके प्रति विरोध व्यक्त नहीं किया। रूमी का शेयर है :

हो जाये कोई दूर
अपनी जड़ों से,
तो आवाज़ भी यदि देगा,
देगा अपनी जड़ों को,
आवाज़ की गूंज वापिस आएगी हुंगारे के समान
तो आएगी अपनी जड़ों की ओर से ही।

30 सितम्बर 1207 ई. को रूमी का जन्म बलख़ नगर अफ़गानिस्तान में हुआ। पिता का नाम बहाऊद्दीन था तथा माँ मोमित खातून। पिता प्रथम खलीफा अबू बकर के वंश में से थे तथा माँ चतुर्थ खलीफा हज़रत अली के वंश की थी। इस्लामी परम्पराओं में यह वंश शिरोमणि थे। जहाँ कहीं भी यह परिवार गया, सम्मानित हुआ। बहाऊद्दीन एक बड़ा विद्वान् था तथापि सादगी का जीवन व्यतीत करता था। उसे सुलतानि-उलेमा (विद्वानों का बादशाह) की उपाधि प्राप्त हुई थी। सुबह से लेकर दोपहर तक वचन विलास सुनने हेतु प्रत्येक व्यक्ति को आने का अधिकार प्राप्त था, परन्तु बाद दोपहर का समय केवल विद्वानों के आगमन का था।

रूमी के जन्म से पाँच शताब्दियों पूर्व तक बलख़ नगर इस्लामी शिक्षा का प्रसिद्ध केन्द्र था। बगदाद के पश्चात् बलख़ का नाम ही लिया जाता था। उसका पूरा नाम था जलालुद्दीन मोहम्मद बिन हुसैन बलख़ी। बिन का अर्थ पुत्र, इसलिए हुसैन अल बलख़ी बहाऊद्दीन का पुत्र जलालुद्दीन मोहम्मद। रूमी तब सात वर्ष का था जब परिवार अनातोलिया चला गया। वर्तमान तुर्की का नाम उस समय अनातोलिया था। इतालवियों ने जिन देशों पर अधिकार किया हुआ था, उनकी प्रजा को रोमन या रोमी कहते थे। तुर्की निवासी भी रोमी या रूमी कहलाये। अतः इस दरवेश का जो नाम अत्यधिक विख्यात हुआ, वह मौलाना रूमी है। मौलाना का अर्थ

है महान्। भारत तथा पाकिस्तान में वह मौलाना रूमी है, अफ़गानिस्तान में उसे मौलाना जलालुद्दीन बलखी कहते हैं, तुर्की में मेवलाना रूम तथा ईरान में मौलवी रूम कहते हैं। पश्चिम में वह केवल रूमी के नाम से जाना जाता है।

वर्ष 1213 ई. को एक दिन खुरासान के बादशाह ने बहाऊद्दीन के यश के बारे में सुना तो प्रवचन सुनने हेतु वहाँ पहुँचा। प्रवचन सुनने आए लोगों की भीड़ को देखकर वह हैरान हो गया तथा अचानक उसके मुख से निकला- या खुदा, इतनी ख़लक़त। बादशाह का विद्वान् कर्मचारी, जो उस समय उसके साथ था बहाऊद्दीन से ईर्ष्या करता था, उसने तुरंत ही अपना बाण चलाया- बंदा परवर! यदि शीघ्र ही इसका इलाज नहीं किया तो यह शख़्स आपकी हुकुमत के लिए खतरा बन सकता है।

अपने वजीरों के साथ परामर्श करने के पश्चात् बादशाह ने अपने शस्त्रागार, ख़जाने तथा दुर्ग की चाबियाँ एक पत्र सहित बहाऊद्दीन के पास भेजीं। पत्र में लिखा था, "हज़ूर, हमारी प्रजा के हृदयों पर आपने हुकुमत कायम कर ली है। हमारे पास तो यही पाँच चार चाबियाँ शेष रह गई हैं, इनका भी क्या करना हैं? आप इन्हें संभालो।"

बहाऊद्दीन के संतोषमयी स्वभाव पर इस पत्र का कोई प्रभाव न पड़ा। चाबियाँ वापिस करते हुए पत्र लिखा, "बादशाह सलामत, सर्वप्रथम मेरा सलाम कबूल करो। सांसारिक बन्धनों से मुक्त मैं ईश्वर का बंदा हूँ। शान-शौकत, वैभव, शस्त्र, ख़जाने आदि सभी मेरे लिए निरर्थक है। जुम्मे की नमाज़ पढ़ने के पश्चात् मैं अपना देश त्याग दूंगा ताकि आपको कोई गलतफहमी न रहे। मेरे पश्चात् आप निश्चिन्त होकर शासन करना।"

एक से दूसरे तक होता हुआ यह समाचार प्रत्येक घर में पहुँच गया कि बलख़ में बादशाह के विरुद्ध बगावत की परिस्थितियाँ पैदा हो गईं। इतनी अफरा-तफरी मची कि बादशाह को बहाऊद्दीन से क्षमा मांगनी पड़ी और साथ ही कहा कि बलख़ छोड़कर मत जाओ। बहाऊद्दीन शांत रहे। लोगों ने सोचा कि इस फकीर ने बादशाह को क्षमा कर दिया है, अतः वातावरण शांत हो गया। शनिवार की रात वह बिना किसी को बताये वह परिवार सहित चले गए, कहाँ? किसी को कुछ पता नहीं। निर्णय केवल इतना था कि बलख़ राज्य में नही रहना। इस परिवार के चले जाने के कुछ समय पश्चात् चंगेज़ खान ने बलख़ पर आक्रमण कर दिया तथा केवल बलख़ ही नहीं, खुरासान को भी तबाह कर दिया। मंगोल सेना की करतूतों से संसार पूर्णतः परिचित है।

पन्द्रह वर्ष तक रूमी का परिवार खानाबदोशों की तरह देश-विदेशों में घूमता रहा। वर्ष 1228 में वह तुर्की की राजधानी कोनियां में पहुँचे। तुर्की के सुलतान अलाऊद्दीन कैकाबाद ने उनसे निवेदन किया कि वह राजधानी में रहें तथा मदरसा-इ-खुदावंदगार की स्थापना करें।

पिता को अहसास था कि उनका पुत्र परिश्रमी है, शीघ्रता से बात को समझ लेता है तथा स्मरणशक्ति भी अच्छी है, परन्तु कोई विशेष दैवी गुण भी है, जिसका उन्हें पता नहीं था। ईरान में से जाते समय यह निर्णय लिया कि फरीदुदीन अत्तार के दर्शन करते जायेंगे। यह एक महान् सम्मानित फकीर था और बड़ा शायर भी। उसकी पुस्तक ***पक्षियों की मजलिस*** (कॉनफ्रेंस ऑफ द बर्डज़) विश्व प्रसिद्ध है जिसके विषय में फिर कभी लिखूंगा।

पिता, पुत्र अत्तार से मिलने के लिए जा रहे थे तब पिता जी आगे तथा रूमी उनके पीछे पीछे आ रहा था। अत्तार के आसपास उनके प्रशंसक बैठे थे। अत्तार ने जब उन दोनों को आते हुए देखा तो प्रशंसकों से कहा- वह देखो चमत्कार, नदी के पीछे पीछे समुद्र चला आ रहा है, कुदरत का करिश्मा देखो।

अत्तार ने दोनों का भव्य स्वागत किया। आशीर्वाद देकर बालक रूमी को अपनी पुस्तक ***असरारनामा*** भेंट की। इस मुलाकात ने रूमी के जीवन को इतना प्रभावित किया कि वह हमेशा के लिए स्थिर हो गया। रूमी की शायरी पर ***असरारनामा*** का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। दूसरा प्रभाव उसने हकीम सनाई का स्वीकार किया। अपनी मसनवी में रूमी दोनों का विवरण देते हुए उनकी पंक्तियों का प्रयोग करता है तथा उनके विषय में लिखता है :

अत्तार रूह बूदो सनाई दो चश्मे ऊ।
मा अज़ पए सनाई ओ अत्तार आमदेम।
(अत्तार रूह है, सनाई उसकी दो आँखें हैं,
इसके पश्चात् शेष जो बचता है, समझ लो मैं हूँ।)

रूमी ने संगीत विद्या प्राप्त की। जिन दो साज़ों में वह अत्यधिक निपुण था, वह हैं बांसुरी और रबाब। इनका वादन भी करते, तथा कला निपुणों से इन्हें सुनते भी रहते। कहा करते, जो यह समझते हैं कि बांसुरी में से हवा निकलती है और संगीत उत्पन्न करती है, अनजान हैं। इसमें से रूह की आग निकलती है तो सुर बनता है। बांसुरी में से यदि आग नहीं निकलती तो वह बांसुरी नहीं। जिस वस्तु में आग नहीं होती, वह जीवित नहीं होती। यह रहस्य वही समझ सकता है जो देखने में ऐसा प्रतीत हो कि होश में है, परन्तु वास्तव में बेहोश हो।

29 अक्तूबर 1244 के दिन एक असाधारण घटना घटी। उस दिन संसार के महान् दरवेश शम्मस तबरेज़ ने कोनियां में कदम रखा। पूरा नाम था- शम्मस्सुदीन मोहम्मद इबने अली इबन मलिक दाद तबरेज़ी। इसके आने से शहर में हलचल शुरू हो गई।

शम्मस तबरेज़ की रूमी से मुलाकात की अनेक रोचक साखियाँ हैं। सभी साखियों का एक ही अर्थ है कि इन दो दरियाओं की होनी यही थी कि एक दूसरे से मिलकर सम्पूर्णता को प्राप्त करें। कहा जाता है कि आज़रबाईजान के शहर तबरेज़ में शम्मस को उसके उस्ताद कमाल्लुदीन जुनैदी ने यह कहकर भेजा- कोनियां जाओ। एक दिलजला फकीर है वहाँ पर। उसे मिलो। दूसरी साखी यह है कि तबरेज़ ने ईश्वर से प्रार्थना की- पिता, किसी ऐसे शख्स से मिलाओ जो मेरा तेज सहन कर सके। आवाज़ आई- रूम के शहर कोनियां में जाओ। प्रिय व्यक्ति मिलेगा। यह साखी इस तथ्य की ओर संकेत करती है कि पुस्तकीय ज्ञान से पार पहुँचने पर रूहानी संसार प्राप्त होता है।

तबरेज़, रूमी की दरगाह पर पहुँचा। जब मुलाकात हुई तब रूमी विद्यार्थियों को पढ़ा रहे थे। रूमी के सामने पुस्तकें रखी हुई थीं तथा समीप पानी का कुण्ड था। तबरेज़ ने पूछा- ये पुस्तकें किस विषय से सम्बन्धित हैं? रूमी ने कहा- इसमुलकलाम, परन्तु तुमने क्या लेना इन सब बातों से? शम्मस ने पुस्तकें उठाईं तथा कुण्ड में फेंक दीं। क्रोधित हो रूमी ने कहा- यह क्या किया? शम्मस ने कहा- यह वो है, जिसे तुम नहीं जानते। सूखी पुस्तकें बाहर निकाल लीं। सूखी पुस्तकों को देखकर रूमी ने पूछा- यह कैसे हुआ? शम्मस ने कहा- तुम नहीं जानते। यही सब बताने आया हूँ। इतनी जल्दबाज़ी नहीं किया करते। इस घटना के पश्चात् रूमी ने तबरेज़ को अपना गुरू मान लिया। यह साखी इस बात की ओर संकेत करती है कि रूमी ने तबरेज़ की ताकत को स्वीकार कर लिया। इस मुलाकात के समय तबरेज़ की आयु साठ वर्ष थी तथा रूमी 37 वर्ष का था। फ़ारसी जगत उसे शम्मस तबरेज़ के नाम से ही जानता है। तबरेज़ी ईरान का शहर है। पश्चिम लेखकों ने अज्ञानता वश उसे अशिक्षित फकीर कहा है। उसकी इस्लामी शिक्षा, अरबी फारसी शायरी के साथ परिचय तथा उच्च रूहानी मंजिलें विस्मित करने वाली हैं। उसके समकालीन लेखकों ने अत्यधिक परिश्रम करते हुए ***शम्मस के संवाद*** पुस्तक तैयार की। इस पुस्तक की तैयारी में रूमी का बेटा सुलतान वलद भी शामिल है।

रूमी तथा तबरेज़ दोनों सदैव साथ रहते हुए धर्म रहस्यों पर वार्तालाप करते रहते। रूमी न तो लोगों से मिलते, न प्रशंसकों से। ऐसी स्थिति में आपत्ति होना स्वाभाविक था। प्रशंसकों ने धीरे धीरे इस प्रकार की विरोधात्मक परिस्थितियाँ उत्पन्न

कर दीं कि 20 फरवरी 1246 को तरबेज़ वहाँ से चला गया। रूमी बहुत उदास हुआ। उसने उन लोगों से भी बात करनी बंद कर दी जिनका कोई दोष नहीं था। कई महीनों पश्चात् दमिशक (सीरीआ) से तबरेज़ का लिखा हुआ पत्र आया तो रूमी बहुत खुश हुआ। इस एक पत्र के उत्तर में रूमी ने तीन पत्र लिखे।

शिष्यों को अनुभव हो चुका था कि तबरेज़ नहीं तो रूमी के लिए किसी का कोई महत्त्व नहीं। वह किसी से बात नहीं करते थे, बंदगी में मग्न रहते। कुछ शिष्य सीरीआ गये, रूमी की स्थिति से तबरेज़ को अवगत कराया तथा उसे मनाकर वापिस ले आये। रूमी के पास आकर उसने ***मकालात*** (लेख-संग्रह) पुस्तक की रचना की। इस पुस्तक में उसने लिखा है, "मौलाना रूमी के पास मैं आ तो गया हूँ, परन्तु इस शर्त से कि मैं उसका उस्ताद नहीं हूँ। खुदा ने अब संसार में ऐसा कोई मानव पैदा नहीं किया जो मौलाना रूम का उस्ताद कहला सके। मेरा स्वभाव है कि मैं किसी का शिष्य नहीं बन सकता। अब मैं मौलाना के मित्र रूप में यहाँ आया हूँ और अच्छी तरह जानता हूँ कि मौलाना खुदा का मित्र है, मेरा नहीं।"

मौलाना रूमी ने इस समय गज़लों तथा नज़्मों के दीवान की रचना की, जिसका नाम रखा- ***दीवानि शम्मस तबरेज़***। यह एक प्रकार से अपने मित्र को एक समर्पण था। जीवन के अंतिम 12 वर्ष उसने मसनवी लेखन में व्यतीत किए। यह ग्रन्थ 6 जिल्दों में है तथा 26,800 द्विपद छन्द हैं। यह ग्रन्थ उसका शाहकार है। संसार की समस्त उत्तम भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है। अंग्रेजी भाषा में यह फारसी की अपेक्षा अधिक प्रसिद्ध हुआ है।

उसकी शायरी फ़ना तथा बका इन दो मंजिलों के मध्य अपना पुल बांधती हैं। फ़ना है स्वयं को खत्म करना, बका का अर्थ अल्लाह में अभेद है। फ़ना पहली सीढ़ी है बका अंतिम। उसके परवर्ती समस्त शायरों एवं फकीरों ने उसकी ताकत के प्रभाव को स्वीकार किया। प्रस्तुत हैं उसकी नज़्मों के कुछ अनूदित भाग :

शेर

हम शेर हैं सभी के सभी
पर्दों पर लहराते हुए शेर
बढ़ रहे हैं जो आगे
हवा के प्रभाव से।
यह तो दिखाई देता है
कि बढ़ रहे हैं आगे
परन्तु हवा है, जो दिखाई नहीं देती।

...   .

वास्तव की तलाश

कहाँ मिलेगा तुझे
बाग़ ऐसा?
एक गुलाब के बदले
जहाँ मिल जायें हज़ार बगीचे गुलाब के।
कहाँ मिलेंगे तुझे
आसमान तक महकते जंगल
केवल एक बीज के बदले में?
कहाँ मिलेंगीं बरकतों से भरी हवायें
तुम्हारी एक मीठी सांस के बदले?
यह नदियों का पानी
मिल गया जो समुद्र में अंततः
तुम सोचो तो सही, यह गया कहाँ से था,
वापिस आया है क्यों?
तुम समुद्र हो अर्थों का
तेरे पास है वह पुस्तक
जिसमें हैं संसार के प्रत्येक शब्द के अर्थ
और अर्थों के आगे अन्य अर्थ।

...   .

खामोश

मुँह न खोल अपना बार बार
सीप के समान हो जा खामोश।
यह समझ कि जुबां तेरी
दुश्मन है तेरी रूह की।

यह समझकर कि इसमें कुछ नहीं
किसी वस्तु को अनदेखा मत कर।
कि इसमें मौजूद हैं वह सभी गुंजाईशें
जिनकी आवश्यकता है तेरी कला को।

फ़ना होकर मैं धरती में मिला
तो घास बन कर उगा।
दूर दूर तक फैला,
मैदानों में घास खत्म हुआ
तो मैं जानवर बना।
जानवर की खाल में मर कर
मैं वापिस आया इन्सान बनकर।
बताओ बताओ मुझे किस मौत के कारण
मुझमें कहाँ कहाँ कमी आई?
अब जब मैं मरा इन्सान के रूप में
तो प्राप्त होंगे पंख,
उड़ पाऊँगा आकाश में
फरिश्तों के साथ।

याद रख, हर शै होगी खत्म
एक उसकी सूरत को छोड़ कर।
मैं बनूंगा हिस्सा उस जहान का
जिसकी हदें पार हैं
तेरे सारे अनुमानों की हदों से।
... ...

काली खौफ़नाक रात
छोटा जुगनू टिमटिमाता हुआ निकला।
देखते ही रात ने ललकारा-
कौन मेरे विरुद्ध साजिश रच रहा है?
छोटा जुगनू डर कर पत्ते के पीछे छिप गया।
देर तक सांस रोके बैठा रहा,
डरते हुए उसने ठण्डी आह भरी
तो पूर्व में से सूर्य उदित हुआ।
न रात रही, न रात के कदमों के निशान।

रूमी को आधार बनाकर लिखित पुस्तकों की कमी नहीं। उसकी मसनवी का अनुवाद संसार की समस्त भाषाओं में हुआ है। एशिया रूमी की कला से परिचित था परन्तु पश्चिम को बहुत समय पश्चात् पता चला। रूमी का अंदाज देखोः

मैंने ईसाइयों की धरती पर क्रॉस देखे
मेरा महबूब क्रॉस में न मिला
मैंने मंदिरों में मूर्तियों को देखा
वह किसी मूर्ति में न मिला।
मैं काबे में गया, मुझे वहाँ भी नहीं मिला,
मैंने अपने मन में झांक कर देखा
वह दिखाई दिया।

उसकी नज़्म ***वापसी*** की कुछ पंक्तियाँ :

वापिस आओ मित्रो,
वापिस घरों में आओ।
नास्तिक हो या पारसी,
अग्नि पूजक हो या पत्थर पूजक,
वापिस आओ।
हमारी सूफ़ी ख़ानगाहों में से कोई निराश वापिस
नहीं गया,
यदि तुम यहाँ हज़ार बार आये,
हज़ार बार वायदा करके मुकर गये
तो क्या? फिर आ जाओ।
इस घर में प्रश्न नहीं किये जाते,
इस घर में दरवाज़े बंद नहीं होते।

एक अन्य स्थान पर लिखा- हिन्दुस्तानी सुन्दर शब्दों से महबूब को प्रेम करते हैं। ईश्वर के गीत गातें हैं, उनके चेहरे चमकते रहते हैं। मुझे उनकी बंदगी पर संदेह नहीं। मैंने तो स्वयं के विषय में बताना है कि सुन्दर शब्दों द्वारा मैं ईश्वर तक नहीं पहुँच सका। मैं खामोश हुआ तो वह मिल गया। रूमी अपने दर्शन को "प्रेम का मार्ग" बताता है। यह इस्लाम से भिन्न कोई सम्प्रदाय नहीं। रूमी का संकेत है कि मैं कट्टर मुसलमान होकर इस मार्ग पर चल रहा हूँ तो आप भी अपने अपने धर्म पर चलते हुए मंजिल प्राप्त कर सकते हो। वह कहता है- स्वर्ग क्या है? क्या सीढ़ी लगाकर आकाश में जाने का नाम स्वर्ग है? मित्रो! स्वयं को मिटा देना, स्वयं को भूला देने का नाम ही स्वर्ग है तथा वह यहीं है अन्य कहीं नहीं।

यूनानी मिस्त्री रूमी का घर बना रहा था तो एक मज़दूर ने मिस्त्री को कहा- तुम सबसे उत्तम धर्म, इस्लाम को स्वीकार क्यों नहीं करते? मिस्त्री ने कहा- पचास वर्षों से मैं ईसाई हूँ तथा यीसू मुझे प्रिय है, इस कारण इस्लाम के विषय में कभी सोचा ही नहीं। मोहम्मद को प्रेम किया, या यीसू को इसमें क्या अन्तर है? रूमी ने मिस्त्री को शाबाश देते हुए कहा- प्रेम का नाम ही धर्म है।

एक रात रूमी अपने आस-पास बैठे लोगों को प्रवचन दे रहा था तो एक तरफ से शोर सुनाई दिया। रूमी आसन से उठकर चला गया, देखा तीन चार व्यक्ति मिलकर एक को मार रहे हैं। रूमी ने पूछा- क्या हुआ? उन्होंने बताया- जी, यह ईसाई है और इसने शराब पी रखी है। रूमी ने पूछा- इसने किसी को गाली दी थी? उत्तर मिला- नहीं। फिर पूछा- इसने किसी को लात या कुहनी मारी थी। उत्तर दिया- नहीं। फिर कैसे पता चला कि यह शराबी है? एक ने कहा- जी, बेशक यह खामोश बैठा आपके प्रवचन सुन रहा था, परन्तु हमें शराब की दुर्गन्ध आ गई थी। रूमी ने कहा- पीने के पश्चात् भी इसे नशा नहीं हुआ, परन्तु आपको सूंघते ही नशा हो गया। यह खामोश बैठा भला आदमी ईश्वर की बातें सुन रहा था और आपको इतना नशा हुआ कि लातों, मुक्के मारने लगे। चुपचाप बैठ जाओ।

कोनीयां में संत ऐंफीलोकीअस गिरजाघर है जहाँ प्लैटों को दफ़न किया गया था। रूमी ने जब एकांत में बंदगी करनी होती तो वह यहीं आता था। यहूदी तथा ईसाई उसे इतना प्रेम करते थे कि उसकी शवयात्रा में हज़ारों की संख्या में लोग शामिल हुए। कीनिया के मुसलमान हाकिम की बेगम ईसाई स्त्री थी, वह रूमी की प्रशंसक थी, उसे जारजीअन लेडी कहते थे, मुसलमान एवं ईसाई दोनों ही उसका सम्मान करते थे। जिस इमारतसाज ने परिश्रम कर रूमी के मकबरे के ऊपर गुबंद बनाया, महारानी ने उससे पूछा- आपको उसमें ऐसी क्या करामात दिखाई दी जिस कारण आप उसके प्रशंसक बन गये। इमारतसाज ने कहा- ईसाई यीसू को प्रेम करते हैं महारानी, यहूदी मूसा को तथा मुसलमान मोहम्मद को। संसार के सभी धर्मों के लोग, चाहे वह राजा है या रंक, जिसे प्रेम करते हैं, उसका नाम मौलाना रूमी है, क्या यह करामात नहीं? प्रत्येक उसे अपने गुरू के रूप में जानता है, प्यारा अमीरि-कारवां। ज़ैद की साखी में लिखा है- सभी धर्म एक हैं। एक लाख वर्ष और एक क्षण में कोई भेद नहीं है। ज्ञानियों को इसका पता है।

यद्यपि उसके दो हज़ार से अधिक पद तथा रूबाईयाँ उपलब्ध हैं परन्तु मसनवी उसका शाहकार है। मसनवी में वर्णित कुरान सम्बन्धी विवरण यह सिद्ध करते हैं कि कुरान उसकी सूरत एवं वाणी दोनों पर प्रकाशित था। स्थान स्थान पर हदीसों में से उदाहरण देता है। वह इस्लामी **शरा** के **हनाफ़ी** स्कूल का पाबन्द था।

हनाफ़ी स्कूल हज़रत मोहम्मद साहिब को आदर्श मानते हुए, जो उन्होंने किया तथा करने के लिए कहा, उसका अनुयायी है। यह सुन्नी सम्प्रदाय है।

पहले शिक्षक फकीर पिता ही थे। पिता जी का एक पुराना विद्यार्थी सय्यद बुरहानुद्दीन तिरमिज़ी था। जब उसने समाचार सुना कि उसके गुरू का 16 मार्च 1230 को देहांत हो गया है तो वह अनातोलिया आया तथा यहाँ आकर रूमी की शिक्षा की जिम्मेवारी स्वयं पर ले ली। उसने नौ वर्ष तक रूमी को पढ़ाया। इस्लाम की और अधिक जानकारी के लिए उसे सीरिया भेजा गया। तिरमिज़ी सूफ़ी फकीर था तथा कविता पढ़ने में उसकी अत्यधिक रुचि थी। उसकी संगति के कारण ही रूमी की कविता अध्ययन में रुचि हुई। ईसवी 1240 में तिरमिज़ी का देहांत हो गया तो रूमी के ऊपर संकटमयी उदासी का माहौल बना रहा। वह तब तक शोकग्रस्त रहा जब तक शम्मस तबरेज़ स्वयं चलकर उसके पास नहीं आ गया। इस समय तक व्यावहारिक शिक्षा पूर्ण हो चुकी थी। तबरेज़ के साथ ने उसे रूहानी देशों की यात्रा करवाई।

शम्मस तबरेज़ से मिलने से पूर्व रूमी ने नज़्म नहीं लिखी थी। तबरेज ने उसे पूर्णतः झिंझोड़ दिया था। उसके भीतर अदृश्य संसार ने तहलका मचा दिया। उसके दीवान में पाँच हज़ार कवितायें हैं। अनेक कविताओं में वह अपना नाम लिखने की अपेक्षा तबरेज़ लिख देता है। भ्रम की कोई गुंजाईश इसलिए नहीं थी क्योंकि उसके समकालियों ने दीवान सम्पादित किया तथा यह भी सही है कि शम्मस तबरेज़ ने कभी कोई नज़्म नहीं लिखी।

उसके प्रशंसकों की अभिलाषा थी कि रूमी में शायरी के विशाल ग्रन्थ की रचना का सामर्थ्य होने के कारण सनाई तथा अत्तार के ग्रन्थों की शैली के आधार पर रचना की जाये। रूमी इसके लिए सहमत हो गया तथा मसनवी का जन्म हुआ। यह पुस्तक संसार के प्राचीन साहित्य की अमूल्य निधि है। उसके विचार, उपदेश तथा उसके लिखित पत्रों को विद्यार्थियों ने संग्रहित किया। इतने जिम्मेवार व्यक्तियों के परिश्रम के कारण ही हम आज रूमी से बातें कर रहे हैं।

तीर के समान सीधा हो जा।
टेढा-मेढा रहा तो दूर तक उड़ नहीं पायेगा।
मंजिल पर पहुँच नहीं पायेगा।

कहीं छोटी सी भी चिंगारी देखते हैं तो हम आग बढ़ने से रोकने हेतु उसे जूते के नीचे दबा देते हैं। नरक के अंगारें ईश्वर के कदमों के नीचे बुझ जाते हैं। तेरे भीतर का गुस्सा, नफ़रत तथा ईर्ष्या नरक का छोटा सा भाग हैं। भाग में वही गुण

होते हैं जो सम्पूर्णता में होते हैं, केवल मात्रा का अन्तर होता है। बंदगी करोगे तो तुम्हारे हृदय का अग्निकुण्ड बुझ जायेगा।

ईश्वर ने पैगम्बर द्वारा कहलाया था- तुम्हारे भीतर नेकी हुई तो तुम्हारी उम्मीद से अधिक पुरस्कार मिलेगा तुम्हे। नेकी करने के लिए यदि हानि भी सहन करनी पड़े तो संकोच मत करना। विश्वास रखो, जितनी तुम्हें हानि हुई, उससे हज़ार गुणा अधिक लाभ प्राप्त होगा नेकी का।

युद्ध में काफ़िरों के पराजित होने पर उन्हें जंजीरों से बांध कर लाया गया। कैदियों में पैगम्बर का चाचा अब्बास भी था। इन बंधे हुए कैदियों को देखकर पैगम्बर हँसने लगे। अब्बास ने पूछा- हमें बताया गया था कि अल्लाह के पैगम्बर में दैवी गुण होते हैं। तुम्हें हँसते हुए देखकर यह कहा जा सकता है कि घायल तथा कैदी व्यक्तियों को देखकर जो हँसता है, वह पैगम्बर कैसे हो सकता है तथा वह हमसे अलग कैसे हो सकता है? पैगम्बर ने कहा- आप गलत समझ रहे हो। आपका कष्ट देखकर मैं प्रसन्न नहीं हुआ। हँसी तो मुझे इस बात पर आई कि यह गंवार मूर्ति-पूज्य नरक की आग में जलाये जाते हैं। मैं इन्हें बलात् नरक की ओर जाने से रोक कर स्वर्ग की तरफ लेकर जा रहा हूँ। जो एक अल्लाह पर ईमान रखेंगे, वह मेरे मित्र होंगे तथा मैं उन्हें मुक्त कर दूंगा। एक आप है कि बात समझने से इंकारी हो रहे हो। संसार मुझे पसंद करे या न करे, मुझे चिंता नहीं। चमगादड़ सूर्य को पसंद नहीं करता, इससे सूर्य को कोई फ़र्क नहीं पड़ता। यदि कसौटी शुद्ध-अशुद्ध में भेद नहीं कर सकती तो कसौटी अशुद्ध है, सोने का क्या कसूर? चोरों-डाकूओं को रात ही अच्छी लगती है, दिन उन्हें अच्छा लग ही नहीं सकता।

ज़ैद की साखी

पैगम्बर ने एक सुबह ज़ैद से पूछा- नेक दिल ईश्वर के प्रिय हे ज़ैद, कुशल तो हो?

ज़ैद ने कहा- हृदय की प्रेम-अग्नि ने मुझे अनेक सप्ताह सोने नहीं दिया। दिन रात ऐसे व्यतीत होते हैं, जैसे किसी को भाले पर लटका रखा हो। उस संसार में समस्त धर्म एकरूप हो गये हैं। लाखों वर्ष तथा क्षण में कोई अन्तर नहीं रहा। भूत तथा भविष्य में कोई भेद नहीं। बुद्धि का वहाँ कहीं ठिकाना नहीं। लोगों को आकाश दिखाई देता है मुझे आकाश से पार हुकुमत का सिंहासन दिखाई देता है। जैसे मूर्ति पूजा करने वाले को सामने रखा पत्थर दिखाई देता है, मुझे आठ स्वर्ग तथा सात नरक प्रत्यक्ष दिखाई दे रहे हैं। दुष्ट और नेक लोगों की पहचान स्वयं ही हो रही है, जैसे कनक तथा बाजरे के दाने स्पष्ट रूप से अलग-अलग दिखाई देते हैं। कौन

नेक है, कौन दुष्ट, ऐसे अलग-अलग दिखाई दे रहे हैं जैसे साँप तथा मछली। उज्ज्वल मुख वाले मनुष्य काले मुख वालों से समानता नहीं रखते। जिस्म के भीतर रूह इस प्रकार कैद है जैसे माँ के पेट में विकसित हो रहा बच्चा। मृत्यु बच्चे के जन्म लेने के समान की घटना है। दुष्ट ईथोपियन कहते हैं- यह हमारी रूहें हैं। अनातोलिया की प्रकाशित रूहें सुन्दर हैं। रूहानी संसार में पहुँच जाने पर दुष्ट भी सुन्दरमुख हो जायेंगे। मुझे कयामत के दिन घटित होने वाली घटनाओं का ज्ञान है। कहो तो बताऊँ?

पैगम्बर ने होठों पर अंगुलि रखते हुए कहा- खामोश। कोई आवश्यकता नहीं। यह चर्चा अनन्त हैं। ऊँटों का कारवाँ दूर चला गया है ज़ैद। चलो तेज़ कदमों से चलते हुए उनसे मिलें। खामोश रहो।

चलते हुए ज़ैद ने कहा- परन्तु सूर्य को बगल में कैसे छिपा सकता हूँ मालिक? बुद्धि एवं पागलपन दोनों के पर्दे फट गये हैं। मुझे समझाओ कि महान् रहस्यों को प्रकट होने से कैसे रोका जा सकता है?

पैगम्बर ने कहा- आँख के आगे अंगुलि करो तो सूर्य को छिपाया जा सकता है। छोटी सी अंगुलि आँख के आगे आ जाये तो चांद तथा सूर्य पर्दे के पीछे छिप जाते हैं। छिपना तथा छिपाना सीखो ज़ैद।

ज़ैद ने कहा- शीशा तथा तकड़ी झूठ नहीं कह सकते। शीशा तथा तकड़ी बेईमानी नहीं करते, तो भी, आपका आदेश है खामोश रहना, मैं खामोश रहूँगा स्वामी। अमृत का निर्मल मधुर झरना बहता दिखाई दे रहा है। मोमन तृप्त हो रहे हैं, काफ़िर आसपास चक्कर लगा रहे हैं परन्तु पानी को प्राप्त नहीं कर पा रहे। मैं खामोश रहूंगा।

पैगम्बर ने कहा- तारों की रोशनी इतनी तीव्र है ज़ैद कि आँखें अंधी हो सकती हैं परन्तु ईश्वर ने उन्हें मोमबत्तियों जैसे कर दिया है ताकि मोमिनो को मार्ग दिखा सकें। यही तारे शैतान पर गिरेंगे तो तबाही मचा देंगे।

आप ज़ैद को इस समय देख नहीं सकते। जूते उतार कर वह अनंत रूहानियत में प्रवेश कर चुका है। आप उसे ढूंढने का प्रयास मत करो क्योंकि उसके कदमों के निशान भी लुप्त हो चुके हैं। आकाशगंगा के मार्ग पर कदमों के निशान नहीं होते। घास-फूस नहीं होता। सभी कुछ साफ एवं स्पष्ट है।

ईश्वर का ध्यान करो, वह तुम्हारा ध्यान रखेगा, तुम्हारी समस्त चिंतायें उसकी हो जायेंगी। ईश्वर ने कहा- हे पैगम्बर! केवल मोमिनों का साथ ग्रहण करना। हमने आपको ऐसी आग दे दी है जो संसार को गर्मी देगी परन्तु आग यदि राख की संगति करेगी तो बुझ जायेगी। शैतान, मुसलमान का वेश धारण करके आयेगा। उसे पहचानना।

मोहम्मद ने जब अपनी शराब को बांटा तो संसार के पहले सभी ठेके बंद हो गये। निर्धन मुसलमान फटे वस्त्रों तथा नंगे शरीर काफ़िरों से युद्ध करते हुए विजयी हुए। वे सब उस शराब के नशे में चूर थे। यदि मैं यह कहूं कि मोहम्मद के हाथ में सुराही है तो यह ठीक नहीं। वह शराब का भरा हुआ छलकता हुआ गिलास है। सुराही तो ईश्वर के हाथ में है।

पैगम्बर तक पहुँचने का मार्ग प्रेम है।
प्रेम में से हमने जन्म लिया, प्रेम हमारी माँ है।
माँ तुम पर्दों में क्यों छिप गई हो?
इस कारण कि हम काफ़िर हैं?

ईरान ने संसार को पाँच महान् पुस्तकें दी हैं- फिरदौसी का *शाहनामा,* शेख साअदी की *गुलिस्तां,* हाफ़िज का *दीवान,* फ़रीदुदीन अत्तार की *पक्षियों की मजलिस* तथा मौलाना रूमी की *मसनवी।* यदि अरबी में कुरान श्रेष्ठ हे तो फारसी में *मसनवी* फारसी का कुरान है :

मसनवी ए मौलवी ए मअनवी।
हसत कुरआं दर ज़बाँ-ए-पहलवी।

जामी ने लिखा :

मन चि गोइम वसफ़ि आं आली जनाब।
नीसत पैगम्बर वलो दारद किताब।

(उच्च शान वाले (रूमी) के गुणों का क्या वर्णन करूँ?
उसके हाथ में इल्हाम की पुस्तक है परन्तु वह पैगम्बर नहीं।)

मसनवी में रूमी बार बार शम्मस का वर्णन करता है :

शम्मस तबरीज़ी कि नूर-ए-मुतलिक हसत।
आफ़ताब असत व ज़ अनवारि हक असत।
(शम्मस तबरेज़ अल्लाह का नूर है।
वह सूर्य है, उसकी रोशनी ईश्वर की रोशनी है।)

दिसम्बर 1273 ईसवी, कोनीयाँ में अति भयंकर भूकम्प एवं तूफान आया। असंख्य लोगों की मृत्यु हुई। भयभीत लोग मौलाना के दरबार में पहुँचे तथा पूछा कि कुदरत इतनी क्रोधित क्यों है? मौलाना ने कहा- धरती भूखी है, स्वादिष्ट भोजन की अभिलाषी है। मनपसंद भोजन मिल गया तो शांत हो जायेगी। 17 दिसम्बर को मौलाना का देहांत हुआ तो कुदरत शांत हो गई। उसे उसके पिता की कब्र के समीप तुर्की में कोनीयां में दफ़नाया गया। पहले हिजरी संवत् के आधार पर उसका शहीदी दिवस मनाया जाता था, परन्तु विगत अर्द्ध शताब्दी से 17 दिसम्बर का दिन कोनीयां

में निश्चित हो गया है। लोगों का विश्वास है कि कुदरत को शांत करने हेतु उसने अपना शरीर त्यागा इसलिए उसे शहीद माना जाता है।

मसनवी की छह पुस्तकों की रचना करने के पश्चात् मौलाना ने कह दिया था :

खाकीए ई गुफ़िता आयद बेज़बां।
दर दिलि हर कस कि दारद नूरी जान।

(ग्रन्थ का शेष भाग प्रत्येक शख्स के मन में स्वयं ही बिना कहे प्रकाशित हो जायेगा जिसकी आत्मा पवित्र हो गयी होगी।)

पर शेयरों की शैली तथा विधा से सिद्ध हो जाता है कि सातवीं पुस्तक किसी अन्य की नहीं, रूमी की है। सिद्धान्त इस्लाम के हैं, रूमी ने उनकी व्याख्या नवीन ढंग से की है। शरई कहते हैं केवल अल्लाह है, उसका कोई शरीक नहीं, जो उसके किसी शरीक को माने, वह मूर्ति पूज्य काफ़िर है। अपने मत के समर्थन में वह कुरान की आयत पढ़ते हैं- नहीं है कहीं कुछ भी सिवाय अल्लाह के। रूमी कहता है फिर तो जिधर भी दृष्टि जायेगी वहाँ अल्लाह ही अल्लाह है। जब उसके अतिरिक्त अन्य कोई है ही नहीं, तो प्रत्येक कण में उसका ही जलवा है। रूमी का कथन है- समुद्र में समुद्र के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं, परन्तु अंधे को अपनी बात किस ढंग से समझाऊँ? तुमने रोटियों की टोकरी सिर पर उठाई हुई है, फिर दर दर क्यों मांगने जाते हो? बैठ कर आराम से खाओ।

सूफियों में दो प्रकार की विचारधारा प्रचलित है। प्रथम यह कि जो कुछ होता है वह ईश्वर के आदेशानुसार होता है। दूसरी यह कि मानव के लिए उद्यम आवश्यक है। प्रथम विचारधारा के लोग भाग्यवादी होने के कारण आलसी हो जाते हैं। रूमी द्वितीय विचारधारा, भाव उद्यम करने को उत्तम मानता है। उद्यम करो, तत्पश्चात् ईश्वर के निर्णय की प्रतीक्षा करो। शेयर है :

पाये दाही चूं कुनी खुद रा तू नंग।
दसत दारी चूं कुनी पिनहां नू चंग।
(अच्छे भले है तेरे पैर, तुम अपाहिज क्यों बने बैठे हो?
ठीक हैं तुम्हारे हाथ, फिर बगल में क्यो दबाये बैठे हो?)

रूमी के समय में ऐसे फकीरों की कमी नहीं थी जो बिना उद्यम के खाने के शौकीन थे। स्वयं कहा करते थे कि अल्लाह अवश्य देगा यदि भाग्य में होगा। रूमी कहता है :

जबरितू खुफतन दर-ऊ- राह मखसप।
ता न बीनी आं दर-ऊ-दरगाह मखसप।

(भाग्य में तेरा विश्वास, सो जाने के समान है।
होश में आ, रास्ते में मत सो। जब तक दर तथा
दरगाह पर नहीं पहुँचते, सोना मत।)

रूमी के दीवान में गज़लों के पचास हज़ार शेयर हैं। इतनी उत्तम रचना है कि शेख साअदी वाह वाह कर उठा और लिखा- मेरे भाग्य में उसके कदमों की धूल को माथे पर लगाना नहीं था। शीराज़ के बादशाह ने साअदी से कहा कि आज तक के फारसी भाषा में रचित साहित्य में से सर्वोत्तम गज़ल चुन कर भेजो। साअदी ने रूमी के दीवान में से गज़ल भेजते हुए कहा- इससे ऊपर कुछ नहीं।

उसकी तृतीय रचना ***फ़ीही मा फ़ीही*** है, जो मौलाना द्वारा रचित पत्रों का संग्रह है। इन पत्रों में अपने मित्रों तथा प्रशंसकों का प्रेम तो प्रकट होता ही है, धर्म रहस्य के विषय पर भी अनेक टिप्पणियाँ प्राप्त होती हैं। इन पत्रों से ज्ञात होता है कि पहले कीर्तन से जितना परहेज़ करते थे, तबरेज़ से मिलने के पश्चात् विश्वास हो गया कि कीर्तन द्वारा दीन की उच्च मंजिलों तक पहुँचा जा सकता है। कहा करते थे- अंजीर प्रत्येक पक्षी का भोजन नहीं है।

आर.ए.निकलसन ने ***मसनवी*** का परिचय देते हुए इसका अंग्रेजी में 1400 पृष्ठों का बड़ा ग्रन्थ संसार को सौंपा। जो लोग फारसी नहीं जानते, उनके लिए इससे अधिक उत्तम तथा मूल्यवान् अकादमिक कार्य अन्य कहीं नहीं है।

- असंतोषी लोभी आँखें तृप्त हीं नहीं होतीं।
  परन्तु सीपी जानती है कि खामोश रहकर संतोष न किया तो मोती नहीं बनेगा।
- गुलाबी फूलों के समीप जा कर खूनी वाक्य मत बोलो।
  मतवालों को मूर्ख कहकर उपहास मत उड़ाओ।
- कला के साथ साथ उड़ना चाहते हो तो पहले देखो कि क्या तुम्हारे जिस्म पर पंख हैं भी?
- देखने में आग की सुनहरी लपट सुन्दर प्रतीत होती है
  परन्तु उसका निर्णय है कि प्रत्येक चीज़ को राख करके काले रंग का लेप कर देना है।
- यदि अज्ञानता के कारण तुम अंधे न हुए होते
  तो सूर्य के सामने बर्फ की तरह देर तक कैसे जम कर रह सकते थे?
- दरिया में जो जीव उत्पन्न होते हैं, पुनः पुनः दरिया की ओर भागते हैं।

- तुमने अपने मन में पत्थर, लोहा तथा आग संभाल कर रखी हुई है।
  यह बताओ कि पानी यहाँ क्यों जायेगा?
- मालिक को देखकर कुत्ता पैर चूमने लगता है,
  बेगाने पर वह शेर के समान हमला करता है।
  तुम्हें अपने और बेगानों का पता कब चलेगा?
- बच्चा माँ की तरफ जाता है। शाखाएं मूल की तरफ झुकती हैं।
  बेशक दिखाई नहीं देता, घड़े का पानी धीरे धीरे हवा में
  मिलता जाता है क्योंकि वह हवा से उत्पन्न होता है।
  पानी तथा रोटी, हमारे माँस जैसे नहीं परन्तु जब हम पी खा लेते
  हैं, यह माँस हो जाते हैं।
- ईश्वर ने जो अक्ल शहद की मक्खी को दी,
  उसका भेद शेर तथा गीदड़ कैसे जान सकते हैं?
  तुम भी मित्रो, गधे के कान बेचकर इन्सान के कान खरीद लो
  फिर हमारी बात समझ में आने लगेगी।
- पुस्तकों में वर्णित वाक्य फाँसी हैं दोस्तो,
  पुस्तक के वाक्य, मारुस्थल में मृगतृष्णा हैं, तृप्त नहीं करते।

पुरातन पशु-पक्षियों की कहानियों में तोती की कथा का ज़िक्र है। पिंजरे में बंद तोती उदास रहती है। मालिक ने परदेस जाते हुए सभी से पूछा कि क्या सौगात लेकर आऊँ? किसे कौन सा संदेश देना है? उसने तोती से भी यही पूछा। तोती ने कहा- उस देश में मेरी हमसफ़र तोतों की पंक्तियाँ दिखाई देंगी, उनसे कहना पिंजरे में कैद तुम्हारी तोती उदास रोती रहती है, आपको याद करती है। यात्री ने वृक्ष पर बैठे तोतों को तोती की बात बताई। सभी ने ध्यानपूर्वक सुना। इस दर्द भरी कहानी को सुनकर एक तोता धरती पर गिरा और मर गया। वापिस आकर उसने यह घटना तोती को सुनाई। जब उसने सुना कि तोता यह बात सुनते ही मर गया तो तोती को भी ऐसा चक्कर आया कि वह मर गई। मालिक हाथ मसलने लगा कि उसने फिर से वही मूर्खता की। परदेसी तोते को मृत जान यह तोती मर गई। मेरे जैसा दुष्ट कौन होगा? उसने पिंजरे का दरवाज़ा खोला तथा मृत तोती को टांग से पकड़ कर बाहर फेंक दिया। जैसे ही उसने तोती को फेंका, वह झट से उड़ गई। हिन्दुस्तानी कथाकार तोते तथा तोती के मरने को छल कपट द्वारा स्वतन्त्र होने की चालाकी बताते हैं। रूमी इसे अन्य अर्थ देते हुए कहता है- एक मेहमान ने पिंजरे में कैद तोती से पूछा कि तुम्हारी दृष्टि इतनी तीव्र है कि मीलों दूर तक साफ़ देख सकती है, क्या तुम्हें फांसी दिखाई नहीं दी? तोती ने कहा- दुर्भाग्य हो तो आँखों पर सफेद दिन में

पर्दा पड़ जाता है। वह तोते तोती की मृत्यु को कपट या छल नहीं कहता। वह कहता है, शारीरिक आवश्यकताओं को दबा लोगे, स्वयं को मार लोगे तब स्वतन्त्र होकर आकाश में उड़ोगे। तुम्हारी वासनाएँ तुम्हारा मज़बूत पिंजरा है। इस पिंजरे में से निकलने का यही रास्ता है, अन्य कोई नहीं।

- प्यासा व्यक्ति संसार में पानी की तलाश में घूमता रहता है। वह नहीं जानता कि पानी भी उसकी तलाश में घूम रहा है।
- जिस शब्द के कारण भटक जाओ, वह शब्द नास्तिकता का था या ईमान का, एक ही बात है।
- जिस नक्शे पर चलते चलते यदि मित्र से बिछुड़ जाओ वह नक्शा बुरा था या अच्छा, एक ही बात है।
- खुशहाली के समय जो साया बन कर रहते हैं, बुरे समय में तेरा साथ छोड़ देंगे। तेरी दुर्गति देखकर दूर से ही कहेंगे- कब्र में से यह मुर्दा कैसे बाहर निकल आया।
- अरे दुनिया, मैंने देख लिया तुझे। पुरानी मिट्टी के अतिरिक्त तुम कुछ नहीं। न तुम्हारा जन्म हुआ, न ही तुम उपजी, न तुम्हें मंजिल मिली।
- यदि संसार मूर्खों, बेशर्म लोगों से भरा न होता, तो पैगम्बरों को करामात दिखाने की क्या आवश्यकता थी?
- जैसे गिलास खाली होने पर फिर से भर लिया जाता है, सूर्य अस्त हो अगले दिन फिर उदित हो जाता है, तुम भी सूर्य हो रूमी, अपना बलिदान देकर पुराने अंधकारमयी संसार को प्रकाशित करो।
- पिस्सू से रुष्ट होकर अपनी कंबली को आग में मत जलाओ।
  जब तुम्हें सुनना आ गया तो मैं तुम्हारे कानों में सोने के कुण्डल पहनाऊँगा।
- कुण्डलों का नाम सुनकर खुश हो गया हैं? यह तो कुछ भी नहीं, मैं तुम्हें सोने की खान बना दूंगा। चांद नहीं, मैं तुम्हें कहकशाँ पहना दूंगा।
- तुम अहंकार के कैदी हो, तुम्हारा क्या इलाज करूँ?
  यदि तुम लोहे के पिंजरे में कैद होते तो मैं छैनी हथौड़े से लोहा काट कर तुम्हें स्वतन्त्र कर देता। तुम्हारा अहंकार कैसे काटूं?
  आग, लकड़ी के ढेर से कब डरती है?
  कसाई भेड़ों के समूह से कब डरता है?
- नकल कर के तुम बुलबुल जैसी आवाज़ निकाल सकते हो,
  परन्तु बुलबुल फूलों से क्या बातें करती हैं, तुम्हें क्या पता?

- बहरा व्यक्ति बातें करने वाले के होंठ हिलते देखकर बात को समझ नहीं सकता।
चमगादड़ सूर्य की प्रशंसा नहीं कर सकता।
टांगों में लाठी लेकर तुम भाग रहे हो कि घोड़े पर सवार हो। हमे पता है कि लाठी का भार तुमने ही उठाया है।

बाबा फरीद

बाबा फरीद की परवरिश एक समृद्ध धनी वंश में हुई। उनके पिता तथा बाबा जी ग़ज़नी और कंधार में जज थे। अफगानिस्तान में विकट परिस्थितियाँ उत्पन्न होने पर यह परिवार हिन्दुस्तान आ गया। यहाँ भी राजसी हलचल का वातावरण था। युवावस्था में ही उन्होंने गज़नवी शासन का पतन तथा मुहम्मद गौरी शासन की प्रसिद्धि देखी, ढलती आयु में मुहम्मद गौरी राज्य का पतन तथा गुलाम वंश की उन्नति देखी। तुर्क आये, मंगोल आये, हुकूमतें स्थापित कीं, अपने अपने नगाड़े बजाकर चले गये। ताकत के बल पर जोर जबरदस्ती, शान-शौकत, खूंखार मुकाबले में बाबा फरीद तथा उनके शिष्य इन सबसे बेपरवाह, निश्चिन्त बंदगी में अपना समय व्यतीत करते। इनके दर पर धनी, निर्धन, दाता, भिखारी, मुसलमान, हिन्दु प्रत्येक वर्ग के लोग आते, अरदास करते और वापिस चले जाते। प्रत्येक अभिलाषी को आशीर्वाद तथा सांत्वना मिलती। बादशाहों ने दुर्ग तथा महल बनवाये। अब जब इन प्राचीन महलों को देखने जाते हैं, वहाँ चमगादड़ों और कबूतरों का निवास है, मौत का सन्नाटा सामने दिखाई देता है। फकीरों के मकबरों पर जाओ, कव्वाल गा रहे हैं, दानी लोग लंगर बांट रहे हैं, जरूरतमंद खा रहे हैं, आशीर्वाद ले रहे हैं। होना तो ये चाहिए था कि महलों में जीवन दिखाई देता और कब्रों पर मौत। हो उलट रहा है, कब्र पर जीवन की कुशलता मांगी जा रही है, मन्नतें की जा रही हैं, पुरानी मन्नतों के पूरा होने पर धन्यवाद करने हेतु काफ़िले आ, जा रहे हैं।

जिन विश्वसनीय ग्रन्थों में से बाबा जी की वाणी प्राप्त होती है, उनमें से प्रथम गुरू ग्रन्थ साहिब जी है। गुरू नानक देव जी जब ऐशिया का भ्रमण कर रहे थे तब वह सूफियों की खानगाहों में ठहरते, संवाद रचाते तथा जहाँ कहीं से बाबा फरीद की वाणी प्राप्त होती, नोट करते। जन्मसाखियों में वर्णित है कि गुरू नानक देव जी बाबा फरीद की वाणी का गायन किया करते थे। द्वितीय प्रमाणित पुस्तक ***फ़ाइदुलफ़वाद*** है। बाबा फरीद के उत्तराधिकारी शेख निज़ामुदीन औलिया, निज प्रवचन के समय अधिकांश बातें बाबा फरीद जी की ही सुनाते थे। उनका एक श्रद्धालु अमीर हसन सिजज़ी इस अवसर पर अपने पास कलम, दवात तथा कापी रखता था। समीप बैठा लिखता जाता। शेख साहिब ने एक दिन पूछा कि यह क्या लिख रहे हो? तो हसन ने बता दिया। तत्पश्चात् शेख साहिब अधिक चेतन होकर धीरे धीरे बोलते ताकि जानकारी अपूर्ण न रह जाये। देखा, कहीं कहीं पृष्ठों में स्थान खाली है, हसन ने बताया- जी, यह मैं लिख नहीं सका, सोचा जब आपके पास समय होगा, पूर्ण कर लूंगा। शेख साहिब इन खाली स्थानों को पूरा करवाया। यद्यपि अत्यधिक

समय बीत जाने के कारण, ***फ़ाइदुलफ़वाद*** की भी अनेक जिल्दें मिलती हैं जिनमें विभिन्नता पाई जाती है, तो भी खलिक अहमद निज़ामी द्वारा अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में संभाल कर रखी गई प्रतिलिपियाँ प्रमाणित हैं। निज़ामी ने ***खैरुल मजालिस*** पुस्तक को संपादित कर प्रकाशित करवाया। प्रो. प्रीतम सिंघ ने ***ख़ैरुल मजालिस*** को आधार बनाकर **श्रेष्ठ गोष्ठां** तथा ***फ़ाइदुलफ़वाद*** के आधार पर ***दिलों की राहत*** पुस्तकों की रचना की जो गुरू नानक देव विश्वविद्यालय द्वारा प्रकाशित की गई हैं। ***सीअरुल औलिया*** पुस्तक पंजाबी भाषा में उपलब्ध नहीं है। ***ख़ैर-उल-मजालिस,*** शेख नसीरूदीन महमूद चिराग़ि दिल्ली, जो अवध के निवासी थे तथा शेख निज़ामुदीन के विद्यार्थी, ने लिखी। नसीरूदीन की गणना महान् फकीरों में की जाती है। ***सीअरुल औलिया*** सय्यद मोहम्मद बिन मुबारक किरमानी की रचना है। किरमानी के बाबा तथा पिता जी शेख फरीद के नज़दीकी सेवादार थे। बाबा फरीद जी के निजी घरेलू दायित्व निभाना इनका कर्त्तव्य था। अपने बुजुर्गों से विश्वसनीय सामग्री एकत्रित करके इस पुस्तक की रचना की गई।

बाबा फरीद के दादा काज़ी शोएब काबुल को छोड़कर 1517 ई. में लाहौर आ गये। कुछ समय लाहौर में ठहरने के पश्चात् वह कसूर चले गये। कसूर के काज़ी को जब पता चला कि एक उच्च वंशीय परिवार इस समय जरूरतमंद है, तो उसने सुल्तान से बात की, सुल्तान ने उन्हें बुलाया तथा सम्मानित करते हुए पूछा- बताओं मैं आपके लिए क्या कर सकता हूँ? शुऐब ने कहा- जो जो हमसे छिन चुका है उसे पुनः प्राप्त करने की अभिलाषा नहीं हजूर। अमन-शांति में दिन व्यतीत करने के इच्छुक हैं। ऐसा फकीरी उत्तर सुनकर सुल्तान में मन में उनके लिए ओर भी सम्मान बढ़ गया तथा उन्हें कोठेवाल निवास देकर काज़ी (जज) नियुक्त किया।

काज़ी के तीन पुत्र, ज्येष्ठ इज्जुदीन महमूद, मध्यम जमाल्लुदीन सुलेमान तथा छोटा नजीब्बुदीन मोहम्मद था। बाबा फरीद मध्यम पुत्र जमाल्लुदीन का पुत्र था। माँ का नाम बीबी करसुम था। दादा शुऐब काबुल के बादशाह फ़रूख शाह के अत्यधिक समीप था। सुल्तान शहाब्बुदीन ग़ोरी, जमाल्लुदीन का मामा था। दिल्ली के सुल्तान ग़ोरी का समय 1175 से लेकर 1265 ईसवी तक का है।

माँ करसुम बहुत ही नेक, धार्मिक विचारों वाली और दानी स्त्री थी, वह देर तक नमाज़ पढ़ती रहती थी। गोद में फरीद को बिठाकर, नमाज़ की समाप्ति के उपरान्त अरदास करती- हे परवरदगार, हम जिसके हकदार नहीं थे, वह सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। हम तेरा ऋण उतार नहीं सकते। फरीद को इस योग्य बनाओ कि यह तुम्हारा ऋण बंदगी द्वारा उतारे। इस बीबी की शख्सीयत पर अनेक करामाती साखियाँ सम्बद्ध हैं। रात को चोरी करने की इच्छा से चोर घर में दाखिल हुआ तो

अंधा हो गया। बाहर जाने का रास्ता नहीं मिला। बीबी करसुम ने कहा- वचन दो कि आगे से नेक कर्म करते हुए जीवन व्यतीत करोगे तो ठीक हो जाओगे। वचन देते ही चोर की आँखे ठीक हो गईं।

दिल्ली जाते समय प्रसिद्ध फकीर शेख जलाल्लुदीन तबरेज़ी कोठेवाल में से गुजरा। यह ख्वाजा कुतुबदीन बख़्तियार काकी का मित्र था। उसने पूछा- यहाँ कोई सिद्ध दरवेश भी है? लोगों ने कहा -नहीं जी, यहाँ ऐसा कोई नहीं। हाँ, एक काज़ी बच्चा है जिसे लोग पागल कहते हैं, वह घर तथा मस्जिद में हर समय नमाज़ पढ़ता रहता है। जलाल्लुदीन फरीद जी के पास गये। अपने थैले में से अनार निकाल कर तोड़ा और फरीद जी को देना चाहा। फरीद ने कहा- जी, मैंने रोज़े रखे हुए हैं इस कारण खा नहीं सकता। फकीर चला गया। जब अनार तोड़ा गया था उस समय एक दाना धरती पर गिर गया था। फरीद जी ने वह दाना उठाकर रूमाल में बांध लिया कि शाम को रोज़ा इसी दाने से खोलेंगे। शाम होने पर जब दाना मुँह में डाला तत्क्षण विस्माद की अवस्था में चले गये। बाद में बहुत समय तक इस बात पर पश्चात्ताप करते रहे कि सारा अनार प्राप्त क्यों नहीं किया? एक दाने में इतनी करामात है तो पूरे अनार में कितने चमत्कार दिखाने थे, क्या पता। अनेक वर्षो के पश्चात् जब साईं बख़्तियार काकी को अपना गुरू धारण किया तब उनसे यह प्रश्न पूछा। साईं ने कहा- फरीद्दुदीन अब तक लाखों ऋतुएँ आईं और गईं। इनमें से कोई कोई ऋतु ही भाग्यशाली होती है। प्रत्येक ऋतु में लाखों अनार पकते हैं परन्तु कोई कोई अनार ही कर्मों वाला होता है। एक अनार में कितने दाने होते हैं, सभी नहीं, कोई दाना ही भाग्यदायक होता है जो तुम्हारे हिस्से आया, क्योंकि तुम भाग्यशाली हो। शेष अनार में कुछ नहीं था। जिस दाने पर तुम्हारा हक था, तुम्हारे लिए बना था, वह स्वयं चलकर तुम्हारे पास पहुँच गया, किसी अन्य को यह प्राप्त नहीं हुआ।

युवावस्था से ही बंदगी करने के कारण उसका यश दूर दूर तक प्रसरित हो चुका था। न किसी से मिलते, न कोठीवाल से बाहर जाते थे, तब भी मुलतान के सुहरावरदी सिलसिले के फकीर शेख बहाव्वुदीन ज़करीआ ने संदेश भेजा- मैं आपके दर्शनों का अभिलाषी हूँ। साईं बख़्तियार काकी इधर से गुजरे तो आपने उनके चरण स्पर्श कर प्रार्थना की- मैं आपके सिलसिले में शामिल होने का इच्छुक हूँ। साईं ने कहा- पहले विद्या ग्रहण करो। गंवार फकीर सर्कस का मसखरा हुआ करता है। 18 वर्ष की आयु में स्कूल की शिक्षा समाप्त कर मुलतान साईं बख़्तियार के चरणों में उपस्थित हो गये। बख़्तियार ने यहाँ से जब दिल्ली जाने की तैयारी की तो फरीद को साथ ले गये। वहाँ जाकर परम्परा अनुसार बाबा जी को चिशती सिलसिले में शामिल किया। पाँच वर्ष तक उनकी निगरानी में विद्या प्राप्त की। इन दिनों बाबा

जी ने कठिन परिश्रम किया। बंदगी में इतना मग्न रहते कि अपने गुरू के दर्शन हेतु भी मास में एक या दो बार जाते।

साईं बख़्तियार काकी के गुरू ख्वाजा मुईनुदीन चिशती, दिल्ली उनके पास गये तो युवा बाबा फरीद जी को देखते ही कहा- यह बाज़ है बख़्तियार, जिसने स्वर्ग के अतिरिक्त कहीं अपना घोंसला नहीं बनाना। इसे आशीष दो। बख़्तियार ने कहा- आप बड़े हो, गुरू हो। आपके उपस्थित रहते हुए मैं आशीष कैसे दे सकता हूँ? तब दोनों ने मिलकर आशीषें दीं। चिशती सिलसिले में यह चमत्कार पहली बार हुआ कि शिष्य को गुरू तथा गुरू के गुरू से एक साथ वरदान मिलें हों।

वर्ष पश्चात् ख्वाजा पुनः बख़्तियार के पास आये। बख़्तियार के सभी शिष्यों को आशीर्वाद दिया, फिर पूछा- कोई अन्य शिष्य भी है? बख़्तियार ने कहा- हाँ जी, एक है फरीद। वह चालीसा काट रहा है। मुईनुदीन ने कहा- चलो देखते हैं। ख़ानगाह का दरवाज़ा खोला। संयम धारण कर निरन्तर बंदगी करने के कारण फरीद इतना कमज़ोर हो चुका था कि उठकर स्वागत करने लगा तो उठ नहीं सका। बैठे बैठे ही माथा धरती पर टिका दिया, आंसुओं की वर्षा होने लगी। मुईनुदीन ने कहा- अभी और कितने समय तक इस गरीब को भट्ठी में जलाना है? अब कृपा करो बख़्तियार।

शेख निज़ामुदीन के माध्यम से हमें बाबा फरीद जी की साखियाँ प्राप्त हुई हैं। इन साखियों में सदाचार, विनम्रता, मिठास, संतोष तथा करामाती अंश प्राप्त होते हैं। कुछ पाठक करामात शब्द पढ़ते ही भड़क उठते हैं यद्यपि मेरी विद्या तथा निश्चय यह बताते हैं कि संसार में करामातों के अतिरिक्त कुछ अन्य है ही नहीं।

एक शिष्य आपके दरबार में उपस्थित हुआ और कहने लगा- जी, मेरा बहुत बड़ा परिवार है। पाँच पुत्रियाँ हैं। निर्धनता है। कुछ दया करो। मेरी एक बेटी अंधी है। बाबा जी ने कहा- जाओ। संतोष करो। उसने कहा- आपकी एक बेटी अंधी होती तो आपको पता चलता कि दुःख क्या होता है। किसी को मेरी भुजा पकड़ाओ। यह बातें हो रही थीं कि सुल्तान अलाऊदीन ख़िलजी की सेना के वजीर जफ़रखान का पौत्र दरबार में माथा टेकने की इच्छा से आया। बाबा जी ने इस दुःखी शिष्य की बात की। उसने कहा- जी, मेरा घर हाज़िर है। मैं इस परिवार की देखभाल करूँगा। मौलाना के दिन सुखपूर्वक व्यतीत होने लगे।

हांसी से साईं बख़्तियार काकी ने अपनी निशानियों को दिल्ली में बाबा फरीद के पास भेजने का आदेश दिया, अर्थात् अपना उत्तराधिकारी नियुक्त कर दिया। असंख्य लोग दर्शनों हेतु आने लगे। बंदगी में विघ्न उत्पन्न होने लगा तो निर्णय किया- दिल्ली हमारे लिए उपयुक्त नहीं। हांसी चलते हैं। हांसी पहुँचने पर भी वही

स्थिति रही। लोग आते रहते। पता चला कि अजोधन (पाकिस्तान) के लोग गुस्ताख़, नास्तिक एवं कड़वे स्वभाव के हैं, फकीरों का बिल्कुल भी सम्मान नहीं करते। निर्णय लिया गया कि वहीं चलते हैं। वहाँ जाकर शांति प्राप्त हुई, कहने लगे- यह फकीरों के लिए उचित स्थान है। यहीं एक विशाल कीकर के वृक्ष नीचे आसन लगा लिया और बंदगी करने लगे। अनेक बार संदेश मिलता- आपकी पत्नी ने दो दिन से कुछ नहीं खाया, जी आपके बेटे को दो दिन से खाने के लिए कुछ भी नहीं मिला, परन्तु आप अटल बंदगी में लीन रहते। इन संदेशों का आप पर कोई प्रभाव न पड़ता। ईश्वर ने बरकतों के द्वार खोल दिये।

रमज़ान के दिनों में एक कलंदर बाबा जी के दर्शन करने हेतु ख़ानगाह में आया। बाबा जी बंदगी में लीन थे। दरवाज़ा भीतर से बंद था तथा आदेश था कि किसी को भीतर आने नहीं दिया जाये, दरवाज़े पर दस्तक नहीं देनी। झोंपड़ी के बाहर चटाई रखी थी, जिस पर बैठकर बाबा जी बंदगी किया करते थे, कलंदर उस पर बैठ गया। यह गुस्ताख़ी तो अवश्य थी परन्तु उस समय डिऊटी पर उपस्थित शेख बदरूदीन इसहाक ने बेअदबी के भय से कुछ नहीं कहा। कलंदर को भोजन करवाया। फिर उसने थैले में से भांग निकाली ओर घोटने लगा, छींटे पवित्र चटाई पर गिरने लगे। इसहाक ने इस हरकत पर आपत्ति जताई तो कलंदर ने भी क्रोधित हो उसे मारने के लिए ठूठा उठा लिया। बाबा जी बाहर आये, कलंदर का हाथ पकड़ कर कहने लगे- मेरी प्रार्थना मान इसे छोड़ दो। कलंदर ने कहा- दरवेश किसी पर हाथ नहीं उठाते, यदि उठा ले तो प्रहार करना आवश्यक है। बाबा जी ने कहा- दीवार पर मारो। कलंदर ने दीवार पर ठूठे का प्रहार किया तो दीवार ढह गई।

जिस पर अत्यधिक कृपा करते, बाबा फरीद उसे आशीर्वाद देते, "ईश्वर तेरे मन में दर्द उत्पन्न करे।" आने वाले मुरीदों की तकलीफों, दुःखों को सुनकर उनकी आँखें गीली रहतीं, कहते, "अल्लाह का नाम लो, बंदगी करो, विश्वास रखो, अल्लाह सहायता करेगा।" उनका प्रिय मुरीद मोहम्मद शाह बाबा जी के पास आया। बाबा जी ने पूछा- इतने उदास और दुःखी क्यों हो? मोहम्मद ने कहा- जब मैं परिवार को छोड़ कर आपके पास आया था, घर में मेरा भाई, मृत्यु के समीप था। अब तक वह संसार से जा चुका होगा। बाबा जी ने कहा- जो स्थिति तुम्हारी इस समय है, समस्त आयु मेरी यही स्थिति रही, बस मैंने किसी को यह बात बताई नहीं।

अजोधन में दो भाई मुंशी थे। एक के मन में इतना वैराग्य उत्पन्न हुआ कि नौकरी छोड़ कर बाबा जी का मुरीद बन गया। परिवार, सम्पत्ति आदि सभी कुछ अपने भाई को सौंप दिये। अनहोनी हुई, सांसारिक भाई बीमार हो गया, तकलीफ इतनी कि बचने की कोई उम्मीद नहीं थी। फकीर भाई भागते हुए बाबा जी के दरबार

में पहुँचा। विलाप करने लगा- यदि मेरे भाई को कुछ हो गया तो मेरे पास कुछ भी नहीं बचेगा। बाबा जी ने उसे समीप बुलाया और कहा- तुम्हारा भाई ठीक है, घर जाओ। घर जाकर उसने देखा भाई स्वस्थ हो गया है। धन्यवाद करने के लिए वापिस दरबार में पहुँचा। बाबा जी ने कहा- विश्वास रखो। दुःख तकलीफें आ भी जायें तो विलाप नहीं करते। क्या हम पर कभी कोई विपत्ति नहीं आई? हम आह तक नहीं भरते। संतोष रखो और ईश्वर का धन्यवाद करना सीखो। खुशी के अवसर पर ही क्यों कष्टदायक परिस्थितियों में भी शुक्रिया अदा करना चाहिए। वह जो भी भेजे, उसका स्वागत करो।

शेख फरीद के शिष्य रात को सो रहे थे, बाबा जी सिमरन करते हुए टहल रहे थे, नींद नहीं आ रही थी। आपका छोटा बेटा निज़ामुदीन था, जिसे आप सबसे अधिक स्नेह करते थे। इसी स्नेह कारण वह अनेक बार गुस्ताख़ भी हो जाता था परन्तु बाबा जी अनदेखा कर देते थे। आधी रात के आसपास बाबा अपने बेटे के पास गया तथा आवाज़ दी- निज़ाम। निज़ाम सो रहा था। शेख निज़ामुदीन उसी समय खड़े हो गए, विनम्रता से झुकते हुए कहा- आज्ञा हजूर। बाबा जी ने कहा- नहीं भाई, आपको नहीं, मैंने इस निज़ाम को आवाज़ दी थी। फिर से टहलने लगे। आधे पहर के पश्चात् फिर से आवाज़ दी- निज़ामुदीन। इस बार भी उनका बेटा सोया रहा तथा शेख निज़ामुदीन जाग गये, अदब से झुकते हुए कहा- मालिक क्या आदेश है? बाबा जी ने कहा, नहीं भाई आप नहीं। आप आराम करो। शेख निज़ामुदीन ने कहा- बाबा जी, कोई काम बताना है आपने। निज़ाम को किसलिए उठाना? मुझे आदेश दो, मैं करता हूँ। बाबा जी ने कहा- नहीं। कोई काम नहीं। आप सो जाइए। फिर टहलते रहे। सुबह अपने बेटे के समीप गये और कहा- निज़ामुदीन। वह सोता रहा। हज़रत निज़ामुदीन ने हाथ जोड़कर कहा- आज्ञा मालिक। बाबा जी मुस्कराये, कहा- जिसे कुछ देने का मन था, वह लेने का इच्छुक नहीं है, एक तुम हो जो जबदरस्ती छीन रहे हो। ठीक है। परवरदगार यदि यही मंजूर है तो ऐसा ही सही। यह कहकर शेख निज़ामुदीन के सिर पर हाथ रख दिया। बख्शिशों की वर्षा हुई।

एक अन्य दिन भी ऐसा ही हुआ। बदरूद्दीन इसहाक बाबा जी का निजी सेवक (गड़वई) कहीं दूसरे गाँव में गया हुआ था। उसके स्थान पर शेख निज़ामुदीन डियूटी पर थे। इसहाक बता कर गया कि दरवाज़े के बाहर बैठना है। जब बाबा आवाज़ दें तभी हाज़िर हो जाओ। कोई मिलने के लिए आये तो उसे बैठने के लिए कहो। भीतर देखते रहो, जब बाबा टहलने लगें तो भीतर जाकर समाचार दो कि कोई मिलने के लिए आया है। शेख निज़ामुदीन पहरे पर बैठा था कि भीतर से बाबा जी

के गुनगुनाने की आवाज़ आई। झांक कर देखा, बाबा जी अत्यधिक प्रसन्न विस्मादित अवस्था में गुनगुना रहे थे :

मकसूदि मन बंदाए ज़ि कौनीन तुई।
अज़ बहर तू मीरम अज़ बराइ तूईयम।
(तेरी रज़ा में तेरे कदमों की धूल बनकर जीवित रहूँ।
दोनों जहानों में तेरी ज़रूरत है मुझे, तेरे लिए मरना
तेरे लिए जीना।)

निज़ामुदीन ने सोचा, यह भीतर जाने का समय है, अब रहमतों के द्वार खुलेंगे। फिर सोचने लगा- कहीं नाराज़ न हो जायें। जाऊँगा तो क्या पता झोली में बरकतें मिल जायें, परन्तु यदि गुस्ताख़ी हुई तो क्षमा मांग लूंगा, कृपालु तो हैं ही, बख़्श देंगे। धीरे धीरे उनके समीप चला गया। पश्चिम की ओर, काबे की तरफ मुख कर उक्त शेयर गुनगुना रहे थे। बाबा जी ने निज़ामुदीन को देखा तो कहा सही समय पर आये हो। जो तुम्हारे मन में है मांग लो। निज़ामुदीन ने कहा- कृपा करो बाबा जी, ताकत दो कि मैं धर्म के मार्ग से कभी न भटकूं। बाबा जी ने आशीष दी, "यही होगा निज़ामदीन। यही होगा। ध्रुव तारे के समान तुम निश्चल रहोगे।" इस घटना को विवरण देते हुए निज़ामुदीन अपने शिष्यों से कहते थे, "अनेक बार मेरे मन में यह विचार आता कि उस समय मैंने बाबा जी के समक्ष यह प्रार्थना क्यों नहीं की मेरे अंतिम श्वास कीर्तन करते हुए निकलें। परन्तु जो उस बड़ी अदालत ने करना होता है, वही फैसला होता है। इसमें किसी का कोई वश नहीं चलता।

फ़वाइदुल्लफ़वाद में शेख निज़ामुदीन बाबा फरीद जी के बारे में बताते हैं- शेख फरीद का भाई शेख नजीबुद्दीन मस्जिद में उच्च विद्या की अभिलाषा से गया तो उस्ताद ने पूछा- नजीबुद्दीन, मुतवक्किल(ईमान वाला) तुम ही हो? उसने उत्तर दिया- मैं तो मुतअक्कल (पेटू) हूँ, मुतवक्किल कोई ओर होगा। फिर पूछा गया- इस्लाम के शेख फरीदुद्दीन के भाई हो तुम? नजीब ने उत्तर दिया- संसार के लिए यह बात सत्य है, परन्तु वास्तव में उनका भाई होने का सौभाग्य किसे है, कौन जाने।

एक स्त्री आपके दरबार में उपस्थित हुई और बैअत की मांग की। बैअत एक प्रण का नाम है कि धर्म का अनुगामी रहूँगा। अनेक मौलवी तथा सूफी, स्त्रियों को बैअत का अधिकार नहीं देते परन्तु चिशती सिलसिले में यह भेदभाव नहीं होता। इन्द्रप्रस्थ में फातिमा नामक एक स्त्री शील संयम में इतनी पवित्र थी कि बाबा फरीद प्रसन्न होकर कहते, "स्त्री के वेश में ईश्वर ने मर्द को भेजा है।"

कहा- एक बार मैं अपने गुरू साईं बख़्तियार काकी के पास गया और प्रार्थना की कि मुझे चालीसा काटने की आज्ञा दें। आप ने कहा- कोई आवश्यकता

नहीं। प्रसिद्धि पाने हेतु लोग चालीसा काटते हैं। हमारे सिलसिले में यह परम्परा नहीं है। मैंने कहा- जी, मैं यश प्राप्ति हेतु आज्ञा नहीं मांग रहा। आप खामोश हो गये। कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे आज तक इस बात का पश्ताताप है कि जब उन्होंने मना कर दिया था तो मैंने दोबारा क्यों कहा। यह गलती मुझसे हो गई थी। गुरू जी ने एक दिन मुझसे कहा था- पीर, मुरीद की कंघी होता है।

आप की संगत में एक अजनबी आते ही बकवाद करने लगा। बाबा जी की शान के विरोध में बोलता रहा। बाबा जी ने कोई आपत्ति नहीं जताई। शांत सुनते रहे। अंततः वह व्यक्ति यह शब्द कहकर चला गया, "जब तक सृष्टि कायम रहेगी मेरे गुनाह तथा आपकी सहनशीलता तब तक कायम रहेंगे।"

शेख साहिब बताते हैं- रोज़े के दिनों में बाबा जी बीमार हो गये, इसलिए रोज़े छोड़ने पड़े। खरबूज़ा मंगवाया। थोड़ा सा मुझे दिया। मैं रोज़ा तोड़ने का इच्छुक नहीं था, परन्तु गुरू के आदेश को मोड़ भी नहीं सकता था, सोचा, गुनाह की क्षमा याचना हेतु दो मास तक ओर रोज़े रख लूंगा परन्तु बाबा जी की आज्ञा को मानना चाहिए। मैं खरबूज़ा पकड़कर खाने ही लगा था कि आपने रोकते हुए कहा- तुम मत खाओ। बीमार होने के कारण मुझे खाने की इज़ाजत है, तुम्हारे लिए यह उचित नहीं। मैंने धन्यवाद किया।

एक दिन मुहम्मद नामक व्यक्ति आपके समीप बैठा था, तभी भोजन का समय हो गया। झोंपड़ी में ऐसा कोई वस्त्र नहीं था जिसका प्रयोग आसन रूप में किया जा सकता हो। मुहम्मद के मन में विचार आया- बाबा जी आसन पर सुशोभित होने चाहिए, धरती पर बैठकर भोजन करते अच्छे नहीं लगते। बाबा जी ने अंगुलि से रेत का दायरा बनाते हुए कहा- यह रहा मेरा आसन मोहम्मद भाई। प्रसाद ग्रहण करो।

आरिफ़, बाबा जी की आयु का और उनका सहपाठी था, मित्र था बचपन का। मुलतान के हाकिम ने उसे बुलाकर कहा- बाबा जी इस समय हांसी में है। हमारी प्रार्थना तो वह सुनेगें नहीं। आप उनके बचपन के मित्र हो, जाओ, कहो- बाबा जी! जिस मुलतान की गलियों में इक्ट्ठे खेलते खेलते बड़े हुए, वह गलियाँ आपके दर्शन की अभिलाषी हैं। कृपा करो और मुलतान एक बार अवश्य आयें। मलिक ने उसे घोड़ा दिया, मार्ग में खाने-पीने हेतु सामग्री दी तथा एक थैली में सौ मुहरें डालकर दीं, कहा यह भेंट हमारी ओर से उनके चरणों में समर्पित करना।

आरिफ़ अगले दिन हांसी की ओर जाने से पहले पचास मुद्रायें निकाल कर घर में रख गया। चलते, चलते हांसी पहुँच गया। घोड़े को वृक्ष से बांधा। बाबा जी देखते रहे, पहचानते रहे तथा कहा- शायद आरिफ़ है अपना गराईं भाई। आरिफ़ ने माथा टेका तथा पचास मुद्रायों वाली थैली बाबा जी के चरणों में रख दी। बाबा जी

खड़े हो गये। आरिफ़ को आलिंगन में लेकर कहने लगे- मैं तो आपको मित्र समझता रहा परन्तु आप तो मेरे भाई निकले आरिफ़। आप तो सगे भाई हैं मेरे। आरिफ़ को बात समझ में नहीं आई तो उसने कहा- जी मुझे समझ में नही आ रहा मैं आपका भाई कैसे हुआ। बाबा जी ने कहा- जन्म लेते ही भाई अपने भाई की सम्पत्ति के आधे भाग का भागीदार नहीं बन जाता क्या?

शर्मिंदा होते हुए आरिफ़ ने कहा- क्षमा कर दीजिए बाबा जी। वास्तव में मैं डर गया था कि कहीं मार्ग में सारा धन डाकू न लूट लें। इस कारण सोचा जब आप मुलतान आओगे तो बाकी का धन आपको उस समय दे दूंगा। बाबा जी हँसने लगे, परन्तु कहा कुछ नहीं।

झोपड़ी के इर्द-गिर्द दीवारें नहीं थीं। मुरीदों ने निवेदन किया- जी, दीवारें बना दें। बाबा जी ने मना कर दिया- फरीद ईंट के ऊपर ईंट नहीं रखने देगा। मुरीदों ने कहा- बाबा जी, साँप घूमते रहते है, दुर्घटना हो जायेगी। बाबा जी ने कहा- कोई बात नहीं किसी को कुछ नहीं कहता साँप। डरो मत। मुरीदों द्वारा बहुत मिन्नतें करने पर इस शर्त पर आज्ञा दे दी कि पक्की ईंट नहीं लगायी जायेगी। सूखे तालाब में से सभी मिल कर निकाल लायेंगे। दीवारें एक गज़ से अधिक ऊँची नहीं होंगी।

बाबा जी ने बताया- एक बार मैं अपने मुरीद सिराज्जुदीन के पास अबोहर गया हुआ था। किसी कारण वश मोहल्ले की स्त्रियाँ झगड़ती हुई सिराज्जुदीन की पत्नी को गालियाँ देने लगीं, उस पर दूषण लगाने लगीं। उस स्त्री को गुस्सा नहीं आया, पूछा- आप जो मुझ पर दूषण लगा रही हो, वह बैअत से पूर्व के हैं या पश्चात् के? यह बात संगत को सुनाते हुए बाबा जी ने कहा- देखा, कितनी सुन्दर बात कही उस नेक बीबी ने?

वह भीड़ से दूर यदि एकांत में भी निवास बना लेते तो वहीं मेले लग जाते। आधी रात को दरवाज़ा बंद कर देते। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं होता था जिसे कुछ न मिलता हो। अपने पास कुछ नहीं रखते थे। उनका त्याग अद्वितीय था। मानव जाति में कौन उनके जैसा हो सकता है? बेशक कोई वर्षों से आपको जानता हो, चाहे अजनबी हो, सभी से एक समान बातें करते थे। जो बात सबके सामने अकथनीय होती, उसका वर्णन अकेले भी नहीं करते थे। अन्दर बाहर से एक समान थे बाबा। इतनी मधुर तथा कृपामयी बातें सुनते हुए अनेक व्यक्तियों का मन करता- इसी अवस्था में यदि मेरे प्राण निकल जायें तो यह मेरा सौभाग्य होगा। रखा ही क्या है इस संसार में?

जब किसी फकीर का नाम लेकर कोई सुन्दर बात सुनाते तो उसी समय पता चल जाता कि यह उनकी स्वयं की साखी है परन्तु अपना नाम छिपा लेते हैं। पीर जितना चाहें छिपायें, मुरीद समझ ही जाते हैं।

तीन पहर ऐसे हैं जब ईश्वर की रहमत होती है। प्रथम पहर है कीर्तन का, द्वितीय पहर है बंदगी की ताकत प्राप्त करने के लिए संयमपूर्वक भोजन किया जाये तथा तृतीय पहर रुष्ट दरवेशों के मानने का समय। एक बार कुछ फकीर आपकी ख़ानगाह में उपस्थित हुए और कहा- हज़ूर हमारा आपस में झगड़ा हो गया था। हम प्रार्थना करने आयें हैं कि हम में समझौता करवा दीजिए। शेख फरीद जी ने यह मामला निज़ामुदीन को सौंप दिया। वह उन दरवेशों को एक तरफ ले गया ताकि आराम से उनकी बात सुन सके। उनके साथ इसहाक भी था। बहुत विनम्रता से वह एक दूसरे से बात करने लगे- उस दिन आपने मुझे ये बात कही थी, जिसके उत्तर में मैंने आपसे ऐसे निवेदन किया था। आपने उत्तर देते हुए जो कहा तो मुझे आपकी पूरी बात समझ में नहीं आई जिस कारण उत्तर उलट पलट कर दे दिया। मुझसे यह गुस्ताखी हो गई थी। दूसरे ने उत्तर दिया- नहीं, आपने ठीक उत्तर दिया था, भूल मुझसे हुई थी। मैं बिना मतलब ही गुस्से में आ गया। मुझे संयम से काम लेना चाहिए था। गलती मेरी थी। जिस अंदाज से उन्होंने एक दूसरे से बात की बदरूद्दीन इसहाक तथा निज़ामुदीन की आँखों में आँसू आ गये। समझ गये। इन्होंने तो कभी आपस में झगड़ा किया ही नहीं होगा, ये झगड़ने वाले व्यक्ति हैं ही नहीं। यह तो समझाने आये थे कि झगड़ने के पश्चात् इस प्रकार का शिष्ट व्यवहार करना चाहिए। यह तो ईश्वर के भेजे हुए नेक लोग हैं।

ज़िआऊद्दीन दर्शन का विद्वान् एवं शिक्षक था। वह शेख साहिब के दर्शन हेतु आया तो सोच रहा था कि मुझे तो धर्म तथा व्याकरण का कोई ज्ञान नहीं। यदि मुझसे इनके विषय में प्रश्न पूछे तो मैं क्या करूँगा? झिझकते हुए वह चरण छू कर बैठ गया। उससे पूछा- पक्ष में तथा विरोध में कैसे तर्क देते हैं? किन तर्कों द्वारा ईश्वर के अस्तित्व से इंकारी हुआ जाता है तथा कौन से तर्क हैं जो उसके अस्तित्व को सिद्ध करते हैं? बात क्या, जो- जो उसे आता था, वही पूछते गये, बिल्कुल भी शर्मिंदा नहीं होने दिया।

पाक पत्तण का काज़ी बाबा जी से अत्यधिक नफ़रत करता था तथा हर समय उनके विरुद्ध बोलता रहता था। उसने शहर के मौलवियों की संगोष्ठि मस्जिद में रखी। मीटिंग में हाज़रीन से पूछा- आप जानते हो भाइयों कि इस्लाम में संगीत की मनाही है। यदि कोई मुसलमान होकर गाने-बजाने में मग्न रहे अपितु ऐसी धृष्ट्ता करे कि मस्जिद के समीप भी गाता रहे तो उसके साथ कैसा सलूक करना चाहिए?

श्रोता खामोश रहे। कोई उत्तर न दिया। एक बुजुर्ग ने पूछा- पहले ये बताओ जी, यह शख्स है कौन, जिसके विरुद्ध आप फ़त्वा ज़ारी करना चाहते हो? काज़ी ने कहा- फरीदुद्दीन। सभी व्यक्तियों ने कानों को हाथ लगाते हुए कहा- बाबा शेख फरीद जो करता है, वही करणीय है। उनके दरबार में जाने वालों के गुनाहों को बख्श दिया जाता है। सभी अपने-अपने घर वापिस चले गये।

बलबन ने अभी बादशाह के पद को नहीं संभाला था, उसका नाम उलगख़ान था। इधर पाक पत्तण की तरफ से गुजरा तो दर्शन हेतु आया। कुछ राशि तथा चार गाँवों के इकरारनामे के कागज़ आपके चरणों में रखकर माथा टेका। बाबा जी ने पूछा- यह क्या है? उलगख़ान ने कहा, जी पैसे दरवेशों के लिए हैं तथा चार गाँवों के इकरारनामे आपके लिए हैं। बाबा जी ने कहा- पैसे रख जाओ। ज़रूरतमंद लोगों के काम आयेंगे। इकरारनामे ले जाओ, अन्य अनेक इनके अभिलाषी हैं। हमारे पूर्वजों ने कभी जागीरे नहीं लीं। उलगख़ान ने कहा- जी एक बाग का इकरारनामा भी है। बाबा जी हँसते हुए कहा- मैंने तुम्हारे बागों का घास नहीं बनना भाई। बस, अल्लाह का नाम लिया करो।

निज़ामुदीन (1238-1325) का पारिवारिक नाम सय्यद मोहम्मद था, गाँव बदायूं (यू.पी), माँ जुलैखां, पिता का नाम सय्यद अहमद तथा दादा जी का नाम अली था। पाँच वर्ष की आयु में ही पिता का साया सिर से उठ गया। आजीविका का कोई साधन न रहा तो निर्धनता ने घेर लिया। अनेक बार भूखे रहना पड़ता। जिस किसी दिन खाने को रोटी नहीं मिलती, माँ हँसते हुए कहती- बच्चो, आज हम ईश्वर के मेहमान हैं। नमाज़ पढ़ो। बालक निज़ाम भोजन करते समय कभी कभी माँ से पूछता- अब हम कब ईश्वर के मेहमान होगें माँ? स्वयं मुरीदों को इन दिनों के बारे में बताते- घर में पीत्तल तांबे के तो क्या लोहे के बर्तन भी नहीं थे। कसोर या ठूठे में दाल सब्जी डाल कर रोटी को हाथ में पकड़ कर खाते थे। कभी कोई ठूठा गिरकर टूट जाता तो माँ डांटते हुए कहती- कुम्हार अपना रिश्तेदार नहीं है। ध्यान से भोजन करो। दानों के बदले में मिलते हैं यह ठूठे कसोरे।

होश संभाली तो निज़ामुदीन लोगों के पशु चराने लगा। शाम को भोजन करने के पश्चात् बदायूं की मस्जिद में मौलवी के पास पढ़ने के लिए चला जाता। एक शाम मस्जिद में एक विद्वान् दरवेश ठहरे हुए थे। उनसे बालक का परिचय करवाते हुए मौलवी जलालुद्दीन तबरेज़ी ने कहा- अल्लाह के अतिरिक्त यह बालक जीवन में किसी के आगे सिर नहीं झुकायेगा, इतना तो मैं इसके विषय में जान गया हूँ। दरवेशों ने आशीर्वाद दिया तथा दस्तार बांधने की बख्शिश की।

अबू बकर कव्वाल से बाबा फरीद जी का नाम सुना, उनके यश का पता चला तो निर्णय किया कि उन्हें अपना धर्म गुरू धारण किया जाये परन्तु अबू बकर ने कहा- पहले और अधिक शिक्षा ग्रहण कर, उनसे मिलने योग्य तो बन जा। माँ तथा बहन सहित दिल्ली पहुँच गया। मज़दूरी ही करनी है तो फिर बदायूं से दिल्ली कौन सी बुरी है, यह सोच कर यह लघु कारवाँ रवाना हो गया। मौलाना शमसुद्दीन बहुत महान् विद्वान् था तथा बलबन के दरबार में एक सम्माननीय शख़्सीयत। उसके पास जाना प्रारम्भ किया। मौलाना को जल्दी ही बोध हो गया कि यह बालक असाधारण प्रवृत्ति का है, इस कारण अधिक ध्यान देने लगा। बीस वर्ष की आयु में दिल्ली आये तथा चार वर्ष तक यहाँ विद्या प्राप्त करने के उपरान्त बाबा जी के दर्शन हेतु पाक पत्तण जाने का निश्चय किया। चलने से पूर्व सुल्तान ने प्रसन्न होकर दिल्ली के काज़ी की उपाधि प्रदान की। निज़ाम ने नजीबुद्दीन मुतवक्किल से परामर्श किया तो उन्होंने कहा- इनशा अल्लाह ताअला तोआ हरगिज़ काज़ी नाशवी, अम्मा चिज़े शवी कि मन दानम। (अल्लाह करे तुम कभी काज़ी न बनो, तुम वही बनो जो मैं जानता हूँ कि तुम बनोगे।) यह वाक्य सुनते ही बाबा फरीद के दर की ओर चल पड़े।

पहली बार गुरू के सामने मुरीद उपस्थित हुआ तो बाबा जी के मुख से अकस्मात् ही से शेयर प्रकट हुआ :

अै आतिशे फ़िराकत दिलहा कबाब करदा।
सैलाब-इ-इश्तिआकत जानाहा ख़राब करदा।
(अरे विरह की आग, तुमने दिल कबाब किए।
इश्क के तूफान ने जिन्दगियाँ बरबाद कीं।)

फिर कहा- आखिर तुम आ ही गये निज़ामुदीन। हिन्दुस्तान की लगाम किसके हाथ में दूं, यह सोच ही रहा था कि तुम आ गये। मेरा मन मुझसे कह रहा था कि तुम अवश्य आओगे। तैयार होकर जुम्मे (शुक्र) के दिन आ जाओ। तुम्हें सिलसिले में शामिल करूँगा।

यह वाक्य सुनकर निज़ामुदीन बहुत प्रसन्न हुआ तथा फिर वह ख़ानगाह के पुराने सेवकों से पूछने लगा- तैयार होकर आने का आदेश मिला है। यह तैयारी क्या होती है? सेवकों ने कहा- भाग्यशाली हो आप निज़ामुदीन। आयु बीत गई यहाँ सेवा करते हुए परन्तु सिलसिले में शामिल नहीं करते हमें बाबा जी। आपको देखते ही आप पर कृपा की है। तैयारी का अभिप्राय है कि दस्तार तथा मिठाई लेकर आओ। अपने शुभ हाथों से बाबा जी आपके सिर पर दस्तार बांधेंगे। मिठाई का प्रसाद संगत में बांटेंगे। घर में न तो दस्तार थी, न ही दस्तार खरीदने के लिए पैसे। माँ ने पड़ोस की स्त्रियों से कहा- अपने अपने चरखे लेकर मेरे घर आ जाओ। मेरे पास रूई नहीं

है। रूई या लोगड़ जो भी हो अपना अपना ले आना। सारी रात सूत कातेगीं। जुलाहे से कहा- बाबा जी कल कोई काम मत करना, दस्तार बनानी है। काता हुआ सूत, किसी का मोटा, किसी का बारीक, जुलाहे को दे दिया। जुलाहे ने खद्दर बुना। माँ बेटे ने गलियों में से गुड़ मांगा। बगल में खद्दर की दस्तार तथा कंधे पर गुड़ का थैला लटका कर यह युवक बाबा जी के दरबार में उपस्थित हुआ। उनके चरणों में दोनों वस्तुएँ रख दीं।

बाबा जी ने खद्दर को अपने हाथ में उठाया, फिर माथे से लगाया, फिर आँखों से छूते हुए मुरीदों से कहने लगे- बच्चो, आपने स्वर्ग की अप्सराओं के बारे में सुना है न? सुना है, देखा नहीं उन्हें आपने। यह दस्तार स्वर्ग में रहने वाली अप्सराओं द्वारा काते गए सूत से बनी हुई है। इसमें से सच्ची कमाई की सुगन्ध आ रही है। धरती की वस्तु नहीं है यह दस्तार। तब आशीर्वाद देकर दस्तार बांधी। मिठाई वाला थैला खोला। एक टुकड़ा स्वयं खाया, शेष गुड़-प्रसाद को संगत में बांटा।

निज़ामुदीन को लंगर तैयार करने का आदेश दिया। विभिन्न प्रकार के व्यंजन नहीं होते थे। निज़ामुदीन जंगल में से डेले तोड़कर ले आता। धोकर उबाल लेता फिर उनमें नमक डाल देता। दो रोटियों पर डेले रखकर बाबा जी के हाथों में थमा देता। एक रोटी, बुरकी बुरकी करके संगत में बांट देते, एक स्वयं खाते। आठ पहरों में से केवल एक बार दोपहर को ही भोजन करते थे। एक दिन डेले तोड़ कर ले आया परन्तु झोपड़ी में नमक नहीं था। किसी की जेब में पैसे नहीं थे। निज़ामुदीन शीघ्रत से समीप ही आबादी वाले क्षेत्र में गया और दो टुकड़े नमक के उधार ले आया। बाबा जी की दो रोटियों पर डेले रख कर खाने के लिए दीं और स्वयं पानी लेने चला गया। बाबा जी ने आवाज़ दी- निज़ामुदीन। निज़ामुदीन आ गया। पूछा- भोजन पर क्या जादू-टोना कर दिया है तुमने? निज़ाम ने कहा- जी, कुछ नहीं किया, बिल्कुल कुछ नहीं।

बाबा जी ने कहा- कुछ किया है निज़ाम तभी तो मेरा हाथ उठ नहीं रहा। बुरकी तोड़ने के लिए जब मैंने अंगुलि से रोटी को छुआ तो मेरा हाथ इतना भारी हो गया कि उठा नहीं सका। डेले तोड़ने से लेकर रोटी मेरे हाथ में देने तक तुमने जो कुछ भी किया, वह बताओ। बताते हुए निज़ाम ने कहा कि नमक नहीं था। वणिक से उधार लेकर आया हूँ। बाबा जी ने कहा- एक दिन बिना नमक के रोटी खा लेते तो कौन सा कुछ बिगड़ जाता? परवरदगार का फैसला है कि संसार तेरा ऋणी बने। तुम थोड़े से नमक के लिए बनियें के ऋणी हो गये? आज मैं रोटी नहीं खाऊँगा।

बाबा जी निज़ामुदीन को दिल्ली में रहने के लिए कहते तो दिल्ली के समीप ग्यासपुर गाँव में चले जाते। एक यात्री पाक पत्तण में जाता हुआ ग्यासपुर में से गुजरा।

निज़ामुदीन ने कहा- बाबा जी के पास जा रहे तो हमारी दैनिक स्थिति के बारे में बता देना। बाबा जी के पास पहुँच कर जब उनकी दैनिक स्थिति का वर्णन किया तो वह मुस्कराये, कहा- रूहानियत प्राप्त करने वाले को बहुत भार उठाना पड़ता है। यही होना था। निज़ामुदीन से कहना भरोसा रखे।

दिल्ली से दस बार ही पाक पत्तण आये। तीन बार बाबा जी के होते हुए, सात बार बाद में। वापिसी के समय बाबा जी आशीष देते, "अल्लाह तुम्हारी हर अरदास कबूल करे निज़ाम। तुम घने छायादार वृक्ष बनोगे निज़ामुदीन, जहाँ थके, घायल, दुःखी यात्रियों को राहत मिलेगी, आराम मिलेगा, शरण, आश्रय मिलेगा।"

तावीज़ लेने आये लोगों की भीड़ लगी रहती। तावीज़ लिखते लिखते एक दिन थक गये तो आवाज़ दी- निज़ामुदीन, शेष तावीज़ तुम दे दो। स्वयं आराम करने चले गये। निज़ाम ने किसी को तावीज़ नहीं दिया। लोग मांगने लगे। निज़ाम ने कहा- मेरी शक्ति तावीज़ देने की है ही नहीं। लोग बाबा जी के पास चले गये और बताया कि निज़ामुदीन तावीज़ देने से इंकार कर रहा है। बुला लिया, पूछा तो निज़ाम ने कहा- बाबा जी, मैं तावीज़ देने का हक़दार नहीं हूँ। मेरे लिखने से क्या होगा? बाबा जी ने कहा- मुझमें कौन सी कोई शक्ति है? मैं तो कागज़ पर ईश्वर का नाम लिख कर दे देता हूँ। ईश्वर बरकतें करने वाला है, हम क्या कर सकते हैं? इसलिए ईश्वर का नाम ले और ईश्वर का नाम लिखकर तावीज़ देते जाओ।

बाबा जी के नाती का नाम तो मुहम्मद था परन्तु बाबा जी उसे प्रेम से मंमन कहा करते थे। उसके बारे में सुना कि वह कभी कभी शराब पीता है। बाबा जी को मिलने के लिए पाक पत्तण आया। चरण स्पर्श कर समीप बैठ गया। परिवार की कुशलता के बारे में पूछा, बताया। बातें करते हुए बाबा जी ने कहा- मंमन, सुना है तुम शराब पीने लगे हो। मुहम्मद ने कहा- नहीं नाना जी। यह झूठ है। लोग व्यर्थ ही अफवाहें फैला रहे हैं। बाबा ने कहा- हाँ, मुझे भी यह ख़बर अफ़वाह ही लगी। तुम शराब पी ही नहीं सकते। परन्तु लोगों का साहस इतना बढ़ गया है कि मेरे परिवार के सदस्यों के विरुद्ध मेरे सामने ही बातें करने लगे हैं। कितने गुस्ताख़ हो गये हैं अब लोग मंमन पुत्र।

एक दुःखी बुजुर्ग बाबा जी के पास आकर फरियाद करने लगा- जी, मेरा बेटा निर्दोष है। आप सब कुछ जानते हो, मैं क्या बता सकता हूँ? यदि दोषी है तो उस पर रहम मत करना। उस मासूम को सुल्तान ने फांसी की सज़ा सुना दी है। उसकी रक्षा करो मालिक। सुल्तान बलबन के नाम पर बाबा जी ने पत्र लिखा- इस दुःखी व्यक्ति को आपके पास भेज रहा हूँ। आपने इसकी फरियाद सुनकर उसे मान लिया तो ये मत समझना कि आप किसी को जीवनदान दे सकते हो, जीवन देने

का काम केवल अल्लाह का है। यदि आपने इस प्रार्थना को अनदेखा कर दिया तो यह मत समझना कि आप किसी जान ले सकते हो। फिर यह समझना कि परवरदगार को यह मंजूर नहीं था कि वह आपके हाथों नेकी करवाता पत्र पढ़कर सुल्तान ने बंदी को मुक्त कर दिया।

एक दिन बाबा जी ने निज़ामी का ये शेयर सुनाया :

निज़ामी ईं चिह इसरार असत कज़ खातिर अयां करदी
कसे सिरॅश नमी दानद ज़बां दर कश, ज़बां दर कश।
(निज़ामी, क्या तू अपने दिल के भेद को हवा लगवा चुके हो?
इसके भेद को जानने वाला यहाँ कोई नहीं, जुबान बंद रख,
जुबान बंद रख।)

सारा दिन यही शेयर गुनगुनाते रहे।

नजीबुद्दीन ने एक दिन बाबा से पूछा- लोगों में यह अफ़वाह फैली हुई है कि जब आप याद करते हुए कहते हो- या रब, तो हुंगारा भरते हुए ईश्वर कहता है- मैं हाज़िर हूँ मेरे बंदे। क्या यह सत्य है? हँसने लगे, कहा- नहीं, सत्य नहीं है यह, परन्तु लोगों की ये अफ़वाहें भविष्य की भूमिका होती हैं, भविष्यवाणी बन जाती हैं।

सहनशीलता की चर्चा हुई तो बाबा जी ने कहा- जो व्यक्ति स्वयं पर हुए अत्याचारों को सहन कर लेता है, उसके जैसा ताकतवर अन्य कोई नहीं। उससे बच कर रहना। मार खा कर शांत रहने वाला व्यक्ति बहुत बलवान होता है।

बाबा के पास नवाब का कोशाधिकारी आया और कहने लगा-जी, नवाब साहिब बहुत तंग करते हैं, आप मुझ पर कृपा करें, मेरी सिफारिश कर दीजिए तो मेरा छुटकारा हो जायेगा। बाबा जी ने सिफारिश कर दी। कुछ दिनों के पश्चात् वह फिर आया तथा कहा- जी, उन पर सिफारिश का कोई प्रभाव नहीं हुआ। बाबा जी ने कहा- भाई, अब हिसाब लगाकर देख लो, तुम भी तो लोगों को तंग करते रहे हो, तुमसे दुःखी लोग सिफारिशें ले ले कर तुम्हारे पास आते, तब कौन सा तुम किसी पर रहम करते थे? अब भुगतो।

पाक पत्तण में रह रहे थे। कहा- निज़ामुदीन को बुलाओ। शेख साहिब उपस्थित हो गए। कहा- आप दिल्ली चले जाइये निज़ामुदीन। निज़ाम ने निवेदन किया- आपकी बहुत आयु हो गई है। स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। ऐसी स्थिति में आपको छोड़कर दिल्ली नहीं जाऊँगा। बाबा जी ने फिर से कहा- आदेश मानने होते हैं निज़ाम। कहा मानो। दिल्ली जाओ। निज़ामुदीन ने कहा- ठीक है हज़ूर। आपका आदेश न मानने का साहस किस में है? परन्तु इतनी कृपा तो कर दीजिए कि मेरा

गुनाह बता दीजिए। मैं प्रत्येक पल आपके चरणों में खड़े होकर व्यतीत करने का अभिलाषी हूँ परन्तु आप मुझे दिल्ली भेज रहे हो। इसका क्या कारण है?

भीगी आँखों से बाबा ने कहा- साईं बख़्तियार काकी, मेरे मुर्शद के साथ मैं हांसी में रह रहा था। उन्होंने आदेश दिया- दिल्ली चले जाओ फरीद। मैंने अनेक बार प्रार्थना की थी कि मुझे हांसी में रहने दीजिए, वह नहीं माने। मैं बार मिन्नतें करने से नहीं रूका तो उन्होंने अंतिम शब्द ये कहे- मेरा मुसल्ला, कासा, खड़ाऊँ तथा दस्तार तुम्हारे पास दिल्ली पहुँच जायेंगे। अब जाओ। मैं चला गया। मुझे पता नहीं चला कि आखिर बात क्या थी। परन्तु मेरे भीतर इतना साहस नहीं था कि तुम्हारी तरह कारण जानने के लिए हठ करूँ। खामोश वहाँ से चला आया। अब तुम पूछ रहे हो तो बता देता हूँ। मुझे भी अभी पता चला है कि जिसे बहुत प्रेम करते हैं, उससे बिछुड़ने के लिए मन तैयार नहीं होता निज़ामुदीन। दिल्ली जाओ। मेरी खड़ाऊँ, दस्तार, मुस्सला आपके पास दिल्ली पहुँच जायेंगे।

जैसे साईं बख़्तियार काकी ने विदायगी के समय बाबा जी को अपना वारिस बनाने की घोषणा कर दी थी, उसी प्रकार बाबा फरीद जी ने निज़ामुदीन को अपना वारिस होने की घोषणा कर दी। नमाज़ पढ़ते पढ़ते बेहोश हो गये। जब होश आया तो पूछा- क्या मैंने नमाज़ पढ़ ली थी? बताया गया कि पढ़ ली थी। कहने लगे- तो भी दूसरी बार पढ़ने में क्या हर्ज? दूसरी बार नमाज़ पढ़ने बैठे तो फिर से बेहोश हो गये। होश आया तो यही प्रश्न किया- भाइयो, बताओं मैंने नमाज़ पढ़ ली थी? सभी ने उत्तर दिया- हाँ बाबा जी, नमाज़ अदा हो गई थी। कहने लगे- फिर से पढ़ने से क्या घाटा होता है? फिर से नमाज़ पढ़ने लगे तथा पढ़ते पढ़ते अल्लाह की दरगाह में पहुँच गये, फिर होश नहीं आया। शव्वाल के मास में निज़ामुदीन दिल्ली गये तथा पाँच मुहरम को बाबा फरीद जी का 93 वर्ष की आयु में देहांत हो गया।

निज़ामुदीन ने दिल्ली की बजाय ग्यासपुर गाँव में डेरा लगाया, क्योंकि यहाँ लोगों की भीड़ नहीं थी। परन्तु दिन फाकाकशी के थे। बताते हैं- पैसे के एक मन तरबूज़ आ जाते थे। हम तरबूज़ का स्वाद नहीं देख सके। तीन दिन के पश्चात् कोई दाल चावल ले आया, खिचड़ी बनाकर खाई। आज तक इससे अधिक कोई खाना स्वादिष्ट नहीं लगा।

एक दिन एक स्त्री रहम करते हुए आटा दे गई। गूंथ कर पहली रोटी ठीकरे पर रखी तो दरवेश आ गया और खाने के लिए कुछ मांगा। पहली रोटी दरवेश को दे दी तो उसने एक बुरकी तोड़ कर खायी तथा ईंट मारकर ठीकरे को तोड़ दिया, फिर कहा- मैंने निर्धनता के ठीकरे को तोड़ दिया है। आज के पश्चात् निज़ामुदीन, दृष्ट एवं अदृष्ट इन दोनों संसारों का हाकिम होगा।

इस घटना के पश्चात् दानी व्यक्ति आने शुरू हो गये। इतना अन्न पहुँचने लगा कि हज़ारों की संख्या में लोग लंगर खाने लगे। स्वादिष्ट पकवान आते, परन्तु स्वयं न खाकर उसे लोगों में बांट देते। स्वयं बाजरे या जवार की एक रोटी खाते। संगत अधिक आने लगी तो सोचा कहीं एकांत में निवास किया जाये। आकाश में से आवाज़ आई- एकांत प्रिय था तो पहले शोहरत को बढ़ने क्यों दिया? अब अनदेखा करना उचित नहीं। एकांत में जाकर बंदगी करना सरल है, निज़ाम, संसार में रहकर ज़रूरतमंद लोगों की फरियाद सुनना, उनके दुःखों, कष्टों में सहायक होना कठिन कार्य है। तुमसे ईश्वर ने कठिन कार्य करवाने हैं निज़ामुदीन, यहाँ रहो, और अपने कर्त्तव्यों का पालन करो।

1257 में सुल्तान अलाऊदीन ख़िलजी (1296-1316) के समय वह प्रसिद्धि के शिखर पर पहुँच चुका था। ग्यासपुर में अत्यधिक संख्या में लोग आने लगे, अमीर हसन ने यहीं 1307 से 1322 तक ***फ़ायदुल्लफ़आद*** की रचना की थी। ख़िलजी का शहजादा ख़िज़र खान उसका मुरीद था। उन्होंने किसी मुरीद को सरकारी नौकरी नहीं करने दी। बादशाहों से दूर रहने के लिए कहा, बादशाह फिरोजशाह तुगलक उन्हें सुल्तान अल मशाइख़ (फकीरों का सुल्तान) कहा करता था।

सुल्तान अलाऊदीन ख़िलजी ने 500 मुद्राओं का दान भेजा। दूत दान लेकर पहुँचा तो खुरासानी कलंदर वहाँ मौजूद था। मुद्रायें देखते ही खुशी से बोला- वाह, इतना दान, फकीर आपस में बांट ले तो कितना अच्छा होगा निज़ामुदीन। निज़ामुदीन ने सारी मुद्रायें कलंदर की झोली में डालते हुए कहा- बांटने की क्या आवश्यकता है, एक ही के पास रहें, ज़्यादा अच्छा होगा।

अलाऊदीन ने संदेश भेजा- मैं आपके दर्शन करना चाहता हूँ। निज़ामुदीन ने कहा- बिना मिले ही मैं सुल्तान का भला सोचता हूँ। फिर भी, यदि सुल्तान का निर्णय है कि आना अवश्य है तो मेरी झोपड़ी के दो दरवाज़े हैं। सुल्तान आगे से भीतर आयेगा, मैं पीछे से बाहर चला जाऊँगा।

कुतुबदीन ख़िलजी, अलाऊदीन का तीसरा बेटा था। सुल्तान की मृत्यु के पश्चात् अपने दोनों बड़े भाइयों का कत्ल कर स्वयं सिंहासन संभाल लिया। दोनों भाई खिज़र खान तथा शादी खान क्योंकि निज़ामुदीन के मुरीद थे, इस कारण यह नया सुल्तान इस दरवेश का विरोधी हो गया। उसने हुक्म भेजा कि मास की पहली तिथि को निज़ामुदीन बादशाह के दरबार में उपस्थित हो, आज्ञा न मानने पर दण्ड दिया जायेगा। फकीर तक संदेश पहुँचाया गया तो कहा- कौन जाने, ईश्वर की क्या रज़ा है।

मास की अंतिम तिथि की रात, अर्थात् पेशी की तिथि से एक दिन पहले कुतुबदीन के गुलाम खुसरो खान ने अपने सोए हुए मालिक का सिर काट कर छत

से नीचे गिरा दिया। ***सीअरुल औलिआ*** का रचयिता इस घटना के विषय में लिखता है :

ऐ रुबाहिक चिरा ना निशशती बजाइ खेश।
बा शेर पंजा करदी ओ दीदी सज़ाइ खेश।
(ए बुज़दिल बिल्ली, अपने स्थान पर क्यों न रही?
तुमने शेर से मुकाबला किया, फिर सज़ा मिलती देखी।)

ग़िआसुदीन तुगलक निज़ामुदीन की कीर्ति से ईर्ष्या करता था। उसे लगा उसकी सरकार के कार्यों में विघ्न उत्पन्न हो रहा है। दक्षिण में बगावत को रोकने के पश्चात् वापिसी के समय संदेश भेजा- मैं दक्षिण की ओर से आ रहा हूँ। मेरे आने से पहले निज़ामुदीन दिल्ली छोड़कर चला जाये। फकीर ने संदेश सुना तो कहा- हुनूज़ दिल्ली दूर असत (अभी दिल्ली दूर है)। उसके स्वागत के लिए लकड़ी का सुन्दर दरवाज़ा बनाया गया था। आगरा से दूसरी बार संदेश भेजा- फकीर से कहो दिल्ली छोड़ कर चला जाये नहीं तो बुरा होगा। निज़ामुदीन ने वही उत्तर दिया- हुनूज़ दिल्ली दूर असत। सुल्तान बैंड बाज़ों की गूँज में दिल्ली का दरवाज़ा पार कर रहा था कि यह ढांचा गिर गया और इस मलबे के नीचे दबने के कारण सुल्तान की मृत्यु हो गई।

मौलाना ज़िआऊदीन सनामी कट्टर शरई था, चिश्तियों के समाअ (गाने-बजाने) तथा वज्द (कीर्तन करते समय मदहोश होने) का विरोधी था। उसने समाअ के विरोध में एक पुस्तक की रचना भी की जिसमें निज़ामुदीन की सख्त आलोचना की गई। निज़ामुदीन को पता चला कि मौलाना का स्वास्थ्य ठीक नहीं है। ख़बर लेने उसके निवास स्थान पर गये। मौलाना सनामी को जब यह पता चला तो उसने सेवकों को अपनी दस्तार देते हुए कहा- इसे मार्ग में बिछा दो। शेख साहिब इस दस्तार पर चलकर आयें। निज़ामुदीन ने दस्तार को इक्ट्ठा किया, फिर माथे से लगाया, फिर सिर पर रखकर कुशल आदि पूछने के लिए भीतर गये। सनामी शर्मिंदगी के कारण नज़र नहीं मिला सका। निज़ामुदीन को वापिस पहुँच कर समाचार मिला कि सनामी का देहांत हो गया। समाचार सुनकर कहा- पैगम्बर की शरा का उस जैसा मुदई अन्य कोई नहीं था। अफ़सोस वह भी नहीं रहा। मैं कुछ कहने, कुछ करने से पूर्व सोचा करता था, इस बारे में मेरा बड़ा भाई ज़िआदीन क्या कहेगा? उसके अतिरिक्त इस संसार में किसी में भी मुझे कुछ कहने का साहस नहीं है, अब मैं स्वयं को सही कैसे रख सकूँगा।

बाबा फरीद का बेटा ख़्वाजा नजीबुद्दीन आपके पास आया और कहा- उस धनी के नाम पर पत्र लिख दो कि वह मेरी आर्थिक सहायता करे। निज़ामुदीन ने

ऐसा करने से इंकार कर दिया। गुस्से में आकर ख़्वाजा ने दवात फेंक दी तथा कहा- मेरे पिता के गुलाम हो तुम, याद नहीं? मैं उनका बेटा हूँ। गुस्से से बाहर जाने लगा तो निज़ामुदीन ने कमीज़ से पकड़ते हुए कहा- आज नहीं जाने दूँगा। गुस्से में तो बिल्कुल भी नहीं, गुस्सा उतर गया तो जाने देंगे। उसे मनाकर, प्रसन्न कर ख़्वाजा को वहाँ से विदा किया।

बदायूं गाँव का एक व्यक्ति सहायता की आशा में निज़ामुदीन के पास आया। निज़ामुदीन के पास पैसे नहीं थे। उसने कहा- कुछ न कुछ तो अवश्य दे दीजिए, मैं उम्मीद लेकर आया हूँ, आपका गराईं हूँ। उसे अपने पुराने जूते दे दिए। वह जूते ले तो गया, परन्तु बहुत उदास, अच्छा मज़ाक किया मेरे साथ। रात होने पर सराय में ठहर गया। इसी रात व्यापार करके वापिस आते हुए अमीर खुसरो भी इसी सराय में ठहरा। सुबह होते ही खुसरो ने पूछा- इस सराय में मेरे मुर्शद की महक आ रही है, यहाँ अवश्य ही उनकी कोई निशानी है। जाँच करने पर पता चला कि बदायूं का कोई निवासी ठहरा हुआ है तथा वह शेख साहिब के दर्शन करके आया है। खुसरो ने पूछा- तुम्हें मालिक ने कोई तोहफ़ा दिया है? उदास शब्दों में उसने कहा- क्या मिलना था, पुराने जूते दे दिए। खुसरो ने कहा- यह मुझे दे दो। इसके बदले में मेरे सारे पैसे तुम्हारे हुए।

खुसरो जब हज़रत निज़ामुदीन के दर्शन हेतु गया तो पूछा- हमारे लिए क्या तोहफ़ा लाये हो अमीर? खुसरो ने कहा- हिन्दुस्तान के सच्चे पातशाह के लिए ये जूते लेकर आया हूँ हज़ूर। फकीर ने पूछा- कितने पैसे दिए? खुसरो ने कहा- जी, जितना धन था, सारा दे दिया। निज़ामुदीन ने हँसते हुए कहा- सस्ती मिल गई तुम्हें अच्छी वस्तु।

निज़ाम ने विवाह नहीं करवाया। दो उत्तराधिकारी नियुक्त किये, बुरहान अलदीन दक्षिण में तथा नसीर अलदीन चिरागि़ दिहली, दिल्ली में। नसीर ने खैरऊल मजालिस की रचना की। तर्क तथा रीति-रिवाज़ों दोनों का विरोधी था। वह कहता था, हज्ज करने की अपेक्षा पीर का आशीर्वाद क्यों नहीं लेते? वह त्याग से सहमत नहीं था, परन्तु स्वयं एक महान् त्यागी था।

खुसरो उस समय बंगाल में था जब पीर के निधन का समाचार मिला। काला लिबास पहन कर वहाँ से पैदल ही दिल्ली की ओर चल पड़ा। रास्ते में गुरू के नाम पर दान देता आया, लगातार यही कहता रहा- सुबहान अल्लाह, आफ़ताब दर ज़ेरि ज़मीन ओ खुसरो ज़िंदा। (धन्य है तू सत्य खुदा, सूर्य धरती में उतर चुका है और खुसरो अभी भी जीवित घूम रहा है?)

राजकवि होने के कारण खुसरो महल में रहता था। उसकी अंतिम कविता की पंक्तियाँ निम्न हैं :

पात उडंता बोलिय, सुन तरवर बनराय।
अब के बिछुड़े कब मिलें दूर परैंगे जाय।
सुन तरवर ने कहा, सुनो पात मम बात।
हमरा यही स्वभाव है, इक आवत इक जात।
गोरी सोई सेज पे मुख पर डारे केस।
चल खुसरो घर अपने सांझ पई सब देस।
(टूटे पत्ते ने कहा- हे वन के राजा वृक्ष, अब के बिछुड़े हुए कभी नहीं मिल सकेंगे, दूर जा कर गिरूँगा। पत्ते की बात सुनकर वृक्ष ने कहा- भाई हमारा यही स्वभाव है, एक आता है, इक चला जाता है। अपना मुख अपने केशों में छिपा कर गोरी पलंग पर सो गई है। खुसरो, हम भी घर चलें, देश में रात हो गई है।)

महल छोड़कर वह मुर्शद की कब्र के समीप बैठ गया, फिर कभी वापिस महल में नहीं गया। मुर्शद के देहांत के छह मास पश्चात् खुसरो ने भी शरीर त्याग दिया।

निज़ामुदीन ने एक दिन बाबा फरीद को बताया कि सुल्तान द्वारा शैख उल हिंद (भारतीय सुप्रीम कोर्ट का चीफ़ जस्टिस) की उपाधि मिल रही थी, मना कर दिया। बाबा जी ने कहा- बादशाह मिन्नतें करवाने के पश्चात् कुछ देता है, देने के बाद अहसान करता है। दाता जो रिज़क देने वाला है बिना मांगे ही देता है, देने के बाद अहसान नहीं करता। फकीर हो तो बादशाहों से दूर रहना, कहीं सुनने को मिले, कैसे आये, पीछे हटो।

गर विसालि शाह मीदारी तमाअ।
अज़ विसालि खेशतन महिजूर बाश।
(यदि बादशाह को मिलने की इच्छा करेगा, तो स्वयं को पहचान नहीं सकेगा।)

शेख साहिब कहा करते थे- कभी कभी इन सबसे बहुत थक जाता हूँ, स्वयं से भी। इस तुर्क खुसरो की हाज़री में मुझे थकान नहीं होती। खुसरो को तुर्कुल्लाह की उपाधि दी गई। तुर्क शब्द का अर्थ है महबूब, तुर्कुल्लाह का अर्थ है खुदा का महबूब।

हज़रत निज़ामुदीन अपने विद्यार्थियों में सबसे अधिक प्रेम खुसरो से करते थे। अमीर खुसरो के पूर्वज तुर्क थे जो यू.पी में रहने के लिए आ गये थे। ईटा ज़िले के गाँव पटियाली में खुसरो का जन्म हुआ। पारिवारिक नाम अबुल हसन अमीनुद्दीन रखा गया। उसे उर्दू भाषा का जन्मदाता कहा जाता है। उसने लोक-गीतों को संचित किया, पहेलियों को एकत्रित किया, सैंकड़ों गज़लों की रचना की, कव्वाली का वर्तमान अंदाज उनकी ही देन है तथा अनेक नवीन रागों की रचना भी की। कभी कभी निज़ामुदीन कह देते- खुदा के पास पहुँचने का समय आ रहा है। जब मुझसे पूछा गया कि कितनी बंदगी की, कौन से नेक काम किये, तो मैं कहूंगा- कोई नेक काम नहीं हुआ पिता, कुछ खास बंदगी नहीं कर सका। हाँ एक काम अवश्य किया है, मैं संसार को अमीर खुसरो देकर आया हूँ। खुसरो का नाम लूंगा तो खुदा मेरे गुनाह माफ़ कर देगा।

खुसरो ने अपने गुरू के बारे में लिखा, "उसके कदमों का स्पर्श प्राप्त करते ही सिर दुःखों, कष्टों, संकटों एवं चिंताओं से मुक्त हो जाता है। बिना ताज तथा सिंहासन के वह संसार पर शासन कर रहा है। बादशाह उसके चरणों की धूल प्राप्त करने के इच्छुक हैं परन्तु शेख इसकी आज्ञा नहीं देता। मुझे गर्व है कि मैं उसका गुलाम हूँ। उसका नाम निज़ाम है, इसलिए मैं निज़ामी हुआ।"

एक दिन उसने ख़ानगाह में अली बिन महमूद जांदार को बैठे हुए देखा। वह धनी एय्याश प्रवृत्ति का व्यक्ति था। खुसरो ने पूछा- अरे, दुष्ट, तुम यहाँ कैसे आये हो? तुम्हें तो शंतरज से ही फुर्सत नहीं मिली कभी? जांदार ने हँसते हुए कहा- सत्य है खुसरो। मक्के, हज्ज पर जाते समय भी मैं शंतरज खेलता रहा हूँ परन्तु जब से शेख साहिब की आशीष मिली है मैं इसकी तरफ देखता भी नहीं। यह बात भीतर जाकर खुसरो ने शेख को बताई, वह बहुत प्रसन्न हुए, अनार देकर कहा- जाओ, दोनों खाओ, अल्लाह मेहरबान है।

एक दिन कहने लगे- खुसरो, मेरी दीर्घायु के लिए अरदास किया करो, क्योंकि मेरे पश्चात् अधिक समय तुम भी जीवित नहीं रहोगे। मैं कह दिया है सेवकों को, मेरी कब्र के समीप ही तेरी कब्र बनायें। मेरी अंगुलि पकड़कर तुम खुदा के पास जाओगे।

आशीर्वाद देते हुए कहा- शताब्दियों में कभी कभी तेरे जैसा शायर और वार्ताकार जन्म लेता है खुसरो, यह कला अत्यधिक सूक्ष्म है। तू नसीर खुसरो नहीं, हमारा खुसरो है, नसीर (मददगार) तो अल्लाह है।

शेख की कब्र पर देर तक विलाप करने से नहीं रूका तो मुरीदों ने हौसला रखने के लिए कहा। रोते रोते खुसरो ने कहा- कौन किसी के लिए रोता है? स्वयं के लिए रो रहा हूँ। अब मैं भी जीवित नहीं रहूंगा। 25 सितम्बर 1325 को उसने संसार त्याग दिया।

इति